भँवरा

स्व. कुशवाहा कान्त



भँवरा



मेंहदी उस पेड़ का नाम है, जिसका सिलसिला करमपुर गाँव की छोटी-सी पहाड़ी की तराई में दूर-दूर तक फैला हुआ है। मेंहदी उस फूल का नाम है, जो कँटीली डालों पर खिलकर अपनी सुगन्ध दूर-दूर तक फैलता है। मेंहदी उस अल्हड़ युवती का नाम है, जो करमपुर के ग्वाले देवी चौधरी की एकमात्र बेटी है और जिसके रग-रग में यौवन की अनुभूति जाग उठी है ऐसी कि उसका भार सम्भालना भी उसे कठिन हो रहा है। बाँस की छोटी-सी लाठी लेकर वह पहाड़ी के किनारे-किनारे भैंस चरा रही है। ग्वालों के अन्य दो-चार लड़के तथा लड़कियाँ भी उसके साथ हैं, मगर वह उनकी उपस्थिति से तनिक भी प्रभावित न होकर, अलग ही एक चट्टान पर बैठी हुई कुछ सोच रही है। यौवन की मादक लहर ने जैसे उसे सब कुछ भूल जाने पर विवश कर दिया है। उसके बदन पर एक अच्छी-सी चुनरी है। वक्ष पर कसी हुई अँगिया है, जिसके सुदृढ़ बंधन से प्रताड़ित होकर वे उठ बैठ रहे हैं, मानो बन्धन तुड़ाकर स्वतन्त्र हो जाना चाहते हों।

हाथ-पैर में चाँदी के गहने हैं और गले में चाँदी की हँसुली पड़ी हुई है। माघ-पूस की ठण्डी हवा उसके सीने में गुदगुदी पैदा कर रही है, मगर उसकी विस्मृति इतनी तीव्र है कि वह सब कुछ भूल बैठी है। भैंसे अपने आप घूम-घूमकर चर रही हैं और मेंहदी अपने ही भावों में मस्त, एक दूसरी ही दुनियाँ में जा पहुँची है।

भँवरा! भँवरा उस जन्तु का नाम है, जो निष्कपट पुष्पों का

रस चूसकर बेदर्द बन उड़ जाता है और फिर उस रसहीन पुष्पों के पास कभी नहीं आता। भँवरा उस निर्मोही का नाम है, जिसे संसार की मोह-माया कभी बन्धन में नहीं बाँध सकी, और भंवरा उस व्यक्ति का नाम है, जिसकी याद मेंहदी के कलेजे के कोने-कोने में लहरें मारती रही है। उसका वास्तविक नाम है—कमलकिशोर नारायण सिंह। करमपुर गाँव के सम्पन्न जमींदार ठाकुर चन्द्रकिशोर नारानण सिंह का बैटा है वह। मगर मेंहदी के लिये वह भंवरा ही है। मेंहदी और कमल किशोर, दोनों बचपन के साथी हैं। साथ-साथ खेले हैं। बाल्यावस्था के उस सुनहले दिनों में दोनों के लिए ऊंच-नीच का भेदभाव एवं जाति-बन्धन नहीं था। वे दोनों निरीह शिशु थे—रूठते-खेलते थे आपस में। परन्तु आज ? आज मेंहदी जवान है और कमलकिशोर भी जवान हो चुका है।

दोनों के बीच मर्यादा का जबरदस्त बन्धन है—अब वे आपस में स्वतन्त्रतापूर्वक मिल नहीं सकते, परन्तु मिलने के लिए तड़पते जरूर हैं, क्योंकि बाल्यावस्था के उस स्निग्ध सम्पर्क ने, यौवन आ आगमन होते ही मादक प्रेम का रुप धारण कर लिया है।

मेंहदी यही सब सोच रही है। अभी कल की ही तो बात है। वह एक हरी-भरी पहाड़ी पर भैंस चरा रही थी। साथ में दो चार लड़के भी थे, जो उसकी उम्र से बहुत छोटे थे। वह उनके साथ घुलमिल, कर खेल-कूद रही थी।

उसी समय एक लड़का चिल्ला उठा—"दीदी ! दुलहिन—वह देखो दुलहिन पालकी पर चढ़कर आ रही है...."

मेंहदी ने उधर देखा। सचमुच पालकी थी, चार कहारों के कंधे पर चली आ रही थी। मेंहदी जवान हो चुकी थी, परन्तु ग्रामीण वातावरण ने उसकी चंचलता अक्षुण्ण रखी थी।

बोली वह—"तू दुलहिन देखेगा क्या नन्दू ?...अच्छा आ मेरे साथ ?...तुम सब आओ ?"

आगे-आगे मेंहदी और पीछे-पीछे सब लड़के उस ओर दौड़े।

पालकी टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डी से चली आ रही थी।

मेंहदी चिल्लाई—"ओ पालकी वाले ! जरा हमें दुलहिन दिखा

दो, तब आगे बढ़ो ..." कहारों ने पालकी जमीन पर उतार दी और उसके भीतर से एक सुन्दर युवक निकलकर बाहर आ खड़ा हुआ। उसकी अवस्था २०-२२ वर्ष के लगभग थी। मुखाकृति अत्यन्त आकर्षक थी।

उस युवक पर दृष्टि पड़ते ही, मेंहदी घबड़ाकर पीछे भाग चली।

युवक ने पुकारा—"मेंहदी !...ओ मेंहदी ! इधर आ !"

पुकार सुनकर मेंहदी रुक गयी। सर नीचा किये हुए वह युवक के सामने आकर खड़ी हो गई।

युवक कमलकिशोर था—बड़े ठाकुर का बेटा।

"कहाँ भागी जा रही थी ?" युवक ने हँसकर पूछा।

"अपनी भैंसों के पास !...." मेंहदी ने उत्तर दिया—"दुलहिन तो कहीं नजर नहीं आती...." मेंहदी ने कहा—"अलबत्ता तुम निकल आये उसमें से तो मैं क्या करूँ ?"

मेंहदी होठों में ही मुस्करा रही थी और कमल उसका सौंदर्य निरख रहा था। आज बहुत दिनों के बाद दोनों ने एक दूसरे को देखा। "दुलहिन न सही, दुल्हा ही देखती जा मेंहदी ?" कमल ने हँसकर कहा। "चलो, बड़े वैसे हो तुम !" मेंहदी ने आँखों में कटाक्ष भर कर कहा—"इतने बड़े हो गये, समय-कुसमय का ध्यान नहीं रखते...."

"तो क्या बुरा कह दिया मैंने ?" कमल ने कहा।

"बुरा नहीं तो क्या अच्छा कहा है तुमने ?" बोली मेंहदी—"कहाँ से आ रहे हो बन-ठन कर ?...."

"शहर से आ रहा हूँ !" कमल ने कहा।

"क्या करने गये थे ?"

"दुलहिन लाने !" कहकर हँस पड़ा कमल।

"तो ले आये दुलहिन ?" मादक स्वर में पूछा मेंहदी ने।

"कोई मिली ही नहीं, लाता किसे ?"

"सुनती हूँ, शहर में बहुत-सी कसबिनियाँ रहती है—पकड़ लाये होते किसी एक को..."

"चल हट !...." मधुर झिड़की दी कमल ने—"इतनी बड़ी हो

गई, मगर जबान अभी तक कैंची की तरह चला करती है....''

"तुम्हारी ही जबान बड़ी रुक कर चलती है न! बड़े आये हैं शहर से दुलहिन लाने वाले! ..."

कहकर मेंहदी भाग गई और कमल भी पालकी पर चढ़कर चला गया।

कल की यह घटना मेंहदी की आँखों में आज भी ताजी है।

यही सब सोचती हुई बैठी है वह गुमसुम होकर।

"दीदी! ..."

"क्या है रे नन्दू?" पूछा मेंहदी ने।

"छोटे राजा आ रहे हैं, दीदी!...." बालक ने कहा—"पैदल ही आ रहे हैं, देखो न दीदी वो...."

चौंककर मेंहदी ने सर घुमाया तो देखा कमलकिशोर पहाड़ी की तराई में से आ रहा है। वह उसी की ओर आ रहा था।

मेंहदी चट्टान पर बैठी रही। बालक पुनः खेलने चला गया। कमल मेंहदी के सामने आकर खड़ा हो गया। मेंहदी जान-बूझकर नीचे की ओर देख रही थी "आज तो मेंहदी बहुत महक रही है--" कमल मेंहदी के बगल में बैठता हुआ बोला। "इसीलिये भँवरा भी गूँज उठा है...." मेंहदी थोड़ा सरक कर बैठ गई। "मगर मेंहदी भँवरे की लोलुपता को जानती है, छोटे राजा!..." धीरे से कहा मेंहदी ने।

"भँवरे में लोलुपता है, मेंहदी?"

"यही न कि वह फूलों का रस चूसकर उड़ जाता है...." कहकर मुस्करा पड़ी वह। "नहीं?" कमल ने कहा—"फूलों के रस से वह अपना जीवन सरस बनाता है....तभी तो बार-बार उससे आ लिपटता है।"

"ऐसी बात कहकर दिल में तड़पन मत पैदा करो, राजा!...." मेंहदी ने कहा—"हम अभी इस नश्वर संसार में हैं और हमारे चारों ओर दुर्भावनाओं का सागर लहरें मारता रहता है...."

"मेंहदी!" आगे खिसक कर कमल ने मेंहदी का हाथ पकड़ लिया। "मेरा दिल तुम्हें हमेशा देखता रहना चाहता है, मेंहदी!....

परन्तु जहरीले वातावरण के डर से, दिल के अरमान दिल में ही रह जाते हैं..."

"क्या बचपन के सुनहले दिन फिर नहीं लौटेंगे, छोटे राजा ?" मेंहदी का स्वर करुण हो उठा था।

"लौटेंगे मेंहदी !...." बोला कमल—"मगर मौत के बाद, इस जीवन में शायद वे दिन फिर देखने को न मिलें...."

"जब चारों ओर निराशा-ही-निराशा है, तो तुम इस तरह बार-बार मेरे सामने क्यों आते हो, छोटे राजा ?...." मेंहदी ने कहा—क्यों मेरे हृदय में अपनी मधुर बातों से तूफान की सृष्टि करते हो ? "क्यों मेरे मासूम कलेजे में गुदगुदी भर देते हो ?"

"दिल नहीं मानता मेंहदी ?" बोला कमल।

"अपने दिल को समझाओ, छोटे राजा !" मेंहदी ने कहा—"आगे बढ़ने से सम्भव है, हम सामाजिक परम्परा को न तोड़ बैठें अच्छा हो कि हम लोग अपने हृदय को बेकाबू न होने दें। अब एक दूसरे को भूल जाना ही हमारे लिए उत्तम है..."

"मगर यह नहीं हो सकता...." कमल ने कहा—"यह बन्धन अब बहुत दृढ़ हो चुका है। बचपन में ही अगर टूट जाता तो अच्छा था।"

अभी भी टूट सकता है...." मेंहदी बोली—"आँखों की डोर से ही यह बन्धन बँधा है, छोटे राजा ! आँखों को देखने का मौका मत दो तो यह बन्धन भी धीरे-धीरे टूट जायगा..."

"आँखों की डोर अगर काट दी जाय तो दिल की डोर कैसे कटेगी, मेंहदी !"

"तुम जमींदार के बेटे हो....तुम्हारे माँ-बाप के पास धन है, इज्जत है....मेरे साथ रहने से तुम उनकी इज्जत में कलंक लगा दोगे, छोटे राजा !...आज की दुनिया सिर्फ इज्जत देखती है, दिल की परवाह शायद उसे नहीं है..."

"तुम कहो तो मैं तुम्हारे लिए सब पर लात मार सकता हूँ, मेंहदी !" कमल ने कहा।

"ऐसा मैं कैसे कह सकती हूँ, छोटे राजा !...." मेंहदी बोली—

"तुम्हारे सामने दुनियाँ का ऐश्वर्य लोट रहा है। अपने स्वार्थ के लिए तुम्हें उससे वंचित कैसे कर सकती हूँ? स्वार्थपरता स्त्री के लिए कलंक है और त्याग स्त्री का आभूषण है। तुम्हारे सुख के लिए अपने जीवन को उत्सर्ग कर देने की भावना है मुझमें। सच्चे प्रेम में उत्सर्ग की ही भावना प्रबल होती है, छोटे राजा !"

"ऐसा न कहो, मेंहदी !....भगवान के लिये ऐसा न कहो...." कमल ने कहा "स्त्रियाँ यदि उत्सर्ग कर सकती हैं तो पुरुष भी कर सकते हैं...."

"पुरुष ?..." धीरे से हँस पड़ी मेंहदी—"पुरुष तो भँवरे हैं, छोटे राजा !....आज इस कली पर तो कल दूसरी पर, परसों तीसरी पर ! स्त्रियों के हृदय में यदि निर्मल प्रेम की धारा है तो पुरुषों के हृदय में वासना का सागर। वासना का सागर निर्मल प्रेम की निर्मल धारा को नष्ट कर, उस पर अपनी कलुषता का आवरण चढ़ा देता है। इसी कारण स्त्री पुरुषों से श्रेष्ठ होते हुए भी, पुरुषों की दासी कही जाती है...."

"आज तो तुम बहुत गम्भीर हो उठी हो, मेंहदी !...." कमल ने कहा—"जरा हँसकर तो बातें करो, रहने दो ज्ञान की बातें।"

"अच्छा लो !...." हँसकर बोली मेंहदी—"पर जरा दूर ही बैठो। इतने पास चले आए हो कि दूर से देखने वाले दूध-पानी के एक होने का शक कर बैठेंगे...."

"क्या कर लेंगे शक करके वे ?"

"समझ से काम लो छोटे राजा !...." मेंहदी ने कहा—"कहीं बड़े राजा हमारी बातें सुन लें तो तुम्हें कालेपानी की सजा दे देंगे और मुझे फाँसी की।"

"दोनों को कालेपानी की सजा दें दें तो अच्छा है...." कमल बोला—"कम से कम दोनों का साथ तो रहेगा। नरक में भी हम एक दूसरे के साथ प्रसन्न रहेंगे, क्यों मेंहदी ?"

"फिर तुम वही बहकी बातें करने लगे, छोटे राजा !" तुनक कर बोली मेंहदी।

"अच्छा लो ! यह बताओ, तुम इधर दुबली क्यों हो गई हो ?"

कमल ने कहा ।

"और तुम बहुत मोटे हो गये हो न !...." हँसकर कहा मेंहदी ने—"सम्हल कर बैठो जरा ! कहीं यह चट्टान पाताल लोक की सैर न करने लगे...."

"अच्छा तो तुम जरा इस चट्टान से उतर जाओ !"

"क्यों ?...." पूछा मेंहदी ने ।

"ताकि इसके पाताल-लोक जाने का अन्देशा न रह जाय !...." कमल बोला । दोनों हँस पड़े । उस हँसी से तराई गूँज उठी । "अब तुम जाओ, छोटे राजा ! तुम्हें खोजने के लिए बड़े राजा ने लठैत जरूर भेजे होंगें । अरे ! उधर देखो....वह आ रहा है !"

कमल उठ खड़ा हुआ । मेंहदी की ओर विवश नेत्रों से देखकर वह अपनी हवेली की ओर चल पड़ा । मेंहदी ने एक दुःखपूर्ण ठण्डी साँस ली ।

२

करमपुर गाँव के उत्तरी छोर पर बड़े राजा चन्द्रकिशोर नारायण सिंह की हवेली ऐसे खड़ी थी, जैसे भारत के उत्तर में हिमालय । बहुत लम्बी-चौड़ी हवेली थी । चारों ओर चहारदीवारी थी और बड़े फाटक पर दो लठैतों का पहरा रहा करता था । चहारदीवारी के भीतर गुलाब और मस्त हिना के पेड़ थे । एक पक्का कुआँ भी था । दाहिनी ओर घुड़साल थी, जिसमें चार तन्दुरुस्त घोड़े बँधे थे । उसके बगल में एक छप्पर के नीचे दस-बारह लम्बे-तगड़े बैल, चार गायें और दस भैंसे खड़ीं थीं । ठीक सामने ही ईंटों का एक बड़ा-सा कमरा था । यह बड़े राजा की चौपाल थी । गाँव के लोग यहीं इकट्ठा होकर बड़े राजा से अपनी फरियाद किया करते थे । चौपाल के पीछे सुन्दर हवेली थी, जो बड़े राजा का निवास-स्थान था । यद्यपि यहाँ आधुनिक साज-सजावट न थी, फिर भी ग्रामीणों के लिए यह स्थान अगम वैभव का केन्द्र था । वे हसरतभरी निगाह से उनकी ओर देखा करते थे ।

जमींदारों का अत्याचार एक प्रसिद्ध बात है, परन्तु बड़े राजा बिल्कुल अत्याचारी न थे, वरन् अत्यन्त दयालु एवं प्रजापरायण थे। उन्होंने कभी किसी गरीब को शिकायत करने का मौका नहीं दिया था।

दिन के दस बज चुके थे। ठाकुर के चौपाल के सामने बहुत से ग्रामीण अपनी प्रार्थनाएं लेकर उपस्थित थे। परन्तु अभी तक बड़े राजा आये न थे। सब उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। एका-एक चौपाल का भीतरी दरवाजा खुला और ठाकुर ने चौपाल में प्रवेश किया। सब आदर के साथ उठ खड़े हुए। बड़े राजा अपनी गद्दी पर जा बैठे, जहाँ उनका कारिन्दा कागज-पत्र लेकर पहले से बैठा था।

बड़े राजा की अवस्था पचास के लगभग थी, परन्तु शरीराङ्ग अभी तक सुदृढ़ थे। बदन पर एक रुईदार निमस्तीन थी और कमर में मोटे कपड़ों की एक धोती। बड़े सरल प्रतीत हो रहे थे, बड़े ठाकुर।

ठाकुर ने उड़ती दृष्टि से ग्रामीणों को देखा, फिर बोले—"आज बहुत भीड़ है यहाँ! क्या तुम लोगों को कोई तकलीफ है, देवी चौधरी?" देवी चौधरी मेंहदी का बाप था। बोला—"भला राजा की छत्रछाया में हमें कौन-सी तकलीफ हो सकती है?....हम खूब चैन से हैं, ठाकुर! आज बसंत पंचमी है। सोचा त्योहार के दिन सरकार के दर्शन कर लें तो साल अच्छी तरह बीत जायेगा।"

"बड़ा अच्छा किया तुम लोगों ने..." ठाकुर बोले—"और तुम कल्लन मियाँ? कैसे बैठे हो चुपचाप? बड़े गम्भीर लग रहे हो आज?"

ठाकुर की जमींदारी में मुसलमानों की भी बस्ती थी। बुजुर्ग कल्लन मियाँ उनके चौधरी थे। जमींदारी में हिन्दू और मुसलमान भाई-भाई की तरह रहते थे। एक दूसरे के त्योहार में दिल खोलकर शरीक होते थे। आधुनिक धार्मिक कट्टरता एवं वैमनस्यता जैसे वहाँ थी ही नहीं। बड़े ठाकुर की दृष्टि में हिन्दू और मुसलमान, दोनों उनकी प्रजा थे।

"आज त्योहार के दिन मैं भीख माँगने आया हूँ, बड़े राजा!"

कल्लन मियाँ बोले।

"भीख ?...." धीरे से हंस पड़े ठाकुर—"मैं गरीब आदमी खुदा के बन्दों को क्या भीख दे सकता हूँ, कल्लन मियाँ ?"

"हजूर हमारे राजा हैं...." कल्लन मियाँ कहने लगे—"हमारे सर पर आपका साया है, हम आपके दरवाजे पर आकर भीख न माँगेंगे तो क्या माँगेगें ? आप ही तो हमारे खुदा हैं...."

"बहुत बड़ी पदवी दे रहे हो मुझे, मौलाना !..."

"यह पदवी तो बहुत छोटी है, बड़े सरकार ! आपकी रहमदिली के सामने सभी फीकी पड़ जाती है...." कल्लन मियाँ बोले—"पिछली दफा हजूर के सामने हमने जरा-सी जबान हिलाई और आपने हमारी इबादत के लिए मस्जिद बनाने के लिए एक बीघा जमीन दान कर दी...."

"तो इसमें हमारी रहमदिली क्या है, मियाँ ?..." बड़े राजा हंसकर बोले—"अरे ? जैसे तुम्हारे खुदा, वैसे हमारे। इबादत और पूजा, खुदा और ईश्वर, धर्म और मजहब इन सब के अक्षरों में फर्क हो सकता है, मगर मतलब तो एक ही है। क्या इन्सान-इन्सान में फर्क होता है, कल्लन मियाँ ?..."

"नहीं हजूर, नहीं ! आपकी नजरों में खुदाये पाक का नूर है। आपके सामने हिन्दू-मुसलमान, खुदा-ईश्वर सब एक हैं, बड़े ठाकुर !"

"अच्छा, अब तारीफ बहुत कर चुके, जल्दी से अपने आने का मकसद कह जाओ ?" बड़े ठाकुर ने कहा।

"हमारी मस्जिद बननी शुरू हो गई है, बड़े सरकार !...." कल्लन मियाँ कहने लगे—"मगर हमें रुपयों की तंगिश है। हम सरकार से कुछ रुपया चाहते हैं...."

"यह कौन-सी बड़ी बात है...." ठाकुर बोले—"मुनीमजी !" ठाकुर ने मुनीम को पुकारा। कारिन्दा को वे मुनीम ही कहा करते थे।

"आज्ञा सरकार !...." कारिन्दा ने कहा।

"देखो !...." ठाकुर बोले—"जब तक मस्जिद बनकर तैयार न हो जाय, तुम खुद वहाँ की देख-रेख करना और जितना रुपया

लगे, सब लगाना...."

"बहुत अच्छा, सरकार !"

"इतना न दबाओ, बड़े राजा !..." कल्लन मियाँ हर्ष-गद्‌गद् वाणी में बोले—"इतना बोझ हमारे नाजुक कन्धे नहीं सम्हाल सकेंगे...."

"गाँव हमारा है कल्लन मियाँ !...." ठाकुर बोले—"मैं इसमें मन्दिर भी बनवा सकता हूँ और मस्जिद भी। फिर तुम्हारे कन्धों पर कैसे बोझ पड़ेगा ? यह बोझ तो हमारा है...."

"हजूर का दिल दरिया है। खुदा करे, हर इन्सान को ऐसा मालिक मिले।"

"और कोई काम है, मौलाना ?"—पूछा ठाकुर ने।

"एक बात और अर्ज करनी थी, सरकार !...."

"कहो ! बेखटके कहो..." ठाकुर बोले।

"बात यह है बड़े राजा !..." कल्लन मियाँ ने कहा—"हमारी मस्जिद, गाँव के मन्दिर के बगल में ही बन रही है। ऐसी हालत में हमारी अजान के वक्त, हिन्दुओं की पूजा में खलल पड़ जाती है, सरकार !..."

"यह क्यों नहीं कहते कि मन्दिर के घण्टों से तुम्हारी इबादत में खलल पड़ेगा ?..." ठाकुर बोले—"कल्लन मियाँ ! मन्दिर और मस्जिद का यह झगड़ा शहरों तक ही सीमित रहना चाहिये। हमारे गाँव में कभी यह न होगा। यहाँ के हिन्दू, मुसलमान भाइयों की इबादत में मदद देंगे और मुसलमान हिन्दुओं की पूजा में।"

"आप ठीक कहते हैं, सरकार !..."

"मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, कल्लन मियाँ ! कि तुम्हारे अजान के समय हमारे मन्दिर के घण्टे खामोश रहेंगे। पहले तुम खुदा की इबादत करोगे और बाद को हम करेंगे ईश्वर की पूजा।"

"शुक्र है बड़े राजा, लाख-लाख की उम्र हो आपकी !" कल्लन मियाँ ने कहा।

सब लोग उठ खड़े हुए। बड़े राजा को अभिवादन कर बाहर चले गये। सबके चले जाने पर कारिन्दा ने अपना सर उठाया।

बोला—"बड़े राजा ! ..."

"कहो ? क्या कहना चाहते हो ?..."

"मस्जिद बनवाने का भार अपने ऊपर लेना ठीक नहीं..." कारिन्दा बोला—"कुछ दिनों में यही मस्जिद गोकुशी का केन्द्र बन जायेगी ..."

"चुप रहो मुनीमजी ! ..." उत्तेजित स्वर में बोले ठाकुर—"जानता हूँ कि तुम अभी हाल में शहर से आये हो और अपने दिल में शहर की नापाक गन्दगी भर लाये हो। ऐसा न हो कि मुझे तुमको नौकरी से अलग कर देना पड़े..."

"मुझे क्षमा करें, बड़े राजा !"

"तुम शहरी लोग गाँव का अदब-कायदा क्या जानो ?...." बड़े ठाकुर कहने लगे—"यहाँ के लोगों के शरीर दो हैं मगर दिल एक, शहरी लोगों के शरीर दो हैं, मगर दिल हजार। तुम अभी नये हो, यहाँ का तौर तरीका सीखो। तुम्हारी जबान की फिसलन मुझे मंजूर नहीं..."

"मेरे हृदय में कुछ शंकायें हैं, बड़े राजा !..." कारिन्दा बोला—"जिन्हें सिर्फ आप ही दूर कर सकते हैं। आज्ञा हो तो आपसे कुछ बातें पूछूँ ?"

"पूछ सकते हो...." कहा ठाकुर ने।

"क्या हिन्दू-मुसलमानों में कभी मेल हो सकता है ?"

"शहरों में चाहे न हो, मगर गाँव में दोनों हमेशा भाई-भाई की तरह रहते आये हैं ..." ठाकुर कहने लगे—"अगर कोई मुसलमान मरता है, तो हिन्दू उसकी कब्र पर फूल चढ़ाने से नहीं चूकता। यहाँ के निवासी एक दूसरों के त्योहार में, शादी-विवाह में बराबर भाग लिया करते हैं। यह गाँव की मिट्टी है, मुनीमजी ! जिसने हिन्दू-मुसलमान सब के बदन संवारे हैं। गाँव की ताजी हवा, दोनों की साँसों में चलती है। गाँव की हरियाली से दोनों की आँखों में हरियाली रहती है। शहर की नालियाँ यहाँ नहीं है, जो स्वच्छ वातावरण में गन्दगी फैला सकें।"

"ठीक कहते हैं आप बड़े राजा !..." कारिन्दा बोला—"मगर

एक होते हुए भी, फिर दोनों के रीति-रिवाज भिन्न क्यों है ?"

"यह तो अपनी-अपनी सामाजिक विचारधारा है मुनीमजी। इससे हमारी एकता में कुछ भी अन्तर नहीं पड़ता...." बड़े ठाकुर ने कहा—"तुम्हारे कहने का तो यह मतलब हुआ कि अगर कोई आदमी हलुआ खाता हो तो उससे पूछा जाय कि तुमने चने क्यों नहीं खाये ?.... यह कोई बात है ? हर इन्सान अपनी इच्छा के अनुसार अपने रास्ते पर चलने को स्वतन्त्र है और यही स्वतन्त्रता मानव के लिए ईश्वर का बरदान है...."

"परन्तु इतिहास साक्षी है बड़े ठाकुर ! कि हिन्दू-मुसलमान हमेशा आपस में लड़ते रहे हैं...." कारिन्दा बोला—"मुगल सम्राट औरंगजेब ने हथियार के बल पर अपने धर्म का प्रचार किया और हमारे अगणित हिन्दू-भाइयों को जबरदस्ती मुसलमान बनाया था।"

"इतिहास की बात मैं नहीं जानता, मुनीमजी ! तुम पढ़े-लिखे हो, यह तुम्ही जान सकते हो...." ठाकुर ने कहा—"अगर यह ठीक भी हो कि औरंगजेब ने हिन्दुओं को मुसलमान बनाया तो क्या यह उचित है कि हम अपने भाइयों को अपने से अलग मान लें। हिन्दू-धर्म दया-धर्म की ही भित्ति पर निर्मित है, मुनीमजी ! हमारा धर्म अभी यह नहीं चाहता कि हमारे अंग में कोढ़ हो जाय तो हम उसे अपने शरीर से काटकर अलग कर दें—संसार का कोई भी धर्म आपसी वैमनस्य को प्रोत्साहन नहीं देता। यह तो हमारे तुम्हारे दिमाग का दिवालियापन है...."

"अब मेरी शंका दूर हो गई, बड़े राजा !..." कारिन्दा बोला—"गाँव की पवित्र भूमि में आकर मेरी कलुषता दूर भाग गई। धन्य हैं आप और आप की यह पावन भूमि !"

उसी समय एक लठैत अन्दर आया। "क्या है जतन ?....," ठाकुर ने पूछा—"छोटे राजा मिले या नहीं !"

"मिल गये, बड़े सरकार।" लठैत ने कहा।

"कहाँ है ?" ठाकुर ने कहा।

"ठाकुराइन-माँ के पास ...." लठैत बोला।

"कहाँ था वह इतनी देर तक ?..." पूछा ठाकुर ने। उनका

सरल मुख कुछ कठोर हो गया था।

"तराई में देवी चौधरी की बेटी से बातें कर रहे थे...." लठैत ने आँखों-देखी सच बात बता दी।

"देवी चौधरी की बेटी !....मेंहदी तो नहीं ?"

"जी हाँ बड़े राजा !...."

ठाकुर का मुख एकाएक गम्भीर हो उठा। मेंहदी और छोटे ठाकुर का सम्पर्क उन्हें मालूम था और वे यह भी जानते थे कि उनकी यह घनिष्ठता आगे चलकर उनके लिए हितकर न होगी। यही था उनकी गम्भीरता का कारण। भला एक ठाकुर का बेटा एक ग्वाले की बेटी से सम्पर्क रखे ?....दुनियाँ सुनेगी तो क्या कहेगी ?

"तुम छोटे ठाकुर को अभी बुलाओ !"—ठाकुर ने लठैत को आज्ञा दी। लठैत चला गया। ठाकुर गम्भीर मुद्रा में बैठे रहे।

एकाएक बोले—"देखते हो मुनीमजी ! यह लड़का पढ़-लिखकर पूरा पागल बन चुका है। यह बात जब गाँव वाले सुनेंगे तो हमारी इज्जत पर कीचड़ उछालेंगे या नहीं, बताओ तो ?...."

"जरूर उछालेंगे, बड़े राजा !...." कारिन्दा बोला,—"मगर अब तो संसार में परिवर्तन हो रहे हैं। दुनियाँ एक दूसरे ही रास्ते पर जा रही है। अब तो छोटे-बड़े का सवाल ही नहीं उठता।...."

"जब तक समाज का बन्धन कायम है..." ठाकुर कहने लगे—"तबतक ऊँच-नीच का सवाल रहेगा ही, मुनीमजी ! परिवर्तन धीरे-धीरे होगा। समाज की व्यवस्था में क्रान्तियाँ हुई हैं, मगर आहिस्ता-आहिस्ता ! हम समाज के बन्धन में जकड़े हुए असहाय व्यक्ति हैं। उस बन्धन को एकाएक तोड़ डालना हमारी उच्छृङ्खलता का द्योतक होगा...."

"प्रेम का स्तर सामाजिक बंधन के बांधे नहीं बंध सकता, बड़े राजा !"

"तुम इसे प्रेम कहते हो, मुनीमजी ?...." ठाकुर पूर्ववत गम्भीर स्वर में बोले—"यह प्रेम नहीं, यौवनजतिन वासना है। यौवन और वासना बहुत पुराने प्रेमी हैं, मुनीमजी ! हर युवक और युवती

पर इसका प्रभाव होता है। कोई भी इनसे बचकर नहीं रह पाता....
हम जैसे बूढ़ों की बात दूसरी है !....हमारे शिथिल शरीर में वासना का उद्वेग नहीं हो सकता, क्योंकि जमाना देखी हुई आँखें ठीक रास्ते पर ले चलती है। अगर आज के अन्धे युवक अपने बड़ों की आँखों से देखकर चलें, तो विनाश के गर्त में गिरने से बच सकते हैं..."
कारिन्दा ने इस बार भी अपनी हार मान ली।

बोला—"आप ठीक कहते हैं, बड़े राजा !...."

उसी समय छोटे ठाकुर ने वहाँ प्रवेश किया। "कमल !"—ठाकुर ने पुकारा।
छोटे ठाकुर ने अपना सर ऊपर उठाया। बोला—"आज्ञा पिताजी !...."

"कहाँ थे अब तक तुम ?" ठाकुर ने पूछा।

"तराई में टहल रहा था, पिताजी !"—कमल ने कहा।

"तराई में टहल रहे थे या मेंहदी की सुगन्ध ले रहे थे ?"—गम्भीर स्वर था बड़े ठाकुर का।

कमल उनका कटाक्ष समझ गया। कुछ बोला नहीं। चुप ही रहा।

"छोटे राजा ...." ठाकुर बोले—"हमारी जमींदारी का हर इन्सान स्वतन्त्र है, मगर मैं यह सहन नहीं कर सकता कि कोई व्यक्ति मेरी दी हुई स्वतन्त्रता का अनुचित उपयोग करे। स्वतन्त्रता अनुभवी के लिए वरदान है और नादान के लिए अभिशाप !"

"मैंने क्या अपराध किया है, पिताजी ?"—कमल बोला।

"जानते हुए अनजान न बनो, छोटे ठाकुर !...." बोले बड़े ठाकुर—"तुम जिस रास्ते पर जा रहे हो वह काँटों से युक्त है, फिर भी तुम आँखें मूंदकर उसी रास्ते पर बढ़े जा रहे हो...."

"...." मौन होकर सुन रहा था कमल।

"हमारे पूर्व पुरुषों को सामाजिक बन्धनों की सृष्टि क्यों करनी पड़ी, जानते हो ?...." ठाकुर बोले—"इसलिए कि तुम जैसे नवयुवक उच्छृङ्खलता के वेग में कहीं से कहीं न बह जाओ। तुम मेरी ओर से स्वतन्त्र होते हुए भी समाज की ओर से स्वतन्त्र नहीं हो। यह मत

भूलो कि समाज की तेज-तर्रार आँखें हर समय तुम्हारा पीछा करती रहती हैं। तुम्हारे किसी अनुचित कार्य से, ठाकुर-घराने की इज्जत क्षणभर में नष्ट हो सकती है....''

''....''

सब कुछ समझते हुए भी चुप रहा कमल।

''जवाब दो, छोटे राजा !....'' उत्तेजित स्वर में बोले ठाकुर—''मैं अपनी बातों का उत्तर चाहता हूँ। मैं तुमसे कई बार पहले भी कह चुका हूँ कि मेंहदी से ज्यादा मेल-जोल बढ़ाना तुम्हें पसन्द हो सकता है, मगर मुझे नहीं—समाज को नहीं....फिर मेरी आज्ञा का उल्लंघन क्यों ? क्या तुम्हें डर नहीं ?''

''मुझमें इतनी शक्ति कहाँ कि मैं आपकी आज्ञा का तिरस्कार करूँ, पिताजी !'' धीरे से कहा कमल ने।

''फिर तुम किस प्रेरणा से ऐसा करते हो ?''

''हृदय की प्रेरणा से। अपने हृदय से विवश हूँ मैं, पिताजी !''

''छोटे ठाकुर !....'' एकाएक गरज पड़े बड़े राजा—''मेरे सामने निर्लज्ज न बनो। अगर तुम्हारा हृदय वश में नहीं है तो उसे कुचल डालो, मगर समाज के समक्ष मुझे सिर नीचा करने का मौका मत दो....समझे !''

''जी, पिताजी !''

''आज से तुम मेंहदी की छाया भी नहीं देख सकोगे...'' बोले ठाकुर—''अगर तुमने ऐसा न किया तो मैं तुम्हारी सारी स्वतन्त्रता छीन कर तुम्हें पक्षी की तरह पिंजड़े में बन्द कर पंगु बना दूंगा....जा सकते हो अब तुम !''

करुण भंगिमा धारण किए हुए चला गया कमल, अपनी माँ के पास।

ठाकुर की इस आज्ञा ने उसके हृदय के सैकड़ों टुकड़े कर दिये थे। यह आघात उसके लिए मृत्यु समान कष्टकर था।

कमल चला गया तो ठाकुर ने पुकारा—''राम जतन !''

लठैत तुरन्त हाजिर हुआ।

"देवी चौधरी को बुलाओ !...." लठैत चला गया ।

दस मिनट बाद देवी चौधरी उपस्थित हुआ, तो ठाकुर की आवेश-पूर्ण गम्भीर मुखाकृति देखकर शंकित हो उठा ।

"जुहार बड़े राजा !...." उसने अभिवादन किया ।

"जुहार चौधरी !..." ठाकुर बोले-"आओ बैठो ।"

"मुझे क्यों बुलाया, बड़े सरकार ?" पूछा चौधरी ने ।

"कुछ नहीं चौधरी ?...." जरा-सा मुस्कराकर बोले बड़े राजा-"यों ही जरा-सा काम था। तुम्हारी बेटी मेंहदी अच्छी तरह है ?"

"आप की दया पर जी रही है, ठाकुर !"

"उसकी शादी पक्की की तुमने ?" ठाकुर ने पूछा ।

"अभी नहीं सरकार !"

"क्यों !.. लड़की तो काफी सयानी हो चुकी है ।"

"कहीं जुगाड़ लगते ही शादी कर दूंगा, बड़े राजा ! हमारी जात में बड़ा वर मुश्किल से मिलता है....?" चौधरी बोला ।

"तो तुमने पहले ही क्यों नहीं उपाय किया ?"

"यही तो गलती हुई, ठाकुर । पछता रहा हूँ अब ।"

"देखो चौधरी...." बोले ठाकुर—"लड़की जवान हो गई है । जल्दी-से-जल्दी उसके हाथ पीले कर दो, समझे !...अगर तुम्हें खर्च की चिन्ता हो तो चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं । वर तुम खोज डालो और शादी मैं अपने खर्च से करा दूंगा । वह जैसे तुम्हारी बेटी, वैसे ही मेरी बेटी है...."

"आप ही का तो भरोसा है, बड़े राजा !"

"इस काम में जरा भी देर मत करो !" ठाकुर ने कहा ।

"बहुत अच्छा सरकार !"— चौधरी बोला ।

"और देखो, आज से मेंहदी को घर में रखा करो...." ठाकुर ने कहा—"भैंसे चराने के लिए कोई आदमी रख लो । सयानी लड़की का बाहर निकलना ठीक नहीं..."

"जो हुकुम सरकार...." बोला चौधरी—"क्या बड़े राजा ने मेंहदी की कोई शिकायत सुनी है ?"

"नहीं चौधरी, नहीं !..." ठाकुर ने कहा—"शिकायत की कोई बात नहीं है। फिर भी अगर तुम मेंहदी को कुछ दिनों के लिए उसके ननिहाल भेज दो तो निश्चिन्त होकर वर ढूंढ़ सकते हो...."

"बहुत अच्छा, बड़े ठाकुर !...." कहकर चौधरी उठ खड़ा हुआ और ठाकुर को जुहार करके बाहर चला गया।

उन्होंने संतोष की साँस ली।

३

बड़े ठाकुर पलंग पर बैठे थे और ठकुराइन नीलमुखी उनके सामने खड़ी थीं।

यद्यपि ठकुराइन की अवस्था पैंतीस के लगभग थी, तथापि मुखाकृति पर अब भी सौन्दर्य का तेज विद्यमान था।

इस समय उनकी भृकुटि पर बल और आँखों में रोष था।

"मुझे क्यों बुलाया, ठकुराइन ?...." ठाकुर ने पूछा। उनके मुख पर पहले जैसी सरलता थी।

"एक बात पूछनी थी, बड़े ठाकुर !" ठकुराइन ने कहा।

"पूछो !...." ठाकुर बोले—"आज तुम बहुत उत्तेजित दिखाई पड़ रही हो, कारण क्या है ?"

"ठाकुर !..." ठकुराइन ने कहा—"क्या आज तुमने कमल को कुछ कहा-सुना है ?"

"हाँ...." छोटा-सा उत्तर दिया ठाकुर ने !

"क्यों ?....तुमने उसे क्यों डाँटा ?...उसका क्या अपराध था ?"

"वह दिन-पर-दिन उच्छृङ्खल होता जा रहा है, ठकुराइन !" ठाकुर बोले।

"तुमने मुझसे क्यों नहीं कहा ?..." ठकुराइन का स्वर रूक्ष था।

"तुमसे कहना क्या जरूरी था, ठकुराइन ?...." ठाकुर बोले—"ईश्वर जानता है कि मेरे हृदय में तुम्हारे लिए कितना आदर-

सम्मान है ! मैं तुम्हें अपनी अमूल्य निधि समझकर स्नेह और श्रद्धा की दृष्टि से देखता आया हूँ....क्या मुझे इतना भी अधिकार तुम देना नहीं चाहती ?"

"सीमा में रहकर बोलो, ठाकुर...." ठकुराइन ने कहा—"अगर लोग सुनेंगे कि तुम मुझे स्नेह और श्रद्धा की दृष्टि से देखते हो तो वे क्या कहेंगे ?"

"यही कहेंगे कि ठाकुर चन्द्रकिशोर नारायण, ठकुराइन के गुलाम है..."ठाकुर बोले—"लोग तो अभी तक यही समझते हैं, ठकुराइन ! कि तुम मेरी पत्नी हो और कमल मेरा पुत्र !"

"लोगों को समझने दो ठाकुर ! मगर तुम अच्छी तरह जानते हो कि मैं न तुम्हारी स्त्री हूँ और न कमल तुम्हारा पुत्र !...." ठकुराइन ने कहा—'यह जानते हुए भी कमल को तुमने डाँटा ?"

"उसके हित के लिए ठकुराइन...." ठाकुर मर्माहत होकर बोले—"सब जानते हैं कि कमल मेरा ही पुत्र है, ऐसी हालत में अगर कमल कोई भूल कर बैठता है तो सारी जिम्मेदारी मेरे खानदान पर होगी। मेरी इज्जत धूल में मिल जायगी...." ठाकुर एक दीर्घ विश्वास छोड़ते हुए पुनः बोले—"परन्तु तुमने पुत्र-प्रेम में दीवानी बनकर मेरे हृदय में संचित उस पवित्र प्रेम पर कीचड़ उछाल दिया है, जिसे मैंने बहुत संजोकर रखा था। जो बात हमारी तुम्हारी सीमा से बाहर नहीं जा सकी थी, उसे तुमने क्षणमात्र में बाहर कर दिया..."

ठाकुर की आन्तर्वेदना पर ठकुराइन ने तनिक भी ध्यान न देते हुए पूर्ववत् क्रोधपूर्ण मुद्रा में कहा—

"तुम्हें अगर अपनी इज्जत का ख्याल है तो मुझे और कमल, दोनों को निकाल दो...क्यों मुफ्त में बदनामी उठाते हो ?"

"ऐसा न कहो ठकुराइन...." व्याकुल स्वर में बोले ठाकुर—"तुम ऐसा न कहो। तुम्हारे लिए मेरे हृदय में उपासना के भाव हैं। इस जीवन में तुम्हारा हृदय और शरीर न जीत सका तो क्या हुआ, अभी अनेक जीवन पड़े हैं। कम-से-कम इस जीवन में मुझे अपनी

पूजा कर लेने दो। तुम्हारे लिए अगर मैं अपनी जान भी दे दूं, तब भी मेरे अरमान पूरे न होंगे।"

"तुमने हम माँ बेटे के लिए जो कुछ किया है ठाकुर, उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ...." ठकुराइन अब नम्र होकर बोली—"मगर आज बेटे की आंखों में आँसू देखकर मैं स्वयं को भूल गई, पागल बन गई....क्या तुम बता सकते हो कि उसने क्या अपराध किया है ?"

"क्या कमल ने तुमसे कुछ नहीं बताया, ठकुराइन ?"—ठाकुर ने पूछा !

"नहीं ?...."

"आजकल कमल देवी चौधरी की बेटी मेंहदी के पीछे पागल हो रहा है...." ठाकुर बोले।

"पागल !....क्या कहते हो ठाकुर ?" ठकुराइन चौंक पड़ीं।

"ठीक कह रहा हूँ मैं !...." ठाकुर ने कहा—"मैं नहीं देख सकता कि ठाकुर का बेटा, एक ग्वाले की बेटी से प्रेम करे। समाज की मर्यादा का उल्लंघन कर रहा है वह, ठकुराइन !"

"यह बात तो नहीं होनी चाहिए, ठाकुर ...." शान्त स्वर में ठकुराइन ने कहा—"मैं व्यर्थ ही तुम पर बरस पड़ी ! क्या करूं ? बेटे के मोह में, मैं वास्तविकता ही भूल गई थी !"

"ठकुराइन ! क्या तुम समझती हो कि कमल के लिए केवल तुम्हारे ही हृदय में वात्सल्य-प्रेम है और मेरे हृदय में नहीं ?...." ठाकुर बोले—"यह तुम्हारी भूल है...जो ठाकुर अपनी प्रजा को हृदय से प्यार कर सकता है, वह तुम्हारे बेटे के प्रति कैसे निष्ठुर हो सकता है, ठकुराइन ?"

"मैं भूल रही थी, ठाकुर ! मुझे क्षमा कर दो।"

"क्षमा..." हंस पड़े ठाकुर—"भला पुजारी में इतनी शक्ति कहाँ कि वह देवी को क्षमा कर सके।"

"तुम मुझे लज्जित करते हो, ठाकुर !...."—ठकुराइन मुस्करा-कर बोलीं—"मेरा इतना उपकार करके, अब देवता के बदले पुजारी बनना चाहते हो ?"

"ठकुराइन !..." स्निग्ध स्वर में बोले ठाकुर—"तुम्हारे लिए मैंने जो कुछ किया वह तुम्हें पराई समझकर नहीं, अपनी विभूति समझकर किया। यह मेरा दुर्भाग्य है कि तुमने कभी मुझे अपना नहीं समझा !"

"बहुत हीन हूँ मैं, ठाकुर !" ठकुराइन ने कहा—"यह तो तुम्हारा कलेजा था कि बीच मंझधार में से मेरा हाथ पकड़ कर मुझे उबारा और मुझे अपनी पत्नी कहकर घोषित किया—नहीं तो आज मैं और मेरा बेटा न जाने कहाँ होते ? सच कहती हूँ ठाकुर ! अगर तुमने उस समय मेरा हाथ न पकड़ा होता तो मैं निश्चय ही डूब मरती। तुम्हारे हृदय की विशालता मेरे अतिरिक्त और कौन जान सकता है ?"

"बहुत महत्व दे रही हो मुझे, नीलमुखी !" ठाकुर स्मित करते हुए बोले।

"ठीक कह रही हूँ मैं, ठाकुर !..."ठकुराइन ने कहा—"दुनियाँ के सामने तुमने मुझे अपनी पत्नी कहा और दुनियाँ के पीछे कभी तुमने मेरे बदन पर हाथ नहीं लगाया। मेरे ही कारण स्वयं तुमने अपनी शादी भी नहीं की और सांसारिक सुखों से विरक्त होकर, ब्रह्मचारी बने रहे—क्या दुनियाँ के लोग यह सब जान सकते हैं ?... एक स्त्री के लिए पुरुष का यह त्याग कितना महान है ! तुमने मेरे कमल के लिए जो त्याग किया है, उसका बदला ईश्वर तुम्हें देगा। मैं तो अबला हूँ, ठाकुर ! मेरे पास ऐसा कुछ भी नहीं जो तुम्हें दे सकूं !..."

"अब रहने दो, ठकुराइन !" ठाकुर हंस कर बोले—"कहीं इस प्रशंसा से विचलित न हो जाऊं मैं ?....जवानी के उन तूफानी दिनों की याद न दिलाओ। जो उस समय हुआ अच्छा ही हुआ, और जो कुछ अब हो रहा है, उसे होने दो नीलमुखी...."

"कमल को अपना बेटा समझकर अब तुम चाहे जितना डाँटो ठाकुर, मैं कुछ न कहूँगी। मैं अपनी गलती मानती हूँ !"

"कमल को डाँटने का मुझे दुःख है...." ठाकुर ने कहा—

"मगर उसके उत्थान का सारा भार मेरे कन्धों पर है और मैं अपने उस भार का मूल्य समझता हूँ, ठकुराइन ...मैं चाहता हूँ कि कमल का जीवन फूलों की सेज हो, काँटों-भरे मार्ग पर मैं उसे कभी जाने न दूंगा।"

बातचीत का सिलसिला रुक गया; क्योंकि दरवाजे के बाहर एक लठैत ने आकर चुटकी बजाई थी। ठाकुर बाहर आये।

"क्या है रामजतन ?"—उन्होंने लठैत से पूछा।

"अमिलहा के जमींदार आये हैं, बड़े राजा !"—लठैत ने कहा।

चौंक पड़े ठाकुर।

बोले—"उन्हें आदरपूर्वक बैठक में स्थान दो, मैं अभी आया..."

लठैत चला गया। ठाकुर अन्दर आये।

"कौन आया है, ठाकुर ?"—ठकुराइन ने पूछा।

"अमिलहा के ठाकुर जगदीश शरण सिंह आये हैं...."ठाकुर बोले।

यह नाम सुनकर न जाने क्यों ठकुराइन का सारा बदन भय से सिहर उठा। बोलीं वे—"क्या करने आया है वह ?"

"यह तो वही जानें..." ठाकुर बोले—"मैं जाकर उनका स्वागत करता हूँ...."

"दुश्मन का स्वागत करोगे, ठाकुर !" हताश स्वर में बोलीं ठकुराइन।

"दुश्मन तो वह तुम्हारा है, ठकुराइन...."ठाकुर ने कहा—"मेरा तो दोस्त है वह। शायद वह जानता भी नहीं कि तुम यहाँ हो।"

"यह कौन जान सकता है ?" ठकुराइन बोलीं !

"मैं जा रहा हूँ, थोड़ी देर में आऊंगा...." ठाकुर ने जाते हुए कहा—"जगदीश शरण के लिए उत्तम भोजन का प्रबन्ध किये रहना ठकुराइन !"

"और उसमें थोड़ा-सा जहर भी मिला दूंगी, क्यों ठाकुर ?"—ठकुराइन व्यंगात्मक हंसी हंककर बोलीं।

"नहीं-नहीं, जो गुड़ देने से मर सकता हो, उसके लिए जहर की आवश्यकता नहीं...." ठाकुर ने कहा—"तुम धैर्य रखो, ठकुराइन !

तुम्हारा यह दुश्मन, कुछ ही दिनों में अपने किये का फल भोगेगा।"

ठाकुर बाहर चले गये।

चौपाल में आये तो उस व्यक्ति पर उनकी दृष्टि पड़ी, जो बड़ी शान के साथ उनकी गद्दी पर बैठा हुआ था। उसकी उम्र भी ठाकुर जितनी ही थी। सर पर रेशमी मुंड़ासा, बदन पर रेशमी अचकन और नीचे रेशमी चूड़ीदार पाजामा था।

उसके राजपूती परिधान के सामने बड़े ठाकुर के मोटे वस्त्र फीके पड़ गये थे। वह व्यक्ति था अमिलहा का जमींदार जगदीश शरण सिंह। अमिलहा करमपुर से सात-आठ कोस पश्चिम था। जमींदारी करमपुर से छोटी थी उसकी मगर दबदबा बहुत बड़ा था। बड़े ठाकुर को देखकर जगदीश शरण उठ खड़ा हुआ—"जुहार बड़े राजा !...."

ठाकुर ने कहा—"आज कैसे भूल पड़े इधर ?"

"ऐसे ही आ गया, बड़े राजा !" जगदीश ने कहा—"तुमसे भेंट हुए कई साल बीत गये थे। सोचा, चलकर तुम्हारी खोज-खबर ले लूँ।"

"तुम तो हमें एकदम भूल ही बैठे थे !"

बड़े ठाकुर और जगदीश, दोनों गद्दी पर बैठ गये। "क्या करूँ ठाकुर ? अब तो बुढ़ापे की ड्योढी पर पहुचकर, कहीं आने-जाने का मन ही नहीं करता। दूसरे जमींदारी का झंझट भी दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है...." बड़े ठाकुर बोले।

"कुछ दिनों तक और संकटों का सामना करो, बड़े राजा !...." जगदीश ने कहा—"इसके बाद तो जमींदारी गई समझो। कांग्रेसी सरकार इस व्यवस्था को नष्ट करने के लिए कटिबद्ध है।"

"अच्छा ही होगा ठाकुर !..."बड़े राजा बोले—"ऐसा हो जाय तो मेरे मन की बात होगी।"

"यह क्या कह रहे हो बड़े ठाकुर तुम ?..." जगदीश के मुखपर घृणा का भाव आ गया था—"क्या तुम्हें अपनी जमींदारी जाने का जरा भी अफसोस न होगा ? तुम्हारी जमींदारी तो मुझसे दुगुनी है, फिर भी तुम ऐसा कहते हो।"

"जमीन तो किसानों की है, ठाकुर ! हमलोग तो केवल लगान वसूल करने वाले हैं। हमारा इस जमीन पर अधिकार ही क्या है ?" बड़े राजा बोले।

"ऐसा न कहो, बड़े राजा !..." जगदीश ने कहा—"यह जमीन हमारी है और सरकार ने हमें पूरा अधिकार दे रखा है। तुम देखना, कांग्रेस वाले जल्द ही पदच्युत कर दिये जायंगे। हम लोग उनके इस कार्य का विरोध करेंगे ..."

"सांप के बिल में हाथ डालकर मौत से भाग न सकोगे, ठाकुर..." बड़े राजा बोले—"अच्छा हो कि जमींदार लोग जमाने की रफ्तार के साथ चलें...."

"तुम चल सकते हो जमाने की रफ्तार के साथ, बड़े ठाकुर ! मगर हम कभी नहीं चलेंगे। हम ऐसा कदापि नहीं होने देंगे...."

"तूफान के आगे एक सूखे पत्ते की हस्ती ही क्या, ठाकुर जगदीश शरण ! हवा का वेग पाकर वह अपने आप रास्ते से हट जायगा...." बड़े राजा हंसकर बोले।

"तुम आवश्यकता से अधिक सरल हो, बड़े राजा ! तभी ऐसा कहते हो...." जगदीश बोला—"तुमने अपनी प्रजा को इतनी स्वतन्त्रता दे रखी है कि अब यह तुम्हारा अस्तित्व ही भूल बैठी है। देखना एक दिन यही किसान, तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन करने से पीछे न हटेंगे। अब वह दिन ज्यादा दूर नहीं..."

"प्रजा के दुःख-सुख के साथ मेरा चोली-दामन का सम्बन्ध है, ठाकुर ! और प्रजा मेरी अवज्ञा करेगी, यह स्वप्न में भी विश्वास करने योग्य बात नहीं...." बड़े ठाकुर ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"यह तो अपनी-अपनी धारणा है, बड़े ठाकुर !" जगदीश ने कहा बड़े ठाकुर की बातों से उसे उनके ऊपर घृणा हो आई थी, परन्तु उसे यह मालूम था कि वह एक ऐसे व्यक्ति के सामने बैठा है, जिसकी वाणी में असीम शक्ति है और जिसके लिये उसकी प्रजा का बच्चा-बच्चा प्राणोत्सर्ग कर सकता है। यही तो बड़े ठाकुर की महानता थी।

और एक महान व्यक्ति के विचारों से घृणा करने वाला जगदीश

शरण स्वयं घृणित था।

वह अपनी जमींदारी में अपने अत्याचारों के लिए प्रसिद्ध था। उसकी प्रजा उससे सदैव त्रस्त एवं भयभीत रहा करती थी। उसके अत्याचारों से बचने के लिए प्रजा के पास कोई साधन न था।

आज से बीस साल पहिले अमिलहा की जमींदारी पर ठाकुर विजय बहादुर सिंह का अधिकार था। उनके शासन-काल में प्रजा अत्यन्त सुखी थी। उस समय जगदीश शरण ठाकुर विजय बहादुर का कारिन्दा था। रिश्ते में वह विजय बहादुर का भाई लगता था। रिश्ता नज-दीक का न था, दूर का था। एक दिन अकस्मात विजय बहादुर की मृत्यु हो गई और जगदीश शरण ने छल-कपट द्वारा अमिल्हा की जमींदारी पर अधिकार जमा लिया। और तभी से वहाँ की प्रजा का दुःख आरम्भ हुआ।

"तुम्हारी जमींदारी में तो सब कुशल है न, ठाकुर?" बड़े राजा ने पूछा।

"सब आप की कृपा है...." जगदीश ने कहा।

"तुम्हारा बेटा गोपाल शरण अच्छी तरह है न?"

"वही तो जमींदारी का काम सम्हाले हुए हैं, बड़े राजा!...." जगदीश बोला—"नहीं तो तुम्हारी तरह मैं भी बन्धन में बंधा रहता।"

"गोपाल की शादी कर दी या नहीं?"—बड़े ठाकुर ने पूछा।

"अभी नहीं...." उत्तर देकर जगदीश ने पूछा—"कमल नहीं दिखाई-पड़ता ठाकुर! क्या कहीं गया हुआ है?...."

"नहीं, हवेली में ही हैं...." बड़े ठाकुर ने कहा।

"उसे देखे हुए बहुत दिन हो गये!...." जगदीश बोला—"उस समय तो वह बिल्कुल बच्चा था। अब तो जवान हो गया होगा और जमींदारी का काम देखता होगा!...."

"जवान तो वह हो गया है, ठाकुर! मगर जमींदारी का काम मुझे ही देखना पड़ता है...." बड़े राजा बोले—"वह अभी तक आजाद पक्षी की तरह जीवन व्यतीत कर रहा है..."

"यह तो ठीक नहीं है, बड़े राजा!...कम-से-कम उसे अब

अपना काम सम्भाल लेना चाहिए, बच्चों के रहते हम बुढ़ापे में कितना खटें ?"

"ठीक कहते हो, ठाकुर ! अब उसे काम में लगा देना ही ठीक है। बहुत दिन तक खेल-कूद चुका।" बड़े राजा बोले। प्यादा जलपान और तमाखू की गुड़गुड़ी रख गया। जगदीश जलपान करने लगा और ठाकुर फर्शी गुड़गुड़ाने लगे। जलपान करके तमाखू पीता हुआ बोला जगदीश—"मैं एक आवश्यक कार्य से तुम्हारे पास आया हूँ, बड़े राजा !..."

"क्या काम है ?...." बड़े राज ने पूछा।

"मेरी लड़की राजमणि सयानी हो चुकी है...." जगदीश ने कहा—"उसी के लिए वर खोजने निकला था। बहुत परेशान हूँ, बड़े राजा ! सयानी लड़की और पका फोड़ा, कौन पालना चाहेगा ?"

"ठीक कहते हो ठाकुर तुम !"

"अगर तुम अपने लड़के कमल के साथ राजमणि का सम्बन्ध स्वीकार कर लो, बड़े ठाकुर ! तो मेरा भार हलका हो जाय...." जगदीश बोला —"कमल से बढ़कर योग्य वर कहाँ मिलेगा ?"

"मुझे कोई एतराज नहीं है, ठाकुर !..." बड़े राजा बोले— "मगर ठकुराइन से पूछ लेना आवश्यक है। इस विषय पर अन्तिम उत्तर वही दे सकती हैं...."

"कोई बात नहीं। तुम उनसे पूछकर मुझे बताना !"—जगदीश ने कहा। इसी तरह बहुत देर तक बातें होती रहीं। दोपहर हुआ, दोनों ने साथ-साथ भोजन किया। इसके बाद जगदीश को चौपाल में पहुँचाकर ठाकुर ठकुराइन के कमरे में आये।

ठकुराइन उस समय पलंग पर बैठी, न जाने क्या सोच रही थीं। ठाकुर को देखकर उठ खड़ी हुईं और मुंह पर थोड़ा-सा घूंघट खींच कर बोलीं—"क्या वह चला गया ?"

"अभी है, ठकुराइन !...." ठाकुर ने कहा—"वह एक जरूरी काम से आया है।"

"किस काम से ?"

"तुम से रिश्ता जोड़ने का विचार है उसका....." हंसकर ठाकुर बोले।

"मुंह झुलस दूंगी उसका...." ठकुराइन ने आवेश में आकर कहा—"वह क्या मुझसे नाता जोड़ेगा ?"

"झूठ नहीं ठकुराइन, वह कमल से शादी तय करने आया है...."

"कमल की शादी !....किससे ?...." ठकुराइन को आश्चर्य हुआ।

"अपनी लड़की राजमणि से ?" ठाकुर ने कहा।

"क्या कहते हो ठाकुर तुम ?...." तड़पकर बोलीं ठकुराइन—"दुश्मन की बेटी को बहू बनाकर न रख सकूंगी मैं !"

"तुम उसे दुश्मन समझती हो, मगर वह तो तुम्हें जानता तक नहीं" ठाकुर बोले "वह तो मेरे बेटे कमल से अपनी बेटी की शादी करना चाहता है। उसे क्या मालूम कि कमल ठाकुर का बेटा नहीं, ठकुराइन का बेटा है...."

"तो तुमने क्या जवाब दिया, ठाकुर ?"

"मैंने कह दिया कि ठकुराइन से पूछकर बताऊंगा, क्योंकि कमल उन्हीं का बेटा है।"

"तुम्हारे ऐसा कहने से उसे कुछ शक तो नहीं हुआ, ठाकुर ?" ठकुराइन ने पूछा।

"शक कैसे होता....शक की कोई बात भी तो हो।"

"अब उससे जाकर कह दो कि यह रिश्ता ठकुराइन को स्वीकार नहीं है।"

"मगर मैं इस रिश्ते को अच्छा समझता हूँ, ठकुराइन !...."

"पागल हो गये हो क्या, बड़े राजा !...." ठकुराइन ने आश्चर्य भरे स्वर में कहा।

"पागल होता तो अच्छा था...." ठाकुर बोले—"मगर अफसोस केवल यह है कि दुनियां में सिर्फ तुम्हीं मुझे पागल समझती हो।"

"क्या तुम उस विश्वासघात को भूल गये, ठाकुर ! जो उसने मेरे प्रति किया है ?...." ठकुराइन उत्तेजित स्वर में बोलीं—"अगर तुम न मिले होते तो उस दुष्ट ने मुझे नष्ट ही कर डाला होता।"

"इन्सान शैतान के वशीभूत होकर अन्धा बन जाता है, ठकुराइन !....वह भी अन्धा हो गया था। अन्धेपन में किया गया अपराध क्या क्षम्य नहीं ?"

"उसने मेरे साथ जो कुछ किया है, उसके लिए उसे दण्ड देना तो दूर रहा, तुम उससे रिश्ता जोड़ने और क्षमा कर देने के अभिलाषी हो उठे हो बड़े ठाकुर ! आश्चर्य है !" ठकुराइन ने कहा—"उसने मेरे पति को...."

"चुप रहो ठकुराइन, दीवारों के भी कान होते हैं। मुंह से कोई ऐसी-वैसी बात मत निकालो...."

"तुम बूढ़े हो चले हो, ठाकुर !....और मुझे लगता है कि तुम्हारी बुद्धि भी साथ छोड़ चली है...."

"ठकुराइन !...."ठाकुर संयत स्वर में बोले—"इस बुढ़ापे में भी तुम्हें देखकर जवान बना हूँ मैं ! सोचो तो जरा ! क्या दुनियां में बुराई का बदला बुराई से ही देना उचित है ? क्या यह नहीं हो सकता कि एक विश्वासघाती के साथ रिश्ता जोड़कर उसे पश्चाताप के लिए बाध्य किया जाय ?...."

"यह नहीं हो सकता ठाकुर !....मैं ऐसा नहीं होने दूगी।"

"मगर ठकुराइन ! दुश्मन को पराजित करने का यह सबसे बढ़ियां हथियार है कि उसकी बेटी को बहू बनाकर अपने घर में रख लिया जाय...."

"मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं हूँ ठाकुर !" ठकुराइन ने कहा।

"मैं जानता हूँ कि इस समय तुम आवेश में आकर कुछ निर्णय कर सकने में असमर्थ हो। मैं जगदीश से कुछ दिन रुकने को कह दे रहा हूँ। इस बीच मुझे आशा है कि तुम इत्मीनान से सोच-समझकर इसका उत्तर दोगी...." ठाकुर बोले।

"यह ठीक है !" ठकुराइन ने कहा।

ठाकुर चौपाल में आये।

जगदीश गद्दी पर बैठा हुआ था।

ठाकुर को देखकर बोला—"पूछ लिया ठकुराइन से !"

"हाँ !...." संक्षिप्त उत्तर दिया उन्होंने ।

"क्या जवाब मिला ?" पूछा जगदीश ने ।

"उन्होंने कहा कि इस बात को समझने के लिए उन्हें कुछ समय चाहिए...."बड़े ठाकुर ने कहा ।

"ठीक है...." जगदीश बोला—"व्याह शादी का मामला जल्दी तय करना उचित भी नहीं । अब मुझे आज्ञा दो, बड़े ठाकुर ! फिर कभी सेवा में हाजिर होऊँगा । और हां, एकाध दिन के लिए तुम अमिलहा पधारो तो मुझे बहुत खुशी होगी । हो सके तो कमल को भी लते आना...."

"अच्छी बात है...." बड़े राजा ने कहा—"तुमने तो कमल को देखा ही नहीं....मैं अभी बुलाता हूँ उसे ।" ठाकुर ने लठैत को आज्ञा दी । थोड़ी देर में कमल आया । उसने झुककर जगदीश को अभिवादन किया । मगर जगदीश उसकी सूरत देखते ही एकाएक चौंक पड़ा । भय की मुद्रा अंकित हो उठी उसके चेहरे पर । फिर भी उसने अपना भाव छिपा लिया और कमल से बोला—"अच्छे तो हो बेटा ?"

"जी हाँ, आपकी कृपा से अच्छा ही हूँ ।"—कमल ने कहा ।

"अच्छा तो अब मैं चलूं, बड़े राजा !" जगदीश ने कहा ।

ठाकुर हवेली के दरवाजे तक उसे पहुँचाने आये । पालकी पर चढ़कर वह चला गया । चौपाल में लौटकर बड़े ठाकुर कमल से बोले—"छोटे राजा ! मैं अब बूढ़ा हो चला हूँ और तुम जवान हो गये हो । अब तुम्हें उचित है कि अपनी जमींदारी का काम देखो ।...."

"जो आज्ञा पिताजी !" कमल ने कहा ।

"दूसरे हफ्ते में तुम मालगुजारी बसूल करने के लिए भजनपुर जाओगे...."ठाकुर ने कहा—"वहाँ जाकर तुम प्रजा के सुख-दुःख का ख्याल रखना...."भजनपुर वहाँ से कई कोस दूर था । बड़े ठाकुर की जमींदारी बहुत बड़ी थी । और चार-चार, छः-छः कोस पर वसूली के लिए छावनियाँ बनी हुई थीं । भजनपुर में भी एक छावनी थी ।

४

करमपुर के दक्षिणी किनारे पर देवी चौधरी का मकान था। दीवार मिट्टी की बनी थी और छप्पर खपरैल के थे। दरवाजे पर सात भैंसें बंधी थीं। भैंसें ही तो ग्वालों की निधि होती हैं। देवी-चौधरी अभी-अभी कहीं से आया था। उसने ड्योढ़ी के पास अपना चमरौधा जूता उतार दिया और पुकारा—"मेंहदी !"

"आई दादा !...." अन्दर से वीणा झंकृत हो उठी। दूसरे ही क्षण गदराये यौवन का भार लादे आ पहुँची मेंहदी। देवी उसे देखता ही रह गया—जैसे अपनी जवान बेटी को वह आज ही देख रहा हो, जैसे मेंहदी की चढ़ती जवानी का अब तक पता ही न रहा हो उसे।

"क्या है दादा ?....आ गये तुम !" मेंहदी ने कहा।

"क्या कर रही थी, ?"....चौधरी ने पूछा।

"रोटी बना रही थी, दादा !...." मेंहदी ने उत्तर दिया। चौधरी कुछ सोचने लगा। शायद वह सोच रहा था कि मेंहदी के चले जाने पर उसे रोटी बना कर कौन देगा ?

चौधरी विधुर था। पत्नी कई साल पहले ही मर चुकी थी। अब उसके घर में केवल मेंहदी थी। सो मेंहदी भी एक दिन अपने घर चली जायगी तो चौधरी अकेला ही रह जायेगा। हाड़-मांस की इस पुतली को पाल-पोसकर वह दूसरे के हाथ सौंप देगा और स्वयं एकाकी-जीवन व्यतीत करेगा........सोचकर चौधरी का मन खिन्न हो उठा।

"क्या सोचने लगे दादा ?" पूछा मेंहदी ने। "कुछ नहीं बिटिया ?"—आर्द्र स्वर में चौधरी बोला।

"तुम्हें किसी बात की चिन्ता है क्या, दादा !....तुम आज बहुत उदासीन से दीख रहे हो !"—मेंहदी ने कहा। "मुझे कोई चिन्ता

नहीं बिटिया।" चौधरी बोला!

"फिर क्या सोचने लगे, तुम?"

"सोच रहा था कि घर का काम काज करते-करते तुझे बहुत तकलीफ होती है। अच्छा हो कि तुझे कुछ दिनों के लिए तेरे ननिहाल पहुँचा दूँ?"—चौधरी ने कहा।

"मेरी भी बड़ी इच्छा थी एक बार ननिहाल देखने की···" मेंहदी बोली –"मगर मेरे चले जाने से तुम्हें बहुत तकलीफ होगी, दादा! रोटी पकाना, भैंसों को चराना—इतना खटरकम तुमसे न हो सकेगा...."

"निरी पगली है मेरी बेटी?...."चौधरी ने कहा—"कौन कहे कि तू जनम भर मेरे ही घर पड़ी रहेगी और मेरे तकलीफ-आराम का ख्याल रखेगी? तुझे एक-न-एक दिन पराये घर जाना ही है विटिया। तू मेरी इतनी फिक्र मत किया कर..."

"मैं न फिक्र करूँ तो तुम्हारा और कौन बैठा है, जो तुम्हारी खोज-खबर लेगा दादा?"

"अरे विटिया! जो पैदा करता है, वही परवरिश करता है...." चौधरी बोला—"मेरी फिक्र ईश्वर ही करेंगे। तू निश्चिन्त रह!... अभी हम लोगों के मालिक राजा तो बैठे ही हैं। उनके रहते भला हमें कोई कष्ट हो सकता है?"

"तो मुझे कब ननिहाल ले चलोगे, दादा?"मेंहदी ने पूछा।

"आज ही...."

"अच्छा तो रोटी पका लूँ!····"कहकर मेंहदी घर में चली गई। चौधरी हाथ-पैर धोने लगा। खाली होकर हुक्के पर चिलम चढ़ाकर वह अभी पी ही रहा था कि सामने से एक पालकी आती दिखाई पड़ी। 'मेंहदी···" पुकारा चौधरी ने।

"आई दादा····" कहकर मेंहदी वाहर आई—'क्या है?"

तबतक पालकी भी सामने आ गई थी!

"जरा भीतर से मचिया दे जा, बेटी!···"चौधरी बोला—"छोटे राजा आ रहे है।" क्षणभर के लिए मेंहदी ने उत्सुकतापूर्ण दृष्टि से

उस ओर देखा, फिर मचिया लेने अन्दर चली गई। पालकी में से कमल उतरकर चौधरी के समाने आ खड़ा हुआ।

"जुहार छोटे राजा !" चौधरी ने कहा।

"जुहार चौधरी काका !" बोला—"अच्छे हो न !"

"सब तुम्हारी दया है, छोटे सरकार !...."चौधरी ने कहा—"कहाँ की तैयारी है ?"

"ऐसे ही घूमने निकला था...."

तब तक मेंहदी मचिया लेकर आ पहुँची ! उसने भर आँख कमल को देखा, फिर मचिया रखकर घर के अन्दर दरवाजे की आड़ में जा खड़ी हुई।

कमल और मेंहदी की आँखें केवल एक क्षण के लिए ही मिली थीं, परन्तु उतनी ही देर में वे दोनों एक दूसरे के हृदय की व्यथा जान गये थे।

"छोटे राजा की क्या सेवा करू ?...."चौधरी ने पूछा।

"कुछ नहीं, चौधरी काका...."कमल ने कहा—"इधर जरा कल्लन चाचा की मस्जिद तक जा रहा था। रास्ते में सोचा कि तुमसे भी मिलता चलूँ..."

"बड़ी दया की, सरकार !...." चौधरी बोला—'आप क्षण भर बैठें। मैं अभी पनारू की दुकान से मीठा लेकर आता हूँ.."

"मीठा क्या होगा, चौधरी काका ! क्यों फजूल तकलीफ करते हो ?"

"इसमें तकलीफ की क्या बात है, छोटे राजा !" कहता हुआ चौधरी मीठा लाने चला गया। कमल उठकर दरवाजे के पास आया। आड़ में मेंहदी खड़ी थी। कमल ने देखा, मेंहदी के नेत्रों में मोती-सी सफेद बूँदें छलक उठी हैं।

"मेंहदी !" पुकारा उसने।

"...." मेंहदी चुप रही।

'बोलो मेंहदी ! ईश्वर के लिए कुछ बोलो, समय बहुत कम है। तुम्हारे दादा आते ही होंगे...." विवशतापूर्ण स्वर में बोला कमल।

"क्यों आए हो, छोटे राजा ?" भींगी आवाज में बोली मेंहदी।

"तुम्हें देखने आया हूँ, मेंहदी ! तुम्हारी मीठी आवाज सुनने आया हूँ...."

"देखने-दिखाने से पीड़ा बढ़ती है, घटती नहीं छोटे राजा !.... और आवाज सुनने से जलन होती है...." मेंहदी धीरे से करुण स्वर में बोली—"तुम क्यों मेरे हृदय में जलन भर देना चाहते हो ?"

"मैं स्वयं जल रहा हूँ मेंहदी ! तुम्हारे पास आता हूँ तो जलती आग पर ठंडे छींटे पड़ जाते हैं।"

"तुम अपनी इज्जत का ख्याल करो, छोटे राजा !"....मेंहदी बोली—"मुझ जैसी तुम्हें सैकड़ों मिल जायँगी....मेरे लिए तुम बदनामी का टोकरा सिर पर न उठाओ। मैंने सुना है कि बड़े राजा ने कल तुम्हें बहुत डाँटा था।"

"सही सुना है तुमने ! उन्होंने मेरे प्रेम को समझने की चेष्टा तक नहीं की मेंहदी !...."

"यह प्रेम का आलाप पागलपन हैं, छोटे ठाकुर !...." मेंहदी ने कहा—"पुरुष तो भँवरे होते हैं। उन्हें हर औरत की जवानी तृप्ति दे सकती है, किसी से भी वह रस प्राप्त कर सकता है...."

"चुप रहो, चुप रहो मेंहदी !...." आकुल स्वर में कमल बोला—"मेरा कलेजा पत्थर का नहीं है, लोहे की छेनी उसपर मत चलाओ...."

"तुम मुझे भूल जाओ, छोटे राजा !....अपनी और अपने घराने की ओर देखो।...."

"मैं तुम्हें भूल जाऊँ ? और तुम ?...."

"किसी को अपने दिल में बसाकर भूल जाना औरतों के वश की बात नहीं होती छोटे राजा...." मेंहदी बोली—"पुरुष ही ऐसा कर सकते हैं। तुम भी पुरुष हो ! मुझे भूलकर, दूसरी से मन लगा लो। मेरी चिन्ता छोड़ो। मुझ जैसी गरीब लड़की, अगर तुम्हारी याद में घुलकर मर भी जायगी, तो समाज की आँखों में उसका कोई मूल्य न होगा।"

"परन्तु मेरी आँखों में तो तुम्हारा मूल्य है, मेंहदी ?"

"तुम्हारी आँखों में मेरे लिए इतना मूल्य है, छोटे राजा ?...."

मेंहदी बोली—"और ठाकुर घराने की इज्जत का कुछ भी मूल्य नहीं तुम्हारी आँखों में ?"

"तुम्हारा प्यार ही ठाकुर-घराने की इज्जत है, मेंहदी !...."

"छोटे रजा !...." मेंहदी करुण-स्वर में कहने लगी...."मेंहदी तो तुम्हारी है और हमेशा तुम्हरी ही रहेगी। मगर यह इज्जत एकबार जाकर फिर नहीं मिलेगी, छोटे ठाकुर !....तुम्हारी इज्जत मेंहदी से ज्यादा कीमत रखती है !"

"मैं तुम्हारे दिल की बात जानता हूँ, मेंहदी !...." कमल बोला—"तुम मुझे भूलने की नसीहत देकर स्वयं मेरी याद में तड़पना चाहती हो...."

"तड़पना भाग्याधीन है, छोटे राजा !...." मेंहदी ने कहा—"मैं तुमको प्यार जरूर करती हूँ, मगर उस प्यार में मिलन की आकांक्षा नहीं है। तुम दूर रहो और मैं तुम्हें प्यार करूँ—तुम प्रसन्न रहो और मैं उस प्रसन्नता में आत्मसंतोष का अनुभव करूँ— यही चाहता है मेरा हृदय....दादा आ रहे हैं, छोटे ठाकुर ! अब जाओ...."

कमल आकर मचिया पर बैठ गया। चौधरी ने कमल को जलपान कराया जलपान कर कमल तड़पता हुआ हृदय लेकर पालकी पर सवार हो गया। पालकी आगे बढ़ गई।

गाँव के किनारे पर शिवजी का विशाल मन्दिर था और उसके बगल में ही दीर्घाकार मस्जिद बन रही थी। दोनों देवस्थान एक दूसरे से सटे थे, भाई-भाई की तरह—दूध-पानी की तरह !

कल्लन मियां ने कमल को आते देखा तो दौड़े-दौड़े आए। बोले—"बड़ी तकलीफ की राजा बेटा, कैसे आये हो ?"

"पिताजी ने कहा कि जाकर अपने चाचा की मस्जिद देख आओ...."कमल बोला—"काम ठीक से हो रहा है न, चाचा ?"

"हाँ बेटा, खुदा करे तुम्हारा नूर आफताब की तरह रोशन रहे..." कल्लन मियाँ ने कहा—"अब तो हमें कोई कमी नहीं, बेटा ! जरूरत के वक्त फिर बड़े राजा के हुजूर में हाजिर होऊंगा..."

"मस्जिद कब तक बनकर तैयार हो जायगी, चाचा ?"—कमल

ने पूछा।

"खुदा ने चाहा तो दूसरे महीने के पहली चाँद को हमारी अजान गूँज उठेगी, बेटा! हम दस-बीस घर मुसलमान तुम्हारे साये में आ पड़े हैं। हमें पैर की जूती समझ रखना, कमल राजा! धूल समझकर पोंछ मत देना..."

"आप मेरे बुजुर्ग हैं, चाचा...."कमल ने कहा—"इतनी बड़ी इज्जत का मैं हकदार नहीं...."कहकर कमल पालकी में बैठकर हवेली की ओर रवाना हो गया।

६

भजनपुर गाँव न बहुत छोटा है, न बहुत बड़ा। वहाँ के निवासी बहुत खुशहाल हैं, गाँव के बीच में, एक छोटी-सी छावनी बनी हुई है। जमींदारी की मालगुजारी वसूल करने के लिए एक कोठरी बनी होती है, उसे ही छावनी कहते हैं। जमींदार या उनके उत्तराधिकारी यहीं आकर टिकते हैं। आज छावनी पर बड़ी रौनक है, क्योंकि छोटे राजा आज पहली बार यहां आये हैं। चारों ओर से प्रजा उन्हें देखने के लिये भागी आ रही है। साथ में नजराने के रूप में गुड़, तरकारी, दूध-दही आदि बेंगी पर लटकाये आ रहे हैं।

कमल लिपे-पुते साफ-सुथरे फर्श पर पड़े एक तख्त पर बैठा हुआ है। भजनपुर के पटवारी लाला शिवप्रसाद भी बहीखाता लेकर बैठे हैं। वही इस गांव के कारिन्दा हैं। कमल के साथ बहुत से लठैत भी आए हैं। सभी लठैत अदब के साथ यथास्थान खड़े हैं। कमल की गद्दी के सामने सैकड़ों की संख्या में किसान बैठे हैं। छोटे राजा का सौम्य मुखमण्डल उनके लिए आकर्षण की वस्तु है। गाँव की युवतियां भी लुके-छिपे कमल को देख जाती हैं। कमल के बगल में भरी हुई दो-नली बन्दूक रखी है।

"भाइयों !..." कमल बोला—"आज तुम मुझे पहली बार अपने सामने देख रहे हो। भविष्य में अब तुम मुझे बहुधा देखा करोगे, इसलिये मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे सामने अपनी स्थिति साफ कर दूं। मैं अभी अनुभवहीन हूँ। जमींदारी के कामों से अब तक मैं अलग ही रहा हूँ, इसलिए मुझे तुम्हारे सुख-दुःख का जरा भी ज्ञान नहीं है। अतएव मैं अभी बड़े राजा के ही मार्ग का अनुसरण करूंगा। बड़े राजा ने अब तक तुम्हें जितनी स्वतन्त्रता दे रखी है, उसमें तनिक भी कमी न होगी। अनुभव प्राप्त कर चुकने पर, मैं तुम लोगों को और भी सुविधायें प्रदान करूँगा। जमींदार और प्रजा का सम्बन्ध अत्यन्त स्नेहपूर्ण होना चाहिए। आपसी वैमनस्य एवं कटुता से हमारा मार्ग कंटकाकीर्ण हो सकता है। आजकल हमारे देश में जो परिवर्तन हो रहे हैं, उनसे तुम्हारा ही अधिकांशतः लाभ है। मेरी तरफ से तुम्हारी उन्नति में तनिक भी बाधा उपस्थित नहीं होगी। हर परिवर्तन में और हर शुभ कार्य में, एक जमींदार की हैसियत से मैं तुम लोगों का साथ दूँगा और तुम्हारे कन्धों से कन्धा भिड़ाकर काम करूँगा। अगर यह समय भी आये कि मुझे अपनी सारी जमींदारी तुम लोगों में बाँट देनी पड़े तो मैं पीछे न हटूँगा और आजीवन एक मामूली किसान की तरह रहकर अपना जीवन निर्बाह करूँगा...."

सारा कृषक वर्ग ध्यानपूर्वक सुन रहा था। लोग सोच रहे थे कि उनके छोटे राजा तो बड़े राजा से भी अधिक सहृदय एवं दयालु हैं।

एक वृद्ध किसान उठकर बोला—"छोटे राजा ! आज तुम्हें देखकर हमारी आँखें शीतल हो गई। तुम बड़े राजा के बेटे हो और उन्हीं की तरह दयावान हो। यह सच है कि दुनियाँ में समय-समय पर परिवर्तन होते रहे हैं और अब भी हो रहे हैं—मगर हम तो बिना किसी परिवर्तन के ही सम्पन्न, सुखी और प्रसन्न हैं !"

"बूढ़े दादा...." कमल बोला—"बात तो तुम ठीक कह रहे हो तुम लोग सुखी हो, सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई है, मगर कांग्रेसी सरकार जो कानून बना रही है, वह एक का सुख देखकर नहीं, हजारों-लाखों का दुःख देखकर बना रही है। यह कानून बन जाने पर हमारा

और तुम्हारा कर्तव्य हो जाता है कि उसके अनुसार कार्य करें....जमीन किसानों की है और युग-युग से वे ही उसका उपभोग करते आ रहे हैं....जमींदार तो केवल किसानों के सेवक हैं और किसानों को आराम देना ही उनका कर्तव्य है....''

''मगर सभी जमींदार तो ऐसा नहीं समझते, छोटे राजा !....'' वृद्ध ने कहा ।

''तभी तो हमारी सरकार उन्हें पदच्युत करना चाहती है !'' कमल ने कहा — ''अपने को प्रजा का सेवक समझने के बदले, वे स्वामी बन बैठे हैं और अपना कर्तव्य भूल गये हैं । इसीलिए तो देश के बड़े-बड़े नेता तुम्हारी दयनीय दशा देखकर व्याकुल हैं...''

''अगर एक बार वे नेता हमारे इस गाँव में आकर हमारी दशा देखते तो समझ जाते कि अब भी हमारे देश में खुशहाली मौजूद है....'' वृद्ध हर्ष गद्गद् वाणी में बोला ।

''अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि हमारी प्रजा को कोई कष्ट तो नहीं ?....'' कमल बोला—''हमारे पटवारी साहब से तो तुम्हें कोई शिकायत नहीं है ।''

''....''

एकाएक उपस्थित कृषकों में सन्नाटा छा गया ।

पटवारी के मुख पर भय की छाप अंकित हो उठी ।

''तुम्हारा मौन रहना प्रकट कर रहा है कि तुम्हें कोई दुःख अवश्य है....'' कमल बोला—''तुम निर्भय होकर अपनी वेदना व्यक्त करो । अगर पटवारी साहब तुम्हारे लिए कष्ट के कारण हैं, तो निस्संकोच होकर कहो ?''

''हमें और कोई कष्ट नहीं है, छोटे राजा !....'' वह वृद्ध बोला — ''मगर पटवारी साहब ने....''

''कहो-कहो बूढ़े दादा, रुको मत ! पटवारी ने क्या किया है ?....'' कमल ने पटवारी की ओर देखा । वह सर नीचा किए हुए बैठा था ।

''बहुत मामूली बात है, छोटे राजा !'' वृद्ध ने कहा ।

''तुम्हारा मामूली से मामूली कष्ट भी हमारे लिये लज्जा की

बात है, दादा !...." कमल ने कहा— "तुम निःसंकोच होकर कहो जो कुछ कहना चाहते हो...."

"छोटे राजा...." वृद्ध बोला—"पटवारी साहब को भी पेट है, बाल-बच्चे हैं, अगर वे हमसे कुछ लेते हैं तो इसमें उनका अपराध नहीं...."

"पटवारी का पेट भरने के लिये और उनके बच्चों के पालन-पोषण के लिए उन्हें काफी वेतन मिलता है...." कमल ने कहा— "सरकारी पटवारियों को पन्द्रह-बीस रुपये वेतन मिलता है, मगर हम पचास रुपये प्रति माह देते हैं। फिर भी यदि पटवारी तुमसे कुछ लेते हैं तो अनुचित है ! बोलो, पटवारी तुमसे क्या लेते हैं ?"

"छोटे करकार ! हमलोगों को घर पीछे, हर साल पटवारी साहब को दस रुपये नकद, पसेरी भर घी, मन भर तरकारी और दो मन गल्ला देना पड़ता है...." वृद्ध बोला।

"ऐसी बात है...." तड़पकर बोला कमल—"पटवारी साहब ?"

"जी छोटे राजा !...." पटवारी सिर से पाँव तक काँप उठा।

"तुम प्रजा से यह सब क्यों लेते हो ?...." कमल उत्तेजित स्वर में बोला—"किसके हुक्म से लेते हो ? किस अधिकार से लेते हो ?"

"मुझे क्षमा करें, छोटे राजा !...." पटवारी ने भयभीत स्वर में कहा।

"प्रजा को दुख देनेवाले के लिए मेरे पास क्षमा नहीं...." कमल बोला।

छोटे राजा का क्रोध देखकर लठैत पास आकर खड़े हो गये थे।

"पटवारी को हिरासत में ले लो !" कमल ने लठैतों को आज्ञा दी। पटवारी तुरन्त हिरासत में ले लिया गया।

"भाइयों !...." कमल पुनः बोला—"तुम्हारे कष्टों का कारण बनने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए मैं उदार नहीं बन सकता। अब तुम्हारे रास्ते का काँटा साफ हो चुका है। तुम किसी पढ़े-लिखे आदमी को अपना कारिन्दा और पटवारी चुन लो...."

"हम किसे चुनें, सरकार !...." वृद्ध ने कहा।

"अब सब जगह प्रजातन्त्र स्थापित हो रहा है और प्रजा की इच्छानुसार पदाधिकारियों का चुनाव हो रहा है। मैं भी चाहता हूँ कि तुम अपने लिये कोई पदाधिकारी चुनो।"

"सरकार !...." फटा चिथड़ा पहने हुए एक गरीब युवक ने उठकर कहा।

"क्या चाहते हो तुम ?"—पूछा कमल ने।

"सरकार, मैं बहुत गरीब हूँ...." वह युवक बोला—"इन्ट्रेन्स तक पढ़ा हूँ और पटवारीगिरी की परीक्षा भी पास कर चुका हूँ। मेरी खोज-खबर लीजिये, छोटे राजा ! ..."

"तुम यहाँ के कारिन्दा बनना चाहते हो ?" कमल ने पूछा।

"जी सरकार !" युवक बोला।

"ठीक है····मैं तुम्हारी योग्यता देखकर, यह काम तुम्हें सौंप सकता हूँ—मगर प्रजा की क्या राय है, यह जानना जरूरी है ?...."

"हमें मंजूर है, छोटे राजा !" सम्मिलित स्वर गूँज गया।

उसी समय एक किसान बदहवास दौड़ता हुआ कमल के पैरों पर गिरकर आर्तनाद कर उठा—"बचाओ, छोटे राजा ! मेरे बाप को बचाओ..."

"क्या है !..." पूछा कमल ने।

"पास के जमुनी गाँव में, अमिलहा के ठाकुर आये हैं, छोटे राजा !····" वह बोला—"उनके लड़के गोपाल ठाकुर मेरे बापू को मार रहे हैं। कोड़ों से मारकर घावों पर नमक छिड़कवा दिया है और आँखों में मिरचों की बुकनी डाल दी है, सरकार !···मैंने सुना है कि आप आये हैं, तो गोहार लेकर दौड़ा आया हूँ। मेरे बापू को बचाओ राजा, नहीं तो मर जायेंगे वे····"

"तुम रहते कहाँ हो ?"

"इसी गाँव में सरकार ···" वह बोला—"मगर हमने अमिलहा के ठाकुर का पाँच बीघे खेत जोता था। साल में दो बार लगान देने पर भी, वे कहते हैं कि लगान अभी तक नहीं मिला। हम बेकसूर हैं सरकार !····"

"उसकी इतनी मजाल कि हमारी प्रजा पर जुल्म करे....." कमल का ऊष्ण रक्त खौल उठा। वह उठकर खड़ा हो गया। बोला—"मैं अभी चलता हूँ। तुम मेरे साथ आओ..." उसने बन्दूक उठाकर हाथ में ले ली और पालकी पर आ बैठा। पालकी जमुनी गाँव की ओर बढ़ी, जो वहाँ से कुछ ही दूरी पर था। दस लठैत भी मरने-मारने को तैयार होकर पालकी के पीछे चले।

जमुनी गाँव में अमिलहा के ठाकुर जगदीश शरण की छावनी थी। वह आजकल अपने बेटे गोपाल शरण और बेटी राजमणी के साथ वहाँ आकर ठहरा हुआ था।

जगदीश और राजमणि कहीं घूमने चले गये थे और गोपाल मारपीट कर असामियों से लगान वसूल कर रहा था।

इस समय वह एक वृद्ध को बेदर्दी के साथ हंटर से पीट रहा था। और वह वृद्ध किसान पीड़ा से चिल्ला रहा था।

"चिल्लाने से कुछ नहीं होगा, बेईमान...."गोपाल तड़पकर बोला—"या तो मेरा लगान ला या अपना दम तोड़...."

"कुछ देर सब्र करो, सरकार ...." बुढ्ढा बोला—"आपका खेत जोता है, मगर रहता हूँ बड़े राजा के गाँव में। छोटे राजा आये हैं। उनके पास मेरा लड़का गया है, वह रुपया लेकर आता ही होगा...."

"जब तक रुपया नहीं आता, तब तक तुझे इसी तरह मारूँगा।" गोपाल बोला—"बड़ा आया है, राजा की जमींदारी में रहनेवाला।"

गोपाल ने दो हंटर उस वृद्ध को और मारा। वह चीखकर जमीन पर गिर पड़ा।

"अब बस करो ठाकुर !...." गोपाल के कारिन्दे ने उसका हंटर पकड़ लिया—"वह देखो, शायद छोटे राजा की पालकी आ रही है।"

"आने दो, क्या कर लेंगे वे ?" गोपाल मुंह विचका कर बोला।

"अनर्थ हो जायगा, छोटे बाबू !..." कारिन्दा बोला।

"क्या उन्हीं के गट्टे में ताकत है ?..." गोपाल बोला—"क्या हम सब नपुंसक हैं ?"

तब तक कमल की पालकी पास आ चुकी थी। फिर भी गोपाल उस वृद्ध को मारता ही जा रहा था।

"रोक दो अपना हाथ, ठाकुर!..." पालकी में से गरजकर बोला कमल। पालकी जमीन पर रख दी गई। बन्दूक लिए कमल पालकी से उतर कर गोपाल के सामने आ खड़ा हुआ। गोपाल ने अपना हाथ रोक दिया और आग्नेय नेत्रों से कमल को देखता हुआ बोला—"कौन हो तुम?" गोपाल अशिष्ट वाणी में बोला।

"मैं हूँ ठाकुर कमल किशोर नारायण ....!" कमल बोला—"क्यों मार रहे हो इस बेचारे को?"

"तुमसे मतलब?....कौन हो तुम पूछने वाले?...क्या अधिकार है तुम्हें?..."

"यह मेरी जमींदारी में रहता है..."कमल बोला—"मेरी प्रजा है वह! इसके सुख-दुख का भार मुझपर है...."

"इसने मेरा लगान नहीं दिया है।" गोपाल ने कहा।

"लगान नहीं दिया तो मुझसे क्यों नहीं कहा तुमने?....मेरी प्रजा पर हाथ उठाने का साहस कैसे किया तुमने?" कमल गरज कर बोला।

दोनों नौजवान थे। गरम खून था। बातें बढ़ती जा रही थीं। मगर सब चुपचाप खड़े थे।

"तुम मुझे धमका रहे हो ठाकुर!" गोपाल तड़पकर बोला।

"यही समझ लो तुम!" कमल ने कहा।

"तुम भी समझ लो कि तुम्हारी इस बन्दूक से डर जाने वाला नहीं हूँ मैं....तुम यह लाल-पीली आँखें किसे दिखा रहे हो?...." गोपाल तनकर खड़ा हो गया।

"निपट लेने का हौसला है क्या?"

"मैं उसके लिये भी तैयार हूँ।" गोपाल ने कहा।

"तो आओ!..." कमल बोला—"दिल का अरमान मिटा लो।" लपककर कमल ने एक लठैत से लाठी ले ली। गोपाल ने भी एक लाठी ले ली। चलने लगीं लाठियाँ। दो नौजवान ठाकुरों का युद्ध होने लगा और दोनों ओर के आदमी चुपचाप खड़े तमाशा देखने लगे।

कमल की लाठी गोपाल के सर पर पड़ी और गोपाल की लाठी कमल के सर पर। दोनों लहु-लुहान हो उठे, मगर लाठियाँ चलती रहीं। न कमल रुका, न गोपाल। दोनों के कपड़े रक्त से रंग गये।

"रोक लो अपना हाथ, गोपाल !...." एक दृढ़ आवाज दोनों के कर्णकुहारों में टकराई। दोनों रुक गये। ठाकुर जगदीश शरण न जाने कहाँ से—कितनी दूर से दौड़े आ रहे थे। और उनके पीछे-पीछे उनकी बेटी राजमणि भी। हाँफते हुए ठाकुर जगदीश शरण आकर दोनों के सामने खड़े हो गये।

"यह क्या नादानी कर रहे थे तुम दोनों ?"

"पिता जी ! कमल ठाकुर ने मेरे कार्य में विघ्न डाला था...." गोपाल बोला।

"चुप रहो...." जगदीश शरण कमल के पास चले आये।

"उसे माफ कर दो बेटा !...." बोले वे—"यह गोपाल बड़ा ही जिद्दी है ...."

"कोई बात नहीं, ठाकुर साहब !....यह दो जवानों का इम्तहान था – दोनों बराबरी पर छूट गए हैं।"

"तुम्हें बहुत चोट आ गई है, बेटा ! आज तुम हमारी ही छावनी में रहो ..." जगदीश ने कहा—"बेटी राजमणि, इधर आओ !"

राजमणि अब तक दूर खड़ी हुई कमल का रक्त-रंजित सौन्दर्य देख रही थी।

उसकी अवस्था पन्द्रह-सोलह के लगभग थी—बदन का रेशा-रेशा उभर आया था—जवानी उसके पोर-पोर में मादकता भर चुकी थी।

वह जगदीश के पास आकर खड़ी हो गई।

कमल ने उसे देखा और उसने कमल को।

दोनों के हृदय अव्यक्त गुदगुदी से भर उठे। एक विचित्र प्रकार की सिहरन दौड़ गई उनके शरीर में।

"ये करमपुर के छोटे राजा हैं, बेटी !...." जगदीश बोले—"इन्हें अपने साथ ले जाओ और इनके सर पर पट्टी बाँध दो। मैं यहाँ से निपट कर आता हूँ...."

"बहुत अच्छा पिताजी !...." राजमणि ने मधुर स्वर में कहा। उस स्वर को सुनकर कमल को लगा, जैसे सितार के तार झनझना उठे हों उसके कानों के पास।

राजमणि ने अपने अलसित नेत्रों में आमन्त्रण का सन्देश भरकर कमल की ओर देखा....और छावनी की ओर बढ़ चली। मन्त्र-मुग्ध सा कमल उसके पीछे छावनी के भीतर चला गया। आज इस युवती को देख कर कमल के हृदय में एक तूफान-सा उठ खड़ा हुआ था। उसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उसके सिर पर लगा हुआ घाव उसके दिल पर लगा हो। एक कमरे में आकर रुक गई राजमणि। यह उसी का कमरा था। चारपाई की ओर इशारा करके बोली—"आप इसपर बैठ जाइये।"

कमल चारपाई पर बैठ गया।

राजमणि पानी और कपड़ा लेकर आई। अपने नाजुक हाथों से कमल के सर का घाव धोकर उसपर पट्टी बाँध दी उसने। उसके पुष्ट अवयव को अपने इतने निकट पाकर कमल अपनी सारी पीड़ा भूल गई। वह उसके मांसल शरीर को अपलक देखने लगा। जब पट्टी बाँध लेने पर राजमणि ने कमल की ओर देखा तो उसे एकटक अपनी ओर देखता पाकर शर्म से गड़ गई।

"आपको हम लोगों ने बड़ी तकलीफ दी...." काँपते स्वर में बोली वह।

कमल आत्म-विभोर हो उठा। भ्रमर-प्रकृति के इस पुरुष के मानस-पट से पूर्व स्मृति, विस्मृति के गर्त में विलुप्त हो रही थी मेंहदी को वह भूल रहा था—राजमणि पर रीझ रहा था। एक फूल का रस लेकर, भँवरा दूसरे पर मँडरा रहा था।

"क्या आप मुझसे नाराज है?" पूछा राजमणि ने मादक स्वर में।

"नहीं तो...." कमल ने कहा—"भला तुमसे क्यों नाराज होऊँगा, राजमणि !"

कमल के मुख से अपना नाम सुनकर राजमणि के नेत्र तीव्र

हलाहल से भर उठे।

"आपके सर का दर्द कैसा है ?" पूछा उसने।

"सर में तो अब दर्द नहीं है..." कमल बोला—"मगर दूसरी जगह दर्द जरूर उभर आया है।"

"कहाँ ?..." राजमणि के नेत्र कमल की आँखों में समा गये।

"वहीं जहाँ तुम्हें भी दर्द हो रहा है।" कमल ने कहा।

"मुझे तो आँखों में दर्द हो रहा है, छोटे राजा !"—मुस्कराकर कहा राजमणि ने।

"क्योंकि आँखों में किसी की सूरत समा गई है, है न !..." स्मित करता हुआ बोला कमल।

"...." उत्तर में राजमणि ने लज्जा से सिर झुका लिया।

"मेरे तो दिल में दर्द हो रहा है, राजमणि !" कमल ने कहा।

"तब तो उसकी दवा कर देना बहुत जरूरी है...." शोख कटाक्ष करती हुई वह बोली।

"दवा तो तुम्हारे पास ही है।" कमल ने कहा।

राजमणि जानती थी कि कमल से ही उसकी शादी होने वाली है। कमल भी जानता था कि राजमणि की शादी का पैगाम लेकर ठाकुर जगदीश शरण उसके पिता के पास गये थे। यही कारण था कि वे दोनों थोड़ी ही देर में एक दूसरे के इतने पास आ गये थे और इतनी मादक और रसपूर्ण बातें कर रहे थे।

जगदीश शरण ने जान-बूझकर उन्हें ऐसा अवसर दिया था।

एक घण्टे बाद जगदीश वहाँ आये। उस समय कमल चारपाई पर लेटा था और राजमणि पास ही कुर्सी पर बैठी थी।

जगदीश को आया देखकर दोनों उठ खड़े हुए।

"तुम लेटे रहो, कमल बेटा !...." बोले वह—"कैसी तबियत है तुम्हारी ?"

"अब तो ठीक है, ठाकुर साहब !" कमल ने कहा।

"तुम दो-तीन दिन अब यहीं रहो, कमल ! इसके बाद मेरे साथ अमिलहा चलना। मैं बड़े राजा के पास खबर भेज दूँगा..."

जगदीश ने कहा।

कमल ने एक बार मुस्कराकर छिपी आँखों से राजमणि की ओर देखा। उसकी आँखों में रह जाने का आमन्त्रण था। उसे देख वह झट बोल उठा—"अच्छी बात है।"

"तुम गोपाल की किसी बात का ख्याल मत करना, बेटा! वह नादान है। मैं उसे माँफी माँगने के लिए बाध्य करूँगा...." जगदीश ने कहा।

उसी दिन शाम को गोपाल ने आकर कमल से माँफी माँग ली और दोनों में मित्रता हो गई। मगर यह मित्रता केवल ऊपरी मन से थी। अन्तर दोनों का जल रहा था, क्योंकि दोनों की प्रकृति भिन्न-भिन्न थी। फिर भी कमल प्रसन्न था। अब तक मेंहदी को वह भूल चुका था और राजमणि को अपना चुका था।

६

प्रात:काल का समय था।

बड़े राजा अभी स्नान करके आये थे और ठकुराइन की कोठरी में बैठे जलपान कर रहे थे!

ठकुराइन सामने के एक चौकी पर बैठी थीं।

"आज मौन कैसे हो बड़े राजा?" ठकुराइन ने पूछा।

"जब घटनायें अपने आप ही घट रही हैं तो मेरा मौन रहना ही उचित है।" ठाकुर ने कहा

"कैसी घटनायें ठाकुर....क्या हो रहा है? मुझे तो कुछ पता ही नहीं?....बता न मुझे साफ-साफ?"

"तुम्हारा बेटा अमिलहा चला गया है, ठकुराइन!...." ठाकुर स्थिर वांणी में बोले।

"मेरा बेटा!...." चौंककर बोलीं ठकुराइन—"क्या कमल की बात कह रहे हो, बड़े राजा?"

"हाँ...." वे मुस्कराकर बोले—"तुम्हारा कोई और बेटा है क्या!"

"अमिलहा क्यों गया है वह ?..." ठकुराइन को ठाकुर का मुस्कराना अच्छा नहीं लगा—"किसके यहाँ गया है ?"

"ठाकुर जगदीश शरण के यहाँ।" गम्भीर बने रहे बड़े ठाकुर।

"क्या कहते हो बड़े ठाकुर ?...." उत्तेजित होकर बोली ठकुराइन—"कमल का दुश्मन के घर जाना क्या उचित हुआ है ?"

"मगर वह दुश्मन का घर नहीं है, ठकुराइन !...."

"तब किसका घर है वह ?"

"तुम्हारा...."

"मेरा घर जब था, तब था—अब तो दुश्मन का घर है...." ठकुराइन बोलीं—"तुमने उसे वहाँ क्यों जाने दिया बड़े ठाकुर ?...."

"मुझसे पूछकर वह वहाँ नहीं गया है...." ठाकुर कहने लगे—"कल जगदीश शरण का प्यादा आया था, उसीसे मुझे सब मालूम हुआ..."

"और तुम मुझे आज बता रहे हो यह बात ?"

"क्या करता, कल बता देता तो तुम्हें तो रात भर नींद नहीं आती..." ठाकुर बोले—"मगर इसमें घबड़ाने की कोई बात नहीं ठकुराइन ! कमल अपने ससुराल ही तो गया है।"

"ससुराल !...." घृणायुक्त स्वर में बोलीं ठकुराइन—"कैसी बातें करते हो, ठाकुर ?"

ठाकुर कुछ बोले नहीं। चुपचाप मुस्कराते रहे।

"क्या कमल वहाँ खतरे से बाहर रह सकता है ? यदि जगदीश-शरण को भेद मालूम हो गया, तो क्या वह कमल को जिन्दा वापस आने देगा ?...." ठकुराइन ने शंकित मन से कहा—"क्या तुम नहीं जानते कि कमल की मुखाकृति बिल्कुल उसके पिता जैसी है ! अभी तुम्हीं तो उस दिन कह रहे थे कि कमल को देखकर जगदीश एका-एक चौंक पड़ा था ..."

"बात सही है..." ठाकुर बोले—"मगर जगदीश को उस भेद का पता ही कैसे लग सकता है ? उसे शक हो सकता है, परन्तु निश्चय नहीं।"

"ठाकुर !..." ठकुराइन हताश वाणी में बोली—"जगदीश जैसे भयानक व्यक्ति के लिए मामूली शंका होते ही किसी की जान ले लेना साधारण बात है, तुम यह बात भूल कैसे गये ?" ठकुराइन ने कहा।

"अब भेद खुलने का समय आ रहा है, ठकुराइन !...." बड़े ठाकुर बोले—"अब कमल बालिग हो चुका है। अमिलहा का कानूनन वही जमींदार है। कानून की मदद लेकर हमें यह प्रमाणित करना होगा और तब वह जेल की चक्की पीसेगा...."

"वह तो होगा ही, बड़े राजा ?...." ठकुराइन ने कहा—"मगर कब होगा, यह तुम जानो।"

"बहुत जल्द हो जायगा, ठकुराइन ? तुम घबड़ाओ मत...मेरे रहते तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं...." ठाकुर ने कहा—"जगदीश शरण कमल का बाल भी बाँका नहीं कर सकेगा। तुम यह मत समझो कि मैं चुपचाप बैठा रहता हूँ। मुझे चारों ओर की खबरें मिलती रहती है। मेरे आदमी इस काम में बहुत दक्ष हैं। इस समय पचासों लठैत, कमल की रक्षा के लिए गुप्त रीति से अमिलहा में मौजूद हैं। उस पर संकट का आभास पाते ही, वे अपनी जान पर खेल जायेंगे...."

"तुम बहुत गम्भीर हो, बड़े राजा !...." ठकुराइन बोली—"तुम कब क्या करोगे, यह कोई नहीं जान सकता।"

"मगर तुम तो जान सकती हो, ठकुराइन !"

"मैं औरत की जात, मर्दों की बात क्या जानूँ ?"

"ऐसा न कहो, ठकुराइन !...." ठाकुर बोले—"मेरी हर बात को जानने का अधिकार है तुम्हें। तुम मेरे मन मन्दिर की देवी हो। तुम्हारे प्रेम के वशीभूत होकर ही मैं इतना सब कुछ कर गया और कर रहा हूँ। मैं तुम्हें न पा सका, मगर तुम्हारी सेवा करने का अवसर पा गया हूँ, यही बहुत है—और इतने ही से सन्तुष्ट हूँ मैं...."

"यह क्या कहते हो तुम, बड़े राजा ?" कहते-कहते ठकुराइन का चेहरा लज्जा से आरक्त हो उठा।

"ठकुराइन !...." स्निग्ध स्वर में बोले ठाकुर—"मैं जवानी के उन

दिनों की मादक स्मृति भूला नहीं हूँ। उस समय मैंने तुम्हें प्यार किया था, मगर तुमने विजय बहादुर को अपने प्रेम का हकदार चुना, मुझे जरा भी दुःख न हुआ। सोचा प्रेम का आनन्द मिलन में नहीं, जलन में है...मैं तुम्हारे प्रेम में जलता रहा और आजीवन अविवाहित रहने का प्रण कर लिया मैंने...और अन्त में मेरा प्रेम तुम्हें मेरे पास खींच ही लाया...."

"जाने दो ठाकुर !..." ठकुराइन बोली—"बीती बातों को सोंच-सोच कर अपने को परेशान न करो..."

"अच्छी बात है, ठकुराइन ! अब मैं चलता हूँ—चौपाल में जाने का वक्त हो चुका है।"

ठाकुर उठ खड़े हुये और बाहर चले गये।

जब ठाकुर चौपाल में आये तो वहाँ सैकड़ों की भीड़ उपस्थित हो चुकी थी। उन्हें देखकर सब उठकर खड़े हो गये। ठाकुर कारिन्दा के बगल में गद्दी पर जा बैठे।

उन्होंने आँख उठाकर उपस्थित प्रजा पर दृष्टि डाली तो चौंक पड़े सामने की ओर कई कुर्सियाँ लगी हुई थीं ! उनमें से एक पर, एक अंग्रेज बैठा था और दूसरी कुर्सी पर कई हिन्दुस्तानी साहब आसीन थे।

ठाकुर के जीवन में अंग्रेज के सम्पर्क में आने का पहला अवसर था।

वे कुछ घबड़ा गये—परन्तु तुरन्त संयत होकर बोले—"आप लोग किस काम से पधारे हैं...."अंग्रेज उठकर ठाकुर के पास आ बैठा और उसने अदब के साथ सलाम किया। उसकी शिष्टता देखकर ठाकुर की शंका जाती रही ! वे प्रसन्न हो उठे। अंग्रेज का नाम था टामसन। "मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?" उन्होंने अंग्रेज से पूछा।

"मैं आपके पास एक जरूरी काम से आया हूँ, ठाकुर साहब !"—टामसन शुद्ध हिन्दी में बोला।

"कौन-सा काम है ?....फरमाइये ?"

"मैं आप से कुछ मदद चाहता हूँ...." टामसन ने कहा।

"आपकी मदद करने लिए मेरे पास कुछ नहीं है, साहब !...." ठाकुर नम्र स्वर में बोले—"फिर भी अतिथि को निराश लौटा देना मेरा उसूल नहीं। आप निस्संकोच होकर कहिये...."

"शहर में मेरी चीनी की एक बहुत बड़ी मिल है, ठाकुर साहब !" बोला टामसन—"आजकल मुझे गन्ना नहीं मिल रहा है। मैंने सुना है आपकी जमींदारी में गन्ना बहुत होता है। अगर आप मिहरबानी करके मुझे यहाँ गन्ने की तिजारत करने का हुक्म दे दें तो मैं आपका शुक्रगुजार रहूँगा।"

"किस तरह आप गन्ने की तिजारत करना चाहते हैं ?" ठाकुर ने पूछा !

"आपके किसानों से ऊँचे दाम पर गन्ना खरीद कर, मैं अपनी मिल में भेजा करूँगा। इस तरह मेरी मिल का काम चलता रहेगा और हमारा पेट भरता रहेगा—हम विलायत से इतनी दूर सिर्फ आप ही लोगों के भरोसे आये हैं...."

"तो ठीक है...." ठाकुर बोले—"मगर सारा गन्ना बाहर चले जाने से यहाँ गुड़ की कमी हो जायगी, फिर हमारा काम कैसे चलेगा ?"

"उसका जिम्मा मैं लेता हूँ...." टामसन ने कहा—"यहाँ से गन्ना खरीदकर, मैं यहाँ वालों को चीनी दूँगा ! इसके अतिरिक्ति अच्छे कपड़ों तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का भी मैं प्रबन्ध कर दूँगा...."

"यह तो अच्छी बात है...." ठाकुर बोले—"मुझे इसमें कोई एतराज नहीं है ! अगर मेरे किसान अपना गन्ना बेचना मंजूर करें तो आप प्रसन्नतापूर्वक खरीद सकते हैं...."

"शुक्रिया !...." टामसन बोला—"कुछ ही दिनों में यहाँ वालों को मालामाल कर दूँगा मैं ! उन्हें अपनी मिल में अच्छी-अच्छी नौकरियाँ भी दूँगा ! उनकी निरक्षरता दूर करने के लिए स्कूलों का भी प्रबन्ध करूँगा...."

टामसन ने उनके समक्ष भावी उन्नति का ऐसा सुनहला जाल बिछाया कि भोले ठाकुर उसमें आसानी से फँस गये।

वे बोले—"इससे बढ़कर मेरे लिए प्रसन्नता की और क्या बात होगी कि मेरी प्रजा सुख से रहे! आप खुशी-खुशी रोजगार कर सकते हैं...."

"एक बात और है, ठाकुर साहब ?...." प्रार्थना भरे स्वर में बोला टामसन।

"कहिये ?"

"तिजारत के सिलसिले में मुझे यहाँ अक्सर रहना पड़ेगा। बँगले के बगैर हमारा यहाँ रहना कैसे हो सकेगा ?"

"यह कौन-सी बड़ी बात है ?" ठाकुर जरा हँसकर बोले—"गाँव के पश्चिम तरफ की ऊसर जमीन में आप जहाँ चाहें अपना बँगला बना सकते हैं।"

"बहुत-बहुत धन्यवाद, ठाकुर साहब!....मगर मैं चाहता हूँ कि आप कुछ जमीन मेरे हाथ बेच दें।" टामसन बोला।

"साहब!...." मुस्कराकर बोले बड़े राजा—"ठाकुर के पास धन की कमी नहीं। आप जितनी जमीन चाहें बिना मूल्य ले सकते हैं। जब आप मेरी प्रजा के लिए इतना कर सकते हैं तो क्या मैं आपके लिए कुछ भी नहीं कर सकता।"

"मैंने सुना था कि ठाकुर साहब बड़े ही रहमदिल हैं...." टामसन ने कहा—"वह आज मैं खुद अपनी आँखों से देख रहा हूँ—मगर मुफ्त में कोई चीज लेना हमारा उसूल नहीं, ठाकुर साहब! आप थोड़ी कीमत हमसे जरूर ले लें और बाद को उसे अपने पास न रखकर किसी अच्छे काम में लगा दें।"

"आप कितनी जमीन चाहते हैं ?" पूछा ठाकुर ने।

"महज सौ बीघे...." टामसम ने कहा।

"सौ बीघे!...." आश्चर्य से बोले ठाकुर—"इतनी जमीन क्या करेंगें लेकर ?"

"बात यह है कि हमलोग अपने बँगले के चारों तरफ बहुत बड़ा बाग लगवाते हैं। कम होने पर मेरी योजना कैसे पूरी हो सकती है.... मैं आपको सौ बीघे के लिए दस हजार रुपया दूँगा। मेरी समझ से

ऊसर जमीन के लिए इतना मूल्य बहुत काफी है।"

"अच्छी बात है—आप सौ बीघे ले सकते हैं।" ठाकुर ने कहा।

"मुझे एक कागज पर लिखकर दे दें, तो बड़ी कृपा होगी!" टामसन बोला।

ठाकुर ने कारिन्दा को इशारा किया। कारिन्दा ने एक कागज पर कुछ लिखा और ठाकुर साहब ने उस पर हस्ताक्षर करके टामसन को दे दिया।

'धन्यवाद..." टामसन ने कागज देखते हुए कहा—"आपको रुपयों की जरूरत तो है नहीं, इसलिए आपके दस हजार रुपये मैं अपने पास रखता हूँ! समय अनुकूल आने पर इन्हीं रुपयों से स्कूल, अस्पताल वगैरह खुलेंगे...."

"ठीक है...." ठाकुर ने निष्कपट भाव से कह दिया।

ठाकुर सरल प्रकृति के व्यक्ति थे। कभी किसी पर अविश्वास उन्होंने नहीं किया था, इसलिए गोरे साहब की चिकनी-चुपड़ी बातों में वे आ गये।

"अच्छा तो अब इजाजत दीजिए...." टामसन उठता हुआ बोला।

साहबों के चले जाने पर कारिन्दा बोला—"बड़े राजा! मैं कुछ कहना चाहता हूँ..."

"कहो! क्या कहना चाहते हो?"

"आपने इस साहब को जमीन देकर अच्छा नहीं किया।"—कारिन्दा बोला।

"क्यों?"

"इन गोरों की विश्वासघातकता जगत-प्रसिद्ध है। अगर उँगली रखने की जगह मिल जाय तो पांव पसारते देर नहीं लगेगी इन्हें..."

"मगर वे तो व्यापार करना चाहते हैं, मुनीम जी!" ठाकुर ने कहा।

"एक समय इसी तरह कुछ अंग्रेज हमारे देश में व्यापार करने आये थे, बड़े राजा! उसका परिणाम यह हुआ कि सारा भारत परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ गया। ये गोरे बड़े नीति-पटु हैं। भाई-

भाई में कटुता उत्पन्न कराना इन्हें खूब आता है। आज देश में जितने भी लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं, सब इन्हीं के हस्तक्षेप का नतीजा है।"

"तुम्हें शक हो गया है, मुनीमजी !"

"ईश्वर न करे कि कभी मेरा यह शक सही हो...." कारिन्दा बोला—"और आपकी जमींदारी में कलह की आग फैल जाय। मैंने इतिहास पढ़ा है, बड़े राजा !....और जानता हूँ कि जहाँ-जहाँ इनका अधिकार हुआ, वहाँ-वहाँ प्रलय मच गया। युगों से साथ-साथ रहने वाले भाई-भाई आपस में लड़ने लगे। प्राचीन कला-कौशल नष्ट हो गये। धर्म और मजहब की आड़ में मनुष्य का रक्त बहाया जाने लगा। पवित्र पाठशालाओं एवं वेदाश्रमों के स्थान पर दासता की जंजीर में जकड़ने वाले स्कूलों की स्थापना हुई। सदियों का स्नेह-बन्धन भूलकर लोग धन के दास बन बैठे। एक हुआ गरीब तो दूसरा हुआ अमीर। एक ने जुल्म किया और दूसरे जुल्म सहा....अपने ही भाई दूसरे भाइयों पर जो अत्याचार करते हैं, वह इन गोरे महापुरुषों की कूट-नीतिज्ञता के ही कारण...."

"तुमने मुझमें नई चिन्ता भर दी, मुनीमजी...." ठाकुर बोले—"मैं जानता हूँ तुम बी० ए० तक पढ़े हो, इस विषय में मुझसे ज्यादा जानते हो....खैर ! मैं सोचूँगा इस विषय पर। मेरी जबान और भुजाओं में जब तक ताकत है; इन गोरों की क्या मजाल जो भाई-भाई को लड़ा सकें...." कहकर बड़े ठाकुर उठ गये।

७

अमिलहा आकर, कमल राजमणि के अत्यधिक सम्पर्क में आ गया था। जगदीश की हवेली में उन दोनों को एक दूसरे से मिलने के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता थी, क्योंकि वहाँ राजमणि को छोड़ कोई अन्य स्त्री नहीं थी।

नौकर-नौकरानियों की कमी नहीं थी, मगर सब मालिक के भय से हमेशा त्रस्त रहते थे।

कमल का अधिकांश समय राजमणि के कमरे में व्यतीत होता था। रात्रि के समय वह बाहरी कमरे में अकेला सोता।

इस समय वह राजमणि के पास एक छोटी-सी काठ की चौकी पर बैठा था।

दोनों एक दूसरे को, आँखों की राह अपने हृदय में उतार कर प्रेम की गहराई को नाप रहे थे।

कमल के स्मृति-पट पर मेंहदी की याद एकदम धुँधली छाया मात्र रह गई थी।

"तुम्हारी माँ को गत हुए कितने दिन हुए, राजमणि ?" सहसा ही कमल ने पूछा।

"अभी परसाल ही तो मृत्यु हुई है उनकी...." राजमणि ने कहा।

"तब से तुम अकेली ही हो !"

"क्या करूँ ?....कोई साथी मिले तब तो ?" राजमणि ने मादक मुस्कुराहट के साथ उत्तर दिया।

"क्या अब तक कोई नहीं मिला ?"

"नहीं ! अब मिल गया है...." राजमणि बोली—अब जीवन के सपने रंगीन हो उठे हैं...."

"क्या मैं तुम्हारे साथी का नाम जान सकता हूँ ?" कमल ने अनजान बनकर पूछा।

"क्या कोई अपने साथी का नाम लेता है ?" लजाकर कह दिया राजमणि ने।

"मैं तो लेता हूँ...." कमल बोला।

"आप ले सकते हैं...."

"वह क्यों ?"

"क्योंकि...." तिरछी दृष्टि से देखती हुई लजाकर राजमणि बोली—"अपने पति का नाम लेना स्त्री के लिए वर्जित है...."

"तुम ठोक-बजाकर मुझे अपना पति बनाना चाहती हो,

राजमणि ?" शरारत भरी हँसी हँसते हुए कमल ने कहा।

"आप स्वयं ही पति बनने को उत्सुक हैं....' आँखों में अगम प्यार भरकर बोली राजमणि—"तभी तो जमुनी से मेरा पीछा करते-करते यहाँ तक चले आये।"

"तुम तो इस तरह कह रही हो, जैसे मैं कोई पालतू....?"

उनके मुँह पर हाथ रखकर वह बोली—

"नहीं, नहीं आप वह नहीं हैं....आप है मृगी को सुन्दरता के पीछे भागने वाले शिकारी...."

कहकर राजमणि लज्जावनत हो गई।

"तो तुम्हारी दृष्टि में मैं शिकारी हूँ ?...." कमल ने बनावटी आश्चर्य के साथ पूछा।

"अवश्य !....राजमणि बोली—"वह शिकारी जो अपने शिकार के पीछे तीर कमान लेकर भागता फिरता है।"

"क्या तुम्हें भी तीर लग चुका है, राजमणि ?" पूछा कमल ने और उसने आगे बढ़कर राजमणि का हाथ पकड़ लिया।

राजमणि ने कोई विरोध नहीं किया। वह विभोर होकर बैठी रही।

"बोलो राजमणि !...." कमल ने उसका हाथ दबाया—"क्या तुम्हें भी तीर लग चुका है ?"

"क्या शिकारी शिकार का तड़पन नहीं देख रहा है ?" धीरे से बोली वह।

"शिकारी की आँखें मदहोशी से बन्द हो चुकी हैं...." कमल ने आवेश के साथ कहा—"शिकारी का तड़पन वह कैसे देख सकता है, जब कि स्वयं वह तीर की चोट खाकर तड़प रहा है...."

"शिकारी चोट करते हैं, चोट खाते नहीं छोटे राजा !" मधुर स्वर में बोली राजमणि।

"मगर कभी-कभी शिकारी के तीर से शिकार की आँखें ज्यादा घातक होती है, राजमणि !"

कमल के इस वाक्य ने राजमणि के सीने में अगम गुदगुदी

भर दी ।

बोली वह—"तो क्या छोटे राजा अपने शिकार की आँखों से घायल हो चुके हैं ?"

"हाँ राजमणि !"—दीर्घ श्वास छोड़कर बोला वह ।

"अगर आज्ञा हो तो घाव पर मरहमपट्टी कर दूँ ?"

"चोट भी करती हो और मलहम लगाकर आराम भी ! अद्‌भुत हो तुम, राजमणि !....मगर मैं चाहता हूँ कि मेरा घाव कभी न अच्छा हो और मीठे दर्द का आनन्द लेता रहूँ ...."

"और क्या चाहते हैं आप ?"

"और चाहता हूँ कि घायल करने वाले को एक ऐसे बन्धन में बाँध लूँ कि वह युग-युग तक मुक्त न हो सके...." कमल बोला

"मैं तुम्हारे बन्धन में बँध जाने को तैयार हूँ छोटे राजा...." राजमणि ने कहा—"यह बन्धने मेरे लिए अत्यन्त सुखदायी होगा...."

"तो इधर आओ !" कमल बोला ।

"कहाँ ?...." राजमणि ने पूछा ।

"मेरे पास !...."

"किसलिए !...."

"ताकि तुम्हें बन्धन में बाँध लूँ...." कमल बोला ।

"दूर से ही बाँधिये...."कटाक्ष का तीर चला कर बोली वह ।

"यह वह बन्धन नहीं है रानी, जो दूर से बाँधा जा सके । यह तो दिल का दिल से सम्पर्क होने पर ही बाँधा जा सकता है...."बैठता हुआ कमल बोला ।

"देखिये, दूर रहिए, अभी नहीं....अभी ऐसा नहीं !"

राजमणि कहती ही रही और कमल ने लपककर उसे पकड़ लिया । दूसरे ही क्षण उस मनोहारी प्रतिमा का अंग-अंग शिकारी के बन्धन में कसमसा उठा । मदलोलुप भँवरे ने उसके अधरों का पराग लूट लिया था ।

"चलिए आप बड़े वैसे हैं...." लज्जावनत हो राजमणि ने कहा ।

"कैसा हूँ, राजमणि ?"—उसे छोड़ता हुआ बोला कमल ।

"बड़े वैसे···" राजमणि ने कहा—"चालाक चोर।"

"क्या चुरा लिया तुम्हारा ?"

"मेरा सर्वस्व !···" मादक स्वर में बोली वह।

"ऐसा न कहो, रानी !···मैं तो स्वयं लुट गया हूँ।"

"आप मुझे रानी न कहा करें।" राजमणि ने कहा।

"क्यों ?" पूछा कमल ने।

"मेरे दिल में मादकता भर जाती है, इस सम्बोधन से···" धीरे से बोली वह—"और मादकता मेरे बदन के रेशे-रेशे में उष्णता की लहर पैदा कर देती है····"

'तो मेरा सहारा लेकर उस उष्णता को दूर भगा दिया करो।"

"शादी के पहले ऐसी बात नहीं करते, छोटे राजा !" उसने कहा—"शादी के बाद तो जीवन भर आप का सहारा···"कहते-कहते वह पुनः लजा गई।

मादक वार्तालाप ने, सारे वातावरण को रंगीन बना दिया था और वे दोनों सब कुछ भूलकर आनन्द ले रहे थे।

इतने में आँगन से आवाज आई—"दूध ले लो ठकुराइन बीबी !····"

"आती हूँ···" राजमणि ने कहा और दूध लेने बाहर चली गई।

मगर कमल चौंक पड़ा उस आवाज को सुनकर। अब भी वह आवाज उसके कानों में गूँज रही थी—"दूध ले लो ठकुराइन बीबी।"

यह कौन है ? किसकी आवाज है यह ? यह चिर-परिचित स्वर, इस अनजान जगह में कैसे सुनाई पड़ा ? कमल का हृदय उद्वेलित हो उठा मेंहदी की आवाज है यह ? जरूर वही है। मगर वह यहाँ कैसे आई ? कमल अपनी उत्सुकता रोक नहीं सका। वह लपक कर आँगन में आ गया। बाल्टी-भरा दूध लेकर खड़ी थी, मेंहदी।

कमल को देखकर चौंक पड़ी वह। बाल्टी उसके हाथ से छुटते-छुटते बची ! उसकी बेचैनी का कारण यह था कि उसने कमल को राजमणि के कमरे से निकलते देख लिया था। क्या उसका कमल, उसे इतनी जल्दी भूल गया ? इतना ओछा था उसका प्रेम !

क्या उसका प्रेम नाटक मात्र था ? वासनामूलक था ?··· उसके मस्तिष्क-पट पर अब तक की सारी घटनायें सिनेमा की भागती रीलों की तरह क्षण में चमक कर विलुप्त हो गईं। हृदय को पत्थर बना, उसने अपना मुँह फेर लिया। कमल की भी दशा विचित्र हो रही थी। राजमणि के सम्पर्क से धुंधली पड़ गई मेंहदी की स्मृति, स्पष्ट होकर अन्तराल को कुरेदने लगी। वह सोंच रहा था—वह किस दिशा की ओर जा रहा है ? वह क्यों अपने हृदय पर नियंत्रण नहीं रख सका ? क्यों उसने अपने आपको सागर की उत्ताल तरंगों में विलीन हो जाने के लिए छोड़ दिया ?

कमल का मन अस्थिर हो गया। वह लौटकर पुनः राजमणि के कमरे में आ बैठा। दूध रखकर राजमणि भी आ गई। मेंहदी चली गयी थी।

"कौन थी वह राजमणि ?"—पूछा कमल ने।

"आपके ही गाँव की तो है····" राजमणि ने कहा—"पहचानते नहीं उसे क्या ?"

"कुछ-कुछ पहचान गया हूँ····वह यहाँ कैसे आ गई ?"

"उसका ननिहाल है हमारे गाँव में है····" बोली वह—"उसका नाना हमारे यहाँ दूध देता है। आज वह किसी काम में लगा होगा, इसलिए उसे ही आना पड़ा।"

"क्या नाम है उसका ?"

"माता बदल !····"

"नहीं, उस लड़की का नाम ?····" कमल राजमणि के सामने अपने को अनभिज्ञ प्रकट करता जा रहा था।

भँवरे ने जिस फूल का रस चूसा था, अब उसका नाम भी भूल जाने का बहाना बना रहा था !

"मेंहदी है उसका नाम···" राजमणि बोली—"आप भी विचित्र आदमी हैं। अपने गाँव के किसी आदमी को न तो पहचानते हैं और न नाम ही जानते हैं····"

कमल कुछ कहने ही जा रहा था कि एक नौकरानी आ पहुँची।

कमल से बोली वह—'आपको सरकार बुला रहे हैं।"

सरकार से उसका मतलब जगदीश शरण से था।

कमल उठता हुआ राजमणि से बोला—"तुम्हारे पिता जी बुला रहे हैं। मैं चलता हूँ...."

और सच बात तो यह थी कि उस समय वह स्वयं वहाँ से चला जाना चाहता था। वह नहीं चाहता था कि मेंहदी को देखकर उसके चेहरे पर जो उद्विग्नता छा गई है, उसे राजमणि की आँखें भाँप जायँ। बाहर निकलकर कमल जगदीश शरण के कमरे की ओर बढ़ा।

रास्ते ही में गोपाल का कमरा पड़ता था। कमल ने उधर दृष्टि डाली तो देखा कि गोपाल बाहर की ओर किसी को घूर-घूरकर देख रहा है।

कमल ने उधर देखा। मेंहदी चली जा रही थी खाली बाल्टी लिये हुए और गोपाल उसके गदराये शरीर को वासनापूर्ण दृष्टि से देखा रहा है।

कमल का सारा बदन सिहर उठा। उसके मन में आया कि पास जाकर वह इस कामुक गोपाल की आँखें निकाल ले, मगर उसने अपने को रोक लिया और जगदीश के कमरे में आ गया।

जगदीश एक कुर्सी पर उठँगा हुआ था और उसके सामने ही एक काला-कलूटा भयंकर पुरुष जमीन पर बैठा था। देखने में वह बहुत खूँखार एवं दुष्ट प्रकृति का लग रहा था।

"आपने मुझे बुलाया है?" कमल ने अन्दर आकर नम्रतापूर्वक पूछा। मगर उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि उसकी मुखाकृति देखते ही वह कलूटा व्यक्ति चौंक पड़ा है।

"हाँ बेटा!" सीधा होकर जगदीश बोला—"क्या कर रहे थे तुम?"

"अन्दर जलपान कर रहा था...." कमल झूठ बोल गया।

"यहाँ तुम्हारी तबियत लग रही है न!"

"जी हाँ..."

"सुनकर प्रसन्नता हुई मुझे··· अच्छा अब तुम जा सकते हो।" जगदीश ने कहा।

कमल बाहर चला गया। वह वहाँ ज्यादा देर तक रुकना भी नहीं चाहता था, क्योंकि जगदीश की आँखों में उसे जाने कैसा हिंस्र भाव दिखाई पड़ा था।

कमल के चले जाने पर जगदीश ने उस काले व्यक्ति की ओर देखा। "क्या सोच रहे हो, जंगी ?" पूछा जगदीश ने।

"बहुत ही आश्चर्यजनक बात दिखाई पड़ी है मुझे!···" जंगी बोला।

"कैसी आश्चर्य की बात ?"—जानते हुए अनजान बनकर पूछा जगदीश ने।

"यह छोकरा कौन था ?"

"कौन छोकरा ?"

"जो अभी आया था यहाँ····" जंगी ने कहा।

"उसे नहीं जानते तुम ?····" बोला जगदीश—"वह करमपुर के राजा का लड़का है। नाम है कमलकिशोर नारायण !"

"बड़ी बिचित्र बात है, ठाकुर !···· जंगी कहने लगा—"क्या तुम्हें इस कमल में कोई आश्चर्यजनक चीज नहीं दिखाई पड़ी ?"

"दिखाई पड़ी, तभी तो बुलाया है···" जगदीश बोला—"और कमल को तुम्हें दिखा भी दिया।"

"बड़ी अनहोनी बात है, ठाकुर! यह कमल तो रंग-रूप में बिलकुल ठाकुर विजय बहादुर जैसा है। जरा भी अन्तर नहीं है। चलने का ढंग और स्वर भी वैसा ही है····मैं तो काँप उठा था, उसकी आवाज सुनकर।"

"मुझे भी बहुत आश्चर्य हुआ था जंगी, जब पहले-पहल मैंने इसे करमपुर में देखा था।" जगदीश ने कहा।

"इसमें जरूर कोई भेद है, ठाकुर !"

"उस भेद का पता लगाना तुम्हारा काम है जंगी !...." जगदीश बोला—"मैं केवल तुमपर ही विश्वास करता हूँ। शुरू से ही तुम मेरे मददगार रहे हो और मेरा कोई भी भेद तुमसे छिपा नहीं है।"

"ठीक है ठाकुर !..." जंगी बोला—"मैंने तुम्हारी क्या कम मदद की है ? तुम्हारे लिए मैंने अपने जान की परवाह नहीं की है। जब ठाकुर विजय बहादुर इस अमिलहा के जमींदार थे और तुम एक मामूली कारिन्दा थे, तब मैंने तुम्हारे हुक्म से विजय बहादुर को विष दिया था''''यह कहो कि ठकुराइन भाग गई, नहीं तो उन्हें भी मौत के घाट उतार देता'''फिर भी तुम्हारा रास्ता तो साफ हो ही गया और तुम जमींदार बन बैठे।"

"हम लोगों ने समझा था जंगी कि ठकुराइन जरूर कहीं डूब मरी होगी।" जगदीश ने कहा।

"मगर इस कमल को देखकर एक दूसरी ही शंका उठ रही है, ठाकुर ?"

"क्या तुम्हें संदेह है कि यह कमल, उन्हीं ठकुराइन का लड़का है ?"—जगदीश ने पूछा।

"अवश्य !"....मेरा संदेह शत-प्रतिशत सत्य है, ठाकुर !..."

"यह तो तभी हो सकता है, जब यहाँ से भागते सम्य ठकुराइन को गर्भ रहा हो—" जगदीश बोला—"मगर वह ठाकुर चन्द्रकिशोर नारायण के पास कैसे जा पहुँची और कमल उसका लड़का कैसे कहलाया जाने लगा ?...."

जंगी कुछ सोचने लगा। देर तक सोचता रहा।

एकाएक बोला—"ठाकुर !...."

"कहो...क्या बात है ?" जगदीश ने कहा।

"क्या तुम वह बात भूल गये ?"

"कौन सी बात ?"

"बहुत साल पहले...." जंगी कहने लगा—"ठकुराइन नीलमुखी पर चन्द्रकिशोर और हमारे विजय बहादुर, दोनों मुग्ध थे। ठकुराइन ने विजय बहादुर को ही चुना....पुराने प्रेम को देखते हुए क्या यह सम्भव नहीं ?"

"जंगी !...." बोला जगदीश—"क्या तुम यह समझते हो कि चन्द्रकिशोर इतना मूर्ख है कि जिस ठकुराइन ने उसे ठुकरा दिया था

उसे ही अपने घर में रखेगा और उसके ही पुत्र को अपना पुत्र कहेगा ? यह सम्भव नहीं !"

"इस दुनिया में कोई बात असंभव नहीं, ठाकुर !..." जंगी ने कहा—"कमल की आकृति विजय बहादुर से हूबहू मिलती है। ऐसी दशा में अपने हृदय में किसी शंका को पनपने देना ठीक नहीं। यह न भूलो ठाकुर ! कि भेद खुलते ही सारी जमींदारी तुम्हारे हाथों से निकल जायगी और मैं फाँसी पर झूलता दिखाई दूँगा..."

"तो तुम्हारी क्या राय है ?" धीरे से पूछा जगदीश ने।

"मेरी राय !" कुछ रुककर बोला जंगी—"मेरी राय यही है कि कमल चाहे जिसका बेटा हो, अब यहाँ से जिन्दा बचकर न जाने पाये..."

"यही होगा ! मगर इस काम का भार तुम्हारे ही ऊपर रहेगा।"

"काम तो बहुत खतरनाक है, ठाकुर ?..." जंगी बोला—"जब कमल यहाँ से करमपुर जाने लगे तभी आक्रमण करना ठीक होगा, मगर मैं यह काम पाँच हजार से कम में न कर सकूँगा...."

"मैं दूँगा तुम्हें पाँच हजार ! तुम चिन्ता न करो रुपयों के लिए। मगर काम गुप्त रीति से हो, किसी को सुराग तक न लगे।"

"ऐसा ही होगा...."

जिस समय हवेली के एकान्त कमरे में में बातें हो रही थीं, उस समय आस-पास के कमरों में कोई नहीं था। कमल अमिलहा गाँव में घूम रहा था। वह मेंहदी से भेंट करना चाहता था। मेंहदी कुएँ से पानी भरकर, घड़ा कमर पर रखे घर लौट रही थी। कमल ने उसे देखा तो उसके पास चला गया।

"मेंहदी !"—उसने धीरे से पुकारा।

मेंहदी ने घूमकर उसकी ओर करुण नेत्रों से देखा, फिर आगे बढ़ने लगी। कमल भी उसके साथ-साथ चलने लगा।

"मेंहदी...." उसने पुनः पुकारा।

मेंहदी चुप रही।

"मुझसे रूठ गई, मेंहदी ?"

"तुम यहाँ क्या करने आये हो, छोटे राजा ?" मेंहदी के स्वर में रूठने का भाव था।

"तुम्हारा ननिहाल देखने आया हूँ, मेंहदी !" कमल ने कहा।

"झूठे कहीं के ? यह क्यों नहीं कहते कि राजमणि का सौन्दर्य तुम्हें यहाँ खींच लाया है ?"—अत्यन्त ही क्षुब्ध होकर वह बोली।

"मेंहदी !...."

"निर्दयी भँवरे ! करमपुर से उड़कर तुम यहाँ दूसरी कली का रस लेने आये हो !...." और उसकी आँखों से आँसुओं की धार निकल कर गालों पर बह चली।

"तुम रोती हो, मेंहदी ?...." बोला कमल—"तुम्हें क्या दुःख है ?"

"मुझे कोई दुःख नहीं, छोटे राजा !...." बोली मेंहदी—"मैं सुखी हूँ, यह देखकर कि तुम मुझे भूलने का प्रयत्न कर रहे हो।"

"एक बात कहूँ मेंहदी ! बुरा न मानना। तुम दूध लेकर हवेली में मत जाया करो। गोपाल की आँखों में मैंने शैतानियत देखी है... वह तुम्हें अच्छी नजर से नहीं देखता।"

"नजर की बात नहीं, छोटे राजा !..." बोली मेंहदी—"वह तो एक दिन मेरा हाथ पकड़कर मुझपर अपना प्रेम जता चुका है..."

कमल क्रोध से काँप उठा।

मेंहदी और कमल साथ-साथ चल रहे थे। एकाएक कमल को दृष्टि एक ऐसे व्यक्ति पर पड़ी, जो पगडण्डी के किनारे एक पेड़ की आड़ में खड़ा था, और उसे अपने पास बुला रहा था। उस व्यक्ति ने सर की पगड़ी के छोर से अपने चेहरे को छिपा रखा था। उसके हाथ में एक बर्छेदार लाठी थी। कमल उसके पास आया।

"छोटे राजा !" वह व्यक्ति धीरे से बोला।

"कौन हो तुम ?" कमल को आश्चर्य हुआ, उसकी भाव-भंगिमा देखकर।

उस व्यक्ति ने धीरे से अपने चेहरे पर का साफा हटाकर कमल को अपनी सूरत दिखाई।

"जतन तुम !...." चौंककर बोला कमल—"यहाँ कैसे आये हो तुम ?"

"मैं ही नहीं, हम तीस लठैत गाँव में छिपे-छिपे घूम रहे हैं, छोटे राजा !...." जतन ने कहा—"बड़े राजा ने आपकी रक्षा के लिए यहाँ नियुक्त किया है। हमें यहाँ का रंग-ढंग अच्छा दिखाई नहीं पड़ता। अभी-अभी जगदीश एक भयानक मनुष्य के साथ कोई गुप्त सलाह कर रहा था। आप जल्द-से-जल्द यहाँ से चल दें। वैसे किसी बात का भय नहीं है, हम लोग छाया की तरह हमेशा आपके पास हैं.... अच्छा ! अब आप जाइये। वह भयानक मनुष्य इधर ही आ रहा है...."

कहकर जतन चला गया। कमल की समझ में कुछ भी न आया। जैसे ही वह घूमा, मेंहदी जा चुकी थी। उसके हृदय पर वज्रघात-सा हुआ ! जतन पर मन-ही-मन खीझता हुआ वह वापस लौट आया।

जतन की बात सुनकर कमल का हृदय शंकित हो उठा। बड़े राजा ने अपने लठैतों को गुप्तरीति से यहाँ क्यों नियुक्त किया है ? उसके ऊपर क्या खतरा आ सकता है ? यहाँ रहने में उसे भय किस बात का है ? यह पहेली कमल की समझ में न आई। लम्बे पग बढ़ाता हुआ वह हवेली में आया। दरवाजे पर जगदीश शरण खड़ा था। उसने कमल को ऐसी दृष्टि से देखा कि कमल का रोम-रोम काँप उठा।

८

जरूर कोई अनहोनी घटना घटने वाली है, तभी तो बड़े राजा ने उसकी रक्षा के लिए इतना प्रबन्ध किया है। कमल डरपोक नहीं था, फिर भी इस समय वह न जाने क्यों भय से डगमगा उठा था।

"कहाँ से आ रहे हो, कमल ठाकुर ?...." जगदीश ने पूछा। उसका स्वर पहले जैसा नम्र नहीं था। स्वर में हिंसक पशु जैसी कठोरता का आभास उसे हुआ।

कमल ने जगदीश की परिवर्तित भंगिमा को लक्ष किया।

बोला—"गाँव में घूम रहा था...."

"अच्छा किया, देख लिया यह गाँव !...." जगदीश बोला—"अब तुम्हें अपने घर चले जाना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि प्रातःकाल तुम प्रस्थान कर दो। बड़े राजा तुम्हारे लिए व्यग्र होंगे।"

"मैं भी यही चाहता हूँ...." कहकर वह राजमणि के कमरे की ओर जाने लगा।

"सुनो तो कमल ठाकुर....!" पुकार कर कहा जगदीश ने—"तुम अपने कमरे में जाकर आराम करो। हर वक्त अन्दर रहना ठीक नहीं...."

अब कमल का सन्देह दृढ़ हो गया। वह चुपचाप अपने कमरे में जाकर लेट रहा। सोंचने लगा वह—जगदीश ने उसे अन्दर जाने से क्यों मना किया ? क्या अब जगदीश नहीं चाहता कि राजमणि से वह घुल-मिल कर बातें करे ? मगर पहले तो उसने ही इतनी स्वतन्त्रता दी थी, फिर इस विचार-परिवर्तन का कारण क्या है ? सोंचते-सोंचते उद्विग्न हो उठा कमल।

जगदीश कमल को बाहर ही रोक कर, स्वयं राजमणि के कमरे में आया। कल तक कमल को अपना दामाद बनाने के लिए इच्छुक जगदीश, आज उसके खून का प्यासा बन गया था। दुर्दान्त पशु की तरह उसकी ंगिमा विकृत हो उठी थी।

राजमणि ने अकस्मात् पिता की मुखाकृति पर गम्भीरता के स्थान पर कुटिलता देखी तो उसका मन दहल उठा। उसने अति व्याकुल होकर पूछा—"वे कहाँ हैं पिताजी ?"

"कौन ?" जगदीश का स्वर कठोर था।

"वे !...." इससे अधिक वह कुछ न कह सकी।

"उसका नाम न लो, राजमणि !...." तमक कर बोला जगदीश

—"क्या तुम अभी से अपने आप को भूल बैठी हो ?"

"नहीं पिता जी ! बात यह है कि...."

"अब तुम उससे नहीं मिल सकोगी बेटी !..."

"क्यों पिताजी ?...." राजमणि का आश्चर्य सीमा-रेखा तक पहुँच गया।

"मेरी भूल थी जो मैंने तुम दोनों को इतना निकट आने दिया...." जगदीश बोला—"तुम्हारी शादी उससे नहीं हो सकेगी.... आज मुझे एक भेद का पता चला है, कमल हमारे दुश्मन का बेटा है .."

"दुश्मन का बेटा !...." राजमणि जैसे आकाश से गिरी।

"हाँ...." जगदीश बोला—"वह तुम्हारे योग्य नहीं। वह मौत के घाट उतार देने लायक है...."

"मैं आपकी बात समझ नहीं रही हूँ, पिताजी !...." भयभीत स्वर में कहा उसने।

"तुम्हें समझने की जरूरत भी नहीं। बस इतना समझ लो कि अब उससे तुम्हारा मिलना खतरनाक होगा...."

उठ खड़ा हुआ जगदीश। राजमणि को और कुछ पूछने का अवसर न देकर वह बाहर चला गया।

राजमणि धम्म से चारपाई पर बैठ गई। पिता की बातों ने उसका मर्मस्थल कुचल डाला था। उसे लगा, जैसे एक बूँद अमृत पिलाकर अब उसके पिता उसे जहर पिलाने का उपक्रम कर रहे हैं। उसकी आँखों में आँसू आ गये। रोने लगी वह।

दुश्मन का बेटा है कमल ! अब उससे उसकी शादी नहीं हो सकती ! मगर कमल ने जो उसके रग-रग में व्यक्त बेचैनी भर दी है, उससे किस प्रकार वह छुटकारा पा सकती है ? किस प्रकार वह अपने अन्तर के कोने से कमल की मनोहर मूर्ति बाहर निकाल सकती है ? नहीं ऐसा नहीं कर सकती वह ! वह घुटकर अपना प्राण दे सकती है, परन्तु कमल को नहीं भूल सकती। वह चाहे दुश्मन का बेटा हो या मित्र का, मगर राजमणि का पति है। उसके मन ने, उसके हृदय ने

उसे अपना पति स्वीकार कर लिया है तो वह कैसे विस्मृत कर सकती है ?

इधर राजमणि की अवस्था चिन्तनीय थी, उधर बाहरी कमरे में बैठा हुआ कमल भी चिन्ता में जल रहा था। जगदीश ने उसे हवेली के भीतर जाने से रोक दिया है, इसका प्रत्यक्ष अभिप्राय यही है कि वह राजमणि से भेंट नहीं कर सकेगा।

देखते-देखते यह पट-परिवर्तन कैसे हो गया !

पिछले दो-तीन दिनों से उसका हृदय जिस वेग के साथ राजमणि की ओर अग्रसर हुआ था, उससे उसे यह अनुभव होने लगा था कि अब वह संसार में केवल राजमणि को ही चाहता है अन्य किसी को नहीं। मेंहदी को भी नहीं।

क्षुद्र प्रम का तूफान इतना तीव्रतर होता है, कि मनुष्य अपनी विचार-शक्ति खो बैठता है और वह उस क्षणिक प्रेम को ही अपने जीवन का महत्वपूर्ण क्षण समझ लेता है।

उस दिन कमल ने रात में भोजन नहीं किया।

किसी ने उससे हठ भी नहीं किया। हठ कौन करता ? सिवा राजमणि के और कौन उसे पूछने वाला था ? मगर राजमणि की ओर से भी कमल शंकित हो उठा—हो सकता है, अपने पिता के साथ-साथ वह भी बदल गई हो। बिना खाये चारपाई पर लेट गया वह।

रात हो गयी थी। घना अन्धकार छा गया था चारों ओर।

हवा आने के लिए कमल ने उठकर खिड़की खोली तो बाहर के अन्धेरे में किसी मनुष्य की छाया देखकर चौंक पड़ा वह।

"कौन है ?"—उसने पूछा।

उस मनुष्याकृति ने उसे चुप रहने का इशारा किया। फिर एक धीमा स्वर कमल को सुनाई पड़ा—"मैं हूँ छोटे राजा ! जतन...."

इतना कहकर छाया अन्धकार में विलीन हो गई।

कमल समझ गया कि वह निरापद नहीं है। उसके रक्षक पास ही उपस्थित हैं। कमल पुनः चारपाई पर लेट गया। काफी रात तक वह जागता रहा। अर्ध रात्रि में धीरे-धीरे उसकी आँखें झपने लगीं।

सहसा दरवाजे पर थपकी की आवाज सुनकर, वह चारपाई पर उठकर बैठ गया। उसका हृदय आशंका से भर उठा। कौन है? कौन हो सकता है, जो इतनी रात गये उसका दरवाजा खुलवाना चाहता है?

कमल ने निश्चय कर लिया कि वह दरवाजा नहीं खोलेगा। पुनः दरवाजे पर थपकी की आवाज पड़ी।

कमल चारपाई पर से उतरकर खड़ा हो गया। दरवाजे की ओर बढ़ा। हृदय में महान आशंकायें उठ-बैठ रही थी। धीरे से उसने किवाड़ खोला तो चौंक कर रह गया। बाहर राजमणि खड़ी थी, हाथ में दूध से भरा हुआ गिलास लिए। दरवाजा खुलते ही शीघ्रता से राजमणि भीतर आई। सावधानी से दरवाजा बन्द किया और हाथ का गिलास ताख पर रख दिया।

कमल ने देखा—राजमणि की आँखें रोते-रोते सूज गई हैं।

आग दोनों ओर सुलग रही थी।

"राजमणि !...." धीरे से बोला कमल।

"कहिये !..." उसकी आवाज रो रही थी।

"तुम इतनी रात को मेरे पास क्यों आई हो, राजमणि ?"

"दिल नहीं माना, छोटे राजा !..." राजमणि बोली।

"कोई देख लेगा तो क्या कहेगा, रानी ?" कमल ने आगे बढ़कर राजमणि का हाथ पकड़ लिया और उसे अपने पास चारपाई पर बिठा लिया।

"कहने दो, छोटे राजा ! देखने दो सबको !...." राजमणि रुद्ध कण्ठ से बोली।

दोनों कुछ देर तक चुप रहे। बाहर रात्रि की नीरवता साँय-साँय कर रही थी और अन्दर—दोनों के हृदय में तीव्र स्पन्दन हो रहा था।

"आपने आज खाना क्यों नहीं खाया, छोटे राजा ?" विकल वाणी में राजमणि ने पूछा।

"खाने की इच्छा नहीं थी....इसके अतिरिक्त तुम्हारे पिता की बातों ने मुझे व्यथित एवं अव्यवस्थित कर दिया था।" कमल ने कहा।

"क्या कहा था उन्होंने ?...."

"मुझे तुम्हारे पास जाने से मना कर दिया था।" कमल बोला।

"उन्होंने मुझे भी मना किया था ..." राजमणि ने कहा—"इसलिए इस समय छिपकर आपके पास आई हूँ। मैंने सोचा, आप बगैर खाये-पिये सो जायेगें....यदि सो जाते तो मुझे बहुत दुःख होता।"

"क्या तुम्हारे हृदय में मेरे लिए इतना प्यार है, राजमणि ?...." कमल ने प्रेमपूर्ण स्वर में पूछा।

"काश ! आप किसी का हृदय चीरकर देख सकते !...." कहकर करुण आँखों से उसने कमल की ओर देखा।

"कुछ समझ में नहीं आता कि तुम्हारे पिता में इतना परिवर्तन अकस्मात कैसे हो गया ?...." बोला कमल।

"पिताजी की भंगिमा आज बहुत भयंकर दिखाई देती थी, छोटे राजा ! मेरा हृदय भयभीत हो उठा था।"

"तुम्हारे भय का कारण ?"

"आज पिताजी मुझसे उखड़ी-उखड़ी सी बातें कर रहे थे...." राजमणि बोली।

"बताओ न, क्या कहते थे वे ?...."

"कहते थे कि आप दुश्मन के बेटे हैं..."

"दुश्मन का बेटा !...." चौंक कर बोला कमल—"यह विचार उनके दिल में कैसे आया राजमणि ?"

"यह तो वही जानें !"

"जहाँ तक मुझे मालूम है, तुम्हारे पिता और हमारे पिता हमेशा से मित्र रहते आये हैं—फिर यह शत्रुता की बात कहाँ से पैदा हो गई ?...." कमल बोला।

"मैं यह सब नहीं जानती, प्राणेश्वर !...." राजमणि बोली—"मगर मेरा हृदय कह रहा है कि आप पर जल्दी ही कोई विपत्ति आने वाली है। आप कल प्रातःकाल ही यहाँ से चले जायें। ईश्वर करे यह रात सकुशल व्यतीत हो...."

आशंका से भयभीत होकर रोने लगी राजमणि।

"रोओ मत राजमणि !...." कहकर कमल ने उसके मांसल

शरीर को अपने अंक में समेट लिया—"मुझपर कोई विपत्ति नहीं आयेगी। मैं तुम्हारे लिए जिन्दा रहूँगा। मैं कल यहाँ से प्रस्थान कर दूँगा।"

"मगर मेरा क्या होगा, छोटे राजा ?···बोली वह—"आपके वियोग की आग मेरा शरीर जला डालेगी। यह जलन मैं सहन न कर सकूँगी, देव !··"

"मैं अपने माता-पिता से आज्ञा लेकर शीघ्र ही किसी रात को छिपकर आऊँगा और ले चलूँगा तुम्हें····किसी को खबर भी न हो पायेगी। बाद को तुम्हारे पिता या भाई मेरा कुछ भी न कर सकेंगे।"

मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगी····" राजमणि बोली—"आप भूखे हैं। थोड़ा सा दूध पी लीजिए।"

राजमणि उठी। गिलास का दूध लाकर कमल के होठों से लगा दिया।

कमल ने इन्कार नहीं किया।

"अब मुझे जाना चाहिए !····" बोली राजमणि।

अन्तिम बार दोनों प्रेमी आलिंगन-पाश में बंध गये। एक मादक ध्वनि राजमणि के अधरों पर हुई। इसके बाद वह चली गई। कमल ने भीतर का दरवाजा बन्द कर लिया।

कमरे की खिड़की अब तक खुली हुई थी और उससे ठण्डी ठण्डी हवा आ रही थी। कमल ने उठकर खिड़की बन्द करना चाहा।

"खिड़की खुली रहने दो, छोटे ठाकुर !····" पास ही कहीं से आवाज आई—"और आप निश्चिन्त होकर आराम करें। हम सब लोग पास ही हैं····"

कमल समझ गया कि जतन का गिरोह उसके पहरे पर है। अतः वह चारपाई पर जाकर लेट गया।

शीघ्र नींद के आवेश ने उसे अचैतन्य कर दिया। फिर रात में कोई घटना न घटी।

दूसरे दिन सुबह होते ही वह उठा।

वहाँ से चल देने की तैयारी करने लगा। नित्य की भाँति आज

भी मेंहदी हवेली में दूध लेकर आई। जब दूध देकर लौट रही थी, तो गलियारे में गोपाल को खड़ा देखकर वह चौंक पड़ी। गोपाल उस समय लोलुप दृष्टि से उसकी ओर देख रहा था। जब वह पास आई तो उसने झपट कर उसका हाथ पकड़ लिया।

"मेंहदी ! मेरी रानी !...." बोला वह कामुक स्वर में।

"मुझे जाने दो, ठाकुर ! कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ?" मेंहदी प्रार्थना भरे स्वर में बोली।

"यहाँ कोई नहीं देख सकेगा, मेंहदी !...." गोपाल बोला— आओ, आज हम तुम जवानी की नाव पर चढ़कर जवानी का आनन्द-उपभोग करें...."

कहकर गोपाल ने कस लिया मेंहदी के पुष्ट शरीर को।

मेंहदी के मुख से अनायास ही एक तेज चीख निकल पड़ी।

उसकी चीख कमल के कानों से टकराई। वह लपककर बाहर आया। देखा, गोपाल के बाहुपाश में मेंहदी घायल चिड़िया की तरह छटपटा रही है। कमल के पैर तेजी से आगे बढ़े।

उसने गोपाल का गला पकड़कर उत्तेजित स्वर में कहा—"इसे छोड़ दो गोपाल ठाकुर !...."

गोपाल ने चौंककर उसे छोड़ दिया। मेंहदी भाग खड़ी हुई।

गोपाल ने अग्नेय नेत्रों से कमल की ओर देखा। तड़पकर बोला—"तुम सांप से खेल रहे हो, कमल ठाकुर !"

"कोई हर्ज नहीं...." कमल ने कहा—"मैं साँप के जहरीले दाँत तोड़ने की सामर्थ्य रखता हूँ...." !

दोनों उत्तेजित हो उठे।

गोपाल बोला—"दाँत तोड़ दोगे।....मेरे घर में आकर मुझी से सीनाजोरी !....तुम्हारी इतनी हिम्मत बढ गई है !"

गोपाल ने कमल को धक्का दिया। देखते-ही-देखते पुराना वैमनस्य जाग्रत हो उठा। दोनों आपस में गुँथ गये।

"तुम बार-बार मेरे रास्ते में आते हो, कमल ठाकुर ! क्या तुमने कायर समझ लिया है मुझे !" जोर लगाता हुआ गोपाल बोला।

"मैं तुम्हें कायर ही नहीं, अत्यन्त निकृष्ट समझता हूँ...." उसे नीचे पटकने का प्रयास करता हुआ कमल बोला—"औरतों पर कुदृष्टि डालने वाला पशु से भी निकृष्ट होता है, गोपाल ठाकुर !...."

"मैं तुम्हारी जबान ऐंठ दूँगा, अगर तुम ऐसी बातें मुँह से निकालोगे...."

"मैं तुम्हारे हाथ पैर तोड़ दूँगा...."कमल चिल्लाकर बोला—"बड़े ठाकुर का बेटा हूँ मैं—तुम्हारी नस-नस मरोड़ दूँगा।"

"यह क्या हो रहा है ?...."जगदीश मौके पर पहुँचकर बोला—"अलग हो जाओ तुम लोग।"

हाँफते हुए दोनों एक दूसरे से अलग हो गये।

जगदीश की मुखाकृति पर क्रूरता नर्तन करने लगी थी।

उसने कमल की ओर घृणा एवं क्रुद्ध दृष्टि से देखा।

"तुम दोनों क्यों उलझ रहे थे ?"

उसने गोपाल की ओर देखकर पूछा।

"पिता जी..."

"तुम दोनों लड़कर अपनी जान देना चाहते हो क्या ?"

जगदीश ने आग्नेय नेत्रों से पुनः कमल की ओर देखा और बोला—"कमल ठाकुर, बात क्या है ? तुम दोनों इस तरह क्यों लड़ रहे थे ?"

"ठाकुर साहब !...." कमल बोला—"गोपाल ठाकुर हमारे गाँव की ग्वालिन मेंहदी को आवेष्ठित कर उसका सतीत्व नष्ट करने की चेष्टा कर रहे थे—जबरदस्ती !"

"चुप रहो...." गरज कर बोला जगदीश—"बड़े-बूढ़ों से ऐसी बातें करते हुए शर्म आनी चाहिए तुम्हें ?... गोपाल ने उसे आवेष्ठित कर लिया था इस पर मैं विश्वास नहीं कर सकता।"

सुनकर कमल उनकी ढिठाई पर उत्तेजित हो उठा। कहने लगा—"ठाकुर साहब ! आप विश्वास करें या न करें, मैंने जो कुछ कहा है वह सच है। मेंहदी मेरे गांव की है और अपने सामने मैं उसका अनिष्ट होते नहीं देख सकता था।"

"वह तुम्हारे गाँव की है ?" घृणायुक्त स्वर में बोला जगदीश— "मगर इस समय तो वह तुम्हारे गाँव में नहीं !....वह मेरे गाँव में है और यहाँ होने वाली किसी भी घटना में हस्तक्षेप करने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं...."

इस समय जगदीश के मुँह से उसकी द्वेष-भावना बोल रही थी, तभी उसने बेटे का पक्ष लिया था।

"अनुचित कार्य में हस्तक्षेप करना हर व्यक्ति का कर्तव्य है, ठाकुर साहब !...." दृढ़ स्वर में कमल ने कहा। जगदीश के प्रति उसके हृदय में भी तीव्र उपेक्षा का भाव आ गया था।

"ठाकुर ! क्या तुम नहीं जानते कि जमींदारों की जवानी, सौ पचास घर बिगाड़ कर दम लेती है !" जगदीश बोला।

"वे जमींदार आप ही जैसे होंगे, ठाकुर साहब !" कमल ने मुँहतोड़ उत्तर दिया।

"और तुम्हारे जैसे नहीं, तुम्हारे बाप जैसे नहीं...." चिल्लाकर बोला जगदीश—"मेंहदी पर तुम अपना हाथ साफ कर रहे थे और जब गोपाल ने रोका तो बात बनाने लगे।"

"आप मेरा अपमान कर रहे हैं, ठाकुर साहब !"

"मुझे तुम्हारे अपमान की परवाह नहीं और न तुम्हारे बाप की परवाह करता हूँ मैं..."

"एक मामूली जमींदार ही ऐसी बातें कर सकता है, ठाकुर !.... बड़े राजा के पैर की धूल भी नहीं हो तुम। उनके एक अदने इशारे पर तुम्हारी शान धूल में मिल जायगी...." तड़पकर बोला कमल।

"चले जाओ यहाँ से...." जगदीश ने पैर पटक कर कहा—"जो कुछ करते बने कर लेना। खाने को न मिले तो घास छीलने चले आना यहाँ।"

"ठाकुर !...." कमल दाँत पीसकर बोला—"तुमने आग को छेड़ा है। अगर शेखी न मिटा दी, तो बड़े ठाकुर का बेटा नहीं..."

पैर पटकता हुआ कमल बाहर चला गया। पालकी तैयार थी। तुरन्त चढ़कर करमपुर की ओर रवाना हो गया। गाँव से बहुत दूर

आ चुकने पर जतन तीस लठैतों के साथ आ पहुँचा और पालकी के साथ-साथ चलने लगा।

कमल और जगदीश का झगड़ा राजमणि ने भी देखा था और वह इस समय अपने कमरे में चारपाई पर गिर कर फूट-फूट कर रो रही थी।

जगदीश भी इस झगड़े से अस्त-व्यस्त हो उठा था, परन्तु उसे इस बात की खुशी थी कि कल ही उसने जंगी को कमल की हत्या के लिए तैनात कर दिया है आज जब कमल की पालकी गाँव से कोस भर आगे चली जायगी तो जंगी और उसके खूँखार आदमी रक्त की नदी बहा देंगे।

व्यग्र भाव से जगदीश अपने कमरे में टहल रहा था। उसी समय जगी हाँफता हुआ आया।

'काम हो गया, जंगी !''—जगदीश ने उतावली के साथ पूछा।

''नहीं ठाकुर !...'' हताश स्वर में जंगी ने कहा।

''क्यों ? ..क्या तुम बड़े राजा के प्रभाव से डर गये ?''

''नहीं ठाकुर !....'' जंगी बोला—''उसकी पालकी के साथ काफी हथियारबन्द लठैत थे। छेड़खानी करके कौन मुफ्त में जान गवाँता .. हम लोग केवल दस ही आदमी थे।''

''एक मामूली काम भी तो तुमसे न हो सका, जंगी ?''

''चिन्ता न करो, ठाकुर ...'' करमपुर जाकर उसकी हत्या करूँ, तब समझना कि जंगी है कोई काम का आदमी।''

जगदीश कुछ न बोला। बेचैनी से मस्तक पर चुकचुका आये पसीने को पोंछकर वह भीतर चला गया।

६

बड़े राजा चौपाल में बैठे हैं।

उनके सामने ही सैकड़ों की संख्या में हिन्दू-मुसलमान एकत्रित हैं।

"कहो कल्लन मियाँ, अच्छे तो हो ?"--बड़े राजा ने पूछा ।

"आपकी दुआ से सरकार, अच्छा हूँ" कल्लन ने कहा ।

"तुम्हारी मस्जिद तो बन रही न !"

"उसी सिलसिले में तो आया हूँ, बड़े राजा...." कल्लन मियाँ बोले—"बात बड़ी खौफनाक है। कैसे कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता ?"

"साफ-साफ कहो, डरने की कोई बात नहीं ।" ठाकुर बोले ।

"आजकल मस्जिद का काम बन्द है, सरकार !...." हिचकिचाते हुए कल्लन मियाँ ने कहा ।

"क्यों ? क्या मुसीबत आ पड़ी ।"

"यहाँ जो अंग्रेज साहब आया है, उसने अपना बँगला बनवाना शुरु कर दिया है...." कल्लन मियाँ बोले—"सारे मजदूरों को उसने दूनी-तिगुनी मजदूरी की लालच देकर, अपने काम में लगा लिया है ! हमें मजदूर नहीं मिल रहे हैं...."

"यह बात है !...."

बड़े ठाकुर का मुख गम्भीर हो उठा। वे कुछ सोंचने लगे ।

"तुम क्यों आये हो सुबराती ?" ठाकुर ने दूसरे मुसलमान से पूछा ।

"बड़े राजा...." सुबराती बोला—"साहब ने मिल के अच्छे-अच्छे कपड़े लाकर सस्ते दामों में बेचना शुरू कर दिया है। हमारे मोटे कपड़े कोई पूछता नहीं। आजकल सभी करघे बन्द पड़े हैं, सरकार !....हमारे बाल-बच्चे भूखों मर रहे हैं।"

ठाकुर चिन्ता में पड़ गये ।

"तुम कैसे चले, दमड़ी साहू ?" ठाकुर ने पूछा ।

"सरकार ! मैं तम्बाकू बनाने का काम करता था, मगर आजकल वेकार हो गया हूँ ।" दमड़ी साहू ने कहा ।

"क्यों ?...."

"साहव ने बीड़ी और सिगरेट लाकर गाँव वालों में मुफ्त बाँटना शुरू कर दिया है—अब कोई तम्बाकू नहीं लेता ।"

ठाकुर के चिन्तित मस्तिष्क पर कई रेखाएँ उभर आईं।

'तुम्हें क्या कष्ट है दुक्खी चमार ?"

"बड़े राजा ..." दुक्खी बोला—"मेरे चमरौधे जूते अब कोई नहीं पहनता। साहब ने शहर से अच्छे-अच्छे जूते-चप्पल लाकर बेचना शुरू कर दिया है। वे देखने में सुन्दर और सस्ते हैं...."

इस प्रकार वहाँ के सब लोगों ने बड़े ठाकुर के सामने अपना-अपना दुखड़ा कह सुनाया। बड़े ठाकुर समझ गये कि इस अंग्रेज का पदार्पण किसी-न-किसी दिन उनके गाँव में अशान्ति अवश्य फैलायेगा। आज उन्हें अपने कारिन्दे की बात याद आ रही थी।

परन्तु करते क्या ? विवश थे। तीर हाथ से छूट चुका था। रोजगार के नाम पर वह साहब गाँव की सारी कला का विनाश कर रहा था। गरीबों के बच्चे रोजी न रहने से बिलबिला रहे थे।

इसमें सारा अपराध बड़े ठाकुर का था। उन्हीं ने तो उस साहब को पैर जमाने के लिए जगह दी थी—और अब वह पैर पसारते-पसारते सोने की तैयारी भी कर चुका था।

आशंका से ठाकुर का बदन सिहर उठा। उन्होंने पास ही खड़े हुए लठैत से साहब को बुला लाने का संकेत किया।

थोड़ी देर में साहब आया तो सब हड़बड़ा कर उठ खड़े हुए। गोरी चमड़ी का प्रभाव ही ऐसा था कि उन लोगों को उठकर उसका स्वागत करना पड़ा।

साहब ठाकुर के पास आकर बैठ गया। बोला—"आपने मुझे याद किया है !"

"देखिये ! मेरे गाँव की यह प्रजा आपके रोजगार से पंगु हो गई है...." ठाकुर ने एकत्रित लोगों की ओर संकेत कर कहा।

"इन्हें क्या तकलीफ है ?"—साहब ने पूछा।

बड़े ठाकुर ने देखा कि अब साहब की वांणी और व्यवहार में वह नम्रता नहीं रह गई है जो पहले थी। अब उसमें वैभवजनित ऐंठ आ गई थी।

"तकलीफ की बात पूछते हैं आप ! मुझे यह बताइये कि गाँव के

सारे मजदूरों को अपने काम में क्यों लगा लिया है आपने ?" अधिकारयुक्त स्वर में ठाकुर ने पूछा।

"इसमें तो उनका ही फायदा है...." साहब बोला—"उन्हें काफी-से-काफी मजदूरी दे रहा हूँ। भला पैसा कौन ठुकराना चाहेगा, ठाकुर साहब ?...."

"पैसे के लिए इतनी लालच हमारे गाँव वालों में पहले कभी नहीं थी !....यह तो आप के आने से ही पैदा हो गई है....पहले तो गाँव वाले एक दूसरे का काम मुफ्त में कर दिया करते थे।"

"चाहे जो हो, मगर मैं यह जानता हूँ कि गरीबों को पैसे की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। बिना पैसे के आपस में एकता और भाईचारा सब बेकार है।"

"आप ने शहर से कपड़े लाकर जुलाहों का काम बन्द कर दिया है...." ठाकुर उत्तेजित स्वर में बोले—"बीड़ी और सिगरेट लाकर तम्काकू का रोजगार चौपट कर दिया है। जूते लाकर चमारों की रोजी छीन ली है...."

"मैं तो यहाँ रोजगार करने आया ही था, ठाकुर साहब !...." टामसन बोला—"और आपने मुझे रोजगार करने की इजाजत दी थी।"

"पहले भी तो हमारे गाँव में रोजगार होता था, मगर इतनी बेकारी कभी नहीं हुई।" ठाकुर बोले।

"आप के गाँव की बेकारी चन्द रोज के लिए...."साहब बोला—"थोड़े ही दिनों में मैं आपके सब आदमियों को काम दूँगा। आप घबड़ायें नहीं। इस बेकारी से मुझे भी दुःख है। मुझे अब तक मालूम न था, नहीं तो मैंने कोई तरकीब जरूर की होती।"

"मैंने सुना है कि आपने गाँव के किसानों से चार साल तक आप के हाथ गन्ना बेचने का कन्ट्राक्ट लिखवा लिया है !"

"यह सच है...." साहब बोला—"हम लोगों का सब काम लिखा, पढ़ी से ही होता है। हम आपकी प्रजा को धन देने आये हैं, उन्हें लूटने नहीं।"

"तो आप कब तक हमारे आदमियों को काम देंगे ?"

"बहुत जल्द...."कहकर उठ खड़ा हुआ साहब और चला गया।

उसके जाने पर कारिन्दा बोला—"बात तो वह बहुत लम्बी-चौड़ी करता है, मगर करेगा कुछ नहीं।"

"क्या तुम्हें अब भी शंका है, मुनीम जी !...."बड़े ठाकुर ने पूछा।

"क्या आपको विश्वास नहीं हुआ, बड़े राजा !...." बोला कारिन्दा "इसके आने का इतना कुपरिणाम तो आप देख चुके। अभी आगे देखिये क्या-क्या होता है ?...मेरी समझ से यह गाँव की सारी सुख-शान्ति भंग कर देगा।"

"एक बात और है बड़े राजा !"

"कहो मौलाना, क्या बात है ?"

"मुझे ऐसा जान पड़ता है कि यह साहब हिन्दू-मुसलमान के भाई-चारे को दफन कर देने पर तुल गया है...."

"तुम्हारे इस अनुमान का कारण ?"....पूछा ठाकुर ने।

"उसने मुसलमान मजदूरों को ज्यादा मजदूरी देना शुरू कर दिया है...." कल्लन मियाँ बोले—"कल उसने उनसे कहा था कि तुम लोग उस मुसलमानों की औलाद हो जिन्होंने हिन्दुस्तान पर वर्षों तक राज किया है। तुम्हें हिन्दुओं से दबकर नहीं रहना चाहिए। हिन्दू तुम्हारे पैरों की जूती के बराबर भी नहीं है।"

"ऐसा कहता था ?"—चौंक पड़े बड़े ठाकुर।

"जी हाँ बड़े सरकार !—"कल्लन मियाँ बोले "आजकल गाँव की हालत अजीब-सी हो रही है। हिन्दू और मुसलमानों के बीच तफरका (वैमनस्य) बढ़ता जा रहा है। एक दूसरे के बीच मनमुटाव की दीवाल खड़ी होती जा रही है...."

"यह तो चिन्ताजनक समाचार सुनाया तुमने, मौलाना ?...."बड़े राजा ने कहा—"ऐसा न हो कि जो गन्दगी शहरों तक ही सीमित थी, वह हमारे गाँव तक फैल जाय...."

"जब तक यह साहब यहाँ रहेगा, आपसी वैमनस्य बढ़ता ही

जायगा। कम कभी नहीं होगा।" कारिन्दा बोला।

"मैं इसका कोई उपाय सोचूँगा...." बड़े राजा ने कहा—"अब तुम लोग जा सकते हो।"

सब उठ खड़े हुए और ठाकुर को जुहार करके चले गये।

"देख लिया आपने !" कारिन्दा बोला—"इन सफेद कुत्तों पर विश्वास करना, स्वयं अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना है।"

"मारना नहीं, कुल्हाड़ी लग चुकी है पैर में, मुनीम जी !...." ठाकुर ने कहा—"अब तो लगी चोट की दवा ढूंढ़नी होगी।"

"ढूंढ़ना ही होगा सरकार ! नहीं तो आज उसने मुसलमानों को ज्यादा मजदूरी देकर अपनी ओर मिलाया है, कल वह हिन्दुओं की मजदूरी बढ़ाकर मुसलमानों में विद्रोह-भावना जाग्रत करेगा और तब भाई-भाई रोटी के एक टुकड़े के लिए आपस में ही लड़ मरेंगे...और दूर खड़ा वह निशाचर, अपनी लगाई हुई आग की लपटों का तमाशा देखेगा।"

"मेरे रहते ऐसा नहीं होगा, मुनीमजी !"

"बड़े राजा !..."कारिन्दा संयमित स्वर में बोला "आग बहुत जल्दी लग जाती है, मगर उसे बुझाने में देर लगती है।"

"मुनीम जी !"

"जी सरकार !"

"मस्जिद का काम रुक गया है...."ठाकुर बोले—"अपने कुछ लठैतों और आदमियों को वहाँ काम करने के लिए भेज दो। मैं नहीं चाहता कि उपासना-गृह के निर्माण-कार्य में विघ्न पड़े। यह विघ्न शुभसूचक नहीं है !...."

"मगर हमारे अनभ्यस्त आदमी कितना काम कर सकेंगे, बड़े-राजा ?..."

"कुछ-न-कुछ तो करेंगे ही...."ठाकुर बोले—"अगर मुसलमान मजदूर अपने मजहब के लिए काम करना छोड़कर एक विजातीय की गुलामी करने चले गये हैं, तो उनके भाई होने के नाते हमारा कर्तव्य हो जाता है कि उनके अधूरे काम को हम पूरा करें।"

"मगर..."

"तुम अभी हिन्दू मजदूरों के घर जाओ, उनसे कहो की उस साहब का काम छोड़कर मस्जिद में काम लगायें।" बड़े राजा ने कहा।

"मैं अभी जाता हूँ...."

कहकर कारिन्दा उठा और बाहर चला गया।

बड़े ठाकुर चिन्ता में निमग्न गद्दी पर बैठे रहे।

एक घण्टे में करिन्दा लौटा।

"क्या हुआ ?" ठाकुर ने आकुलता से पूछा।

"हिन्दू मजदूरों ने मस्जिद में काम करने से इनकार कर दिया है बड़े राजा !...." – करिन्दा बोला।

"क्या कहा उन्होंने ?"

"उन्होंने कहा कि जब मुसलमान अपनी मस्जिद का काम नहीं करते, तो हम क्यों करें ?"

"इतना विष भर गया है उन लोगों के हृदय में ?...." तड़पकर बोले ठाकुर—'उनके विचारों में इतना परिवर्तन कैसे हो गया, मुनीम जी ?"

"यह सब उसी साहब की करतूत है, बड़े ठाकुर ?" कारिन्दा ने कहा।

"मैं देखूँगा उस साहब को...." ठाकुर दाँत पीसकर बोले–"उसी ने हमारे गाँव में जहर फैलाया है ! नहीं तो किसकी मजाल थी कि मेरी आज्ञा टाल सके।"

वृद्ध ठाकुर हाँफने लगे।

उसका सारा शरीर क्रोध से काँप उठा।

उसी समय जतन आदि लठैतों ने वहाँ प्रवेश किया और जुहार करके खड़े हो गये।

"लौट आये तुम लोग !"

"जी हाँ, बड़े राजा !"

"कमल कहाँ है ?"

"वे भी हमारे साथ आये हैं।" जतन ने कहा।

"तब तक कमल भी आ गया। आगे बढ़कर उसने ठाकुर के पैर छुए।

"अमिलहा की सैर कर आये, छोटे ठाकुर !"—पूछा ठाकुर ने।

"हाँ पिताजी !...." खिन्न स्वर में कमल बोला।

बड़े ठाकुर ने लक्ष्य किया कि कमल का चेहरा तमतमाया हुआ है।

"कुशल तो है कमल !...." ठाकुर ने पूछा—"बहुत उदास दिखाई पड़ रहे हो !"

"जी पिताजी !...." बोला कमल—"अमिलहा के ठाकुर ने मेरा अपमान किया है।"

"अपमान !..." मुस्कुरा पड़े ठाकुर।

"जी हाँ मेरे साथ-साथ आपका भी अपमान किया है उन्होंने...." बोला कमल।

"अगर तुम्हारी कोई सराहना न कर सके तो क्या अपमान भी नहीं कर सकता, छोटे राजा ?...." ठाकुर व्यंगपूर्ण स्वर में बोले—"इतनी छोटी-सी बात को इतना महत्व देना ठीक नहीं।"

"मेरा कोई अपराध नहीं था, बड़े राजा ! आप जतन से सारी बातें पूछ सकते हैं !...." कमल बोला।

"क्या बात हुई थी, जतन ?" ठाकुर ने लठैत से पूछा।

"सरकार हमलोग आपकी आज्ञानुसार हमेशा गुप्तरीति से छोटे राजा के पास रहे...." जतन बोला—"जगदीश ठाकुर ने छोटे राजा की जान लेने का इरादा किया था...."

"जान लेने की !..." चौंककर उत्तेजित स्वर में बोले ठाकुर—"तुम सारी बातें साफ-साफ कहो, जतन !"

और जतन ने काफी बढ़ा-चढ़ा कर सब बातें ठाकुर को सुना दी। सुनकर क्रोध से दाँत पीसने लगे ठाकुर।

"उस बेईमान का इतना साहस !"

"पिताजी ! मैंने जगदीश के सर्वनास की प्रतिज्ञा की है...." कमल बोला।

"अच्छा किया बेटा !..." ठाकुर ने कहा—"वैसी परिस्थिति

में मैं भी वही करता। तुम घबड़ाओ नहीं। मैं जल्द ही जगदीश को ऐसा दण्ड दूँगा कि वह जीवन भर तक रोता रहेगा। मैं तो उसे क्षमा कर देना चाहता था, मगर अब दण्ड देना ही पड़ेगा। चींटी को जब पर निकल आते हैं, तो वह भी उड़-उड़कर बड़ों के सर पर बैठने लगती है...''

ठाकुर का क्रोध देखकर जतन और कमल, दोनों मन-ही-मन में अति प्रसन्न हुए।

''तुम जाकर आराम करो...'' ठाकुर ने कमल को आज्ञा दी—''समय आने पर जगदीश के दाँत तोड़कर रहूँगा।''

कमल और लठैतों के चले जाने पर ठाकुर उठे और हवेली के अन्दर आये।

ठकुराइन उस समय नहा धोकर रामायण का पाठ कर रही थीं।

''पूजा कर रही हो क्या, ठकुराइन !...'' ठाकुर ने पूछा।

''अब पूजा ही तो सहारा है, ठाकुर !....'' बोली ठकुराइन—''आओ बैठो !''

ठाकुर बैठते हुए बोले—''मैं पूजा तो करता नहीं, ठकुराइन !''

''तुम्हें पूजा करने की जरूरत ही क्या है ?....'' ठकुराइन ने कहा—''तुम तो अपनी प्रजा की भलाई में ही अपनी पूजा समझते हो। ब्रह्मचर्य का व्रत ग्रहण कर तुमने तो अपनी दुनिया बना ली, ठाकुर !....रह गई मैं ! मेरे लिए तो पूजा ही एक सहारा है !''

''अब इस पूजा का झंझट छोड़ो, ठकुराइन ! अब काम करने का समय आ गया है।''

''मैं तैयार हूँ, पर काम तो बताओ ठाकुर ?''

''कमल अमिलहा गया था—अभी थोड़ी देर पहले लौटा है....''

''कहाँ है वह ?....'' ठकुराइन ने पूछा।

''अपने कमरे होगा....'' ठाकुर ने कहा—''वहाँ जगदीश ने उसकी जान लेने का उपक्रम किया था और कमल ने उसके विनाश की प्रतिज्ञा की है....''

''उसका विनाश तो होना ही चाहिए ठाकुर !....'' ठकुराइन

क्रुद्ध होकर बोलीं—"मेरे हृदय में धधकती हुई प्रतिशोध की ज्वाला, अब मेरे लिए असह्य हो उठी है ..."

"तब तुम्हें संसार के सामने प्रकट होना पड़ेगा, ठकुराइन !...." ठाकुर कहने लगे—"कितने तुमसे सहानुभूति प्रकट करेंगे और कितने ही तुम्हारे चरित्र पर लाँछन लगायेगें, क्या तुम इन सबके लिये तैयार हो !"

"मैं तो बहुत पहले से ही तैयार थी, ठाकुर ! तुम्हीं मुझे अब तक रोकते आ रहे थे...."

"मैं सोंचता था कि जगदीश सुधर जायेगा ! उसकी लड़की को तुम्हारी बहू बनाकर मैं भी सुख की साँस ले सकूँगा...."

"और अमिलहा की जमींदारी जिसे उस दुष्ट ने मेरे पति की हत्या करके प्राप्त की है, उसके ही पास छोड़ देने का इरादा था तुम्हारा—है न ?" ठकुराइन ने व्यंग्य किया !

"तुम्हें किसी बात की कमी तो है नहीं, ठकुराइन ! अमिलहा से चौगुनी बड़ी मेरी यह जमींदारी भी तो तुम्हारी ही है...." ठाकुर ने कहा—"खैर ! उन बीती बातों को छोड़ो। अब जगदीश को नष्ट करने का संकल्प मैंने भी कर लिया है...."

"अब तुम क्या करना चाहते हो, बड़े राजा ?"

"मैं कमल को लेकर शहर की कचहरी में जाऊँगा...." ठाकुर कहने लगे—"वहाँ कमल की ओर से जगदीश पर धोखा और हत्या करने का अभियोग लगाकर उसपर दावा दायर करूँगा !"

"क्या मुझे भी चलना पड़ेगा ?"

"अवश्य, मगर अभी नहीं। मुकदमे की तारीख के दिन तुम्हारी आवश्यकता पड़ेगी...." ठाकुर बोले।

"कमल अबतक कोई भेद नहीं जानता, ठाकुर ! वह क्या कहेगा जब कचहरी जाऊँगी ?"

"मैं अभी उसे बुलाकर सब कुछ तुम्हारे सामने समझा दूंगा...." ठाकुर बोले—"अब बच्चे से कुछ छिपाकर रखना उचित नहीं।"

"सब कुछ जानकर अपने दिल में वह क्या सोचेगा, ठाकुर ?"

"वह समझदार लड़का है, ठकुराइन !" ठाकुर ने कहा।

"मगर जब उसे मालूम होगा कि तुम उसके पिता नहीं हो और उसके वास्तविक पिता की हत्या हो चुकी है, तो उसे कितनी मार्मिक व्यथा होगी ?"

"वह पीड़ा क्षणिक होगी, ठकुराइन। तुम यहीं रहो, मैं अभी उसे लेकर आता हूँ...."

ठाकुर बाहर चले गये।

थोड़ी देर बाद जब वह लौटे, तो उनके साथ कमल भी था।

कमल और ठाकुर चारपाई पर बैठ गये।

"बहुत तूफान मचाकर आया है अमिलहा में, क्यों कमल ?" ठकुराइन ने कहा।

"तुम मुझे अपराधी समझ रही हो माता जी !...." बोला कमल—"सारा अपराध तो उस बूढ़े जगदीश और उसके बेटे गोपाल का है...."

"और तेरा कोई कसूर नहीं है ?...." मधुर झिड़की दी ठकुराइन ने—"क्यों तू बिना किसी के पूछे अमिलहा चला गया था ?"

"माता जी !...."

"तुम भी तो उसे ही डांटने लगी, ठकुराइन...." ठाकुर हँसकर बोले—"कमल अपने आप थोड़े ही गया था, वहाँ तो जगदीश की बेटी राजमणि इसे खींच ले गई थी...."

कमल का चेहरा लज्जा से लाल हो उठा।

"तुम तो ठाकुर, बेटे का पक्ष लोगे ही...." ठकुराइन ने कहा।

हृदय का सारा स्नेह वाणी में घोलकर ठाकुर ने कहा—"कमल बेटा !...."

"आज्ञा पिताजी...."

"आज तुमसे एक ऐसी बात बताने जा रहा हूँ, जिसे सुनकर तुम्हें बहुत दुःख होगा, मगर वह बात बिल्कुल सत्य है...."

"कौन-सी बात है वह, पिताजी ?"

"यही की तुम मेरे बेटे नहीं हो...." ठाकुर ने कहा।

"तब किसका बेटा हूँ ?...." चौंककर बोला कमल।

"ठकुराइन के बेटे हो तुम... और तुम्हारे पिता थे अमिलहा के जमींदार स्वर्गीय विजय बहादुरसिंह !"

धीरे-धीरे बड़े ठाकुर ने सारी बात कमल को बता दी जगदीश का सारा कपट-व्यवहार कमल के समक्ष साकार हो उठा, मगर बड़े ठाकुर ने अपने और ठ ुराइन के प्रेम के विषय में उससे कुछ नहीं बताया।

कमल गम्भीरतापूर्वक सब सुन रहा था। सुनकर उसने दीर्घ श्वांस ली।

"कमल बेटा !...."ठाकुर सिक्त स्वर में बोले—"तुम मुझे अपना पिता समझते हो....और मैं तुम्हारा पिता हूँ भी ! विजय बहादुर ने तो केवल जीव की सृष्टि की थी, जीवात्मा का पालन-पोषण तो मैंने किया है। तुम इसी हवेली में पैदा हुए हो। मेरे सूने जीवन को तुम्हारी बचपन की किलकारियों ने गुञ्जारित किया था। सृष्टिकर्ता से पालनकर्ता का पद अधिक महत्वपूर्ण है। तुम वास्तव में मेरे बेटे हो कमल ! दुःख न करो....अब तुम बड़े हो चुके हो, न्यायानुसार अमिलहा के तुम्हीं अधिकारी हो....इस बात को हमें कचहरी में सप्रमाण उपस्थित करना होगा और तभी जगदीश के विनाश की तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होगी...."

"मैं तैयार हूँ, पिताजी !" कमल ने कहा।

धीरे-धीरे एक महीना बीत गया।

बड़े ठाकुर जगदीश पर मुकदमा चलाने के लिए कागज-पत्र तैयार करने में लग गये। वकीलों से राय लेने के लिए उन्हें कई बार शहर जाना पड़ा।

१०

जब मुकदमे की तैयारी समाप्त हो चुकी, तो एक दिन दावा दायर करने के लिए बड़े राजा कमल को लेकर कचहरी जा पहुँचे।

उधर अंग्रेज साहब का बंगला लगभग बन चुका था।

साहब अपनी कूटनीति से उस गाँव के हिन्दू तथा मुसलमानों में भेद-भाव की दृढ़ दीवाल खड़ी कर दी थी। कभी वह हिन्दुओं की मजदूरी बढ़ा देता तो मुसलमान हिन्दुओं से अप्रसन्न हो उठते—और कभी मुसलमानों की बढ़ा देता तो हिन्दुओं का हृदय विद्वेष से भर जाता। वह कभी हिन्दुओं के हाथ सस्ता सामान वेचता था और कभी मुसलमानों के हाथ !

गाँव के कला-कौशल तथा व्यापार को तो उसने पहले ही नष्ट कर दिया था—अब आपसी वैमनस्य के कारण, वहाँ वालों की सुख-शान्ति भी नष्ट कर रहा था।

उस कलाबाज की कला ने सभी को ंगु बना दिया था। सभी उस समय शैतान के आश्रित हो बैठे थे।

पहले तो उसने गाँव वालों का गन्ना ऊँचे दामों में खरीदा, मगर बाद को भाव आधे से अधिक गिरा दिया। लूटेरा लूट रहा था और ग्रामीण अपने को लुटते देख रहे थे, क्योंकि चार साल तक गन्ना बेचने का कन्ट्राक्ट कर चुके थे लोग।

अपने चातुर्य से साहब ने गाँव में दस-बीस विभीषणों की भी सृष्टि कर दी थी। वे लोग साहब की सेवा में करबद्ध खड़े रहते और साहब का बरदहस्त उसके सिर पर रहता था।

साहब की कुटिलता अब रंग ला रही थी। अब उसके हाथ में हमेशा एक हंटर रहा करता था, जो समय-समय पर मजदूरों की पीठ पर सटाक से जा पड़ता था।

मजदूर बेचारे क्या करते ? फूट ने उन्हें तवाह कर डाला था।

जब कोई मुसलमान साहब का हंटर खाता, तो हिन्दू प्रसन्न हो उठते और जब कोई हिन्दू पिटा जाता तो मुसलमान खुशी से उछल पड़ते।

स्नेह की दीवाल के दो टुकड़े हो गये।

दो शक्तियाँ अलग-अलग मार्ग पर अग्रसर हो रही थीं और उनपर एक तीसरी शक्ति अपना आधिपत्य जमा बैठी थी। यह तीसरी शक्ति अत्यन्त निर्बल थी, परन्तु उसमें नीति-निपुणता एवं

बुद्धि-चातुर्य विशेष था !

उस दिन शाम को—

जब हिन्दू मजदूर चले गये, तो साहब ने मुसलमान मजदूरों को रुक जाने के लिए कहा ! उनके रुक जाने पर, वह अत्यन्त आत्मीय ढंग से बोला—

"मेरे भोले मुसलमान भाइयों ! कल तक तुम इस देश के बादशाह थे और आज भिखारी वन बैठे हो... हिन्दुओं की गुलामी करते-करते तुम अपना अस्तित्व तक भूल गये हो। यहाँ आकर जब मैंने तुम्हारी दशा देखी तो मुझे बहुत दुःख हुआ। आज तुम्हारे ही भाई, शहरों में हिन्दुओं से पाकिस्तान की माँग कर रहे हैं और तुम यहाँ अंधेरे में भटक कर हिन्दुओं के जूते साफ कर रहे हो...."

"...."

गाँव के सब मुसलमान ध्यानपूर्वक साहब की बातें सुन रहे थे और अनुभव कर रहे थे कि साहब का कहना बिल्कुल सच है।

"तुम हिन्दुओं के जमीन में रहते हो..." साहब कहता गया—"हिन्दुओं के टुकड़ों पर अपनी जिन्दगी बसर करते हो। क्या तुम आजाद होना नहीं चाहते ?...क्या बाबर और औरंगजेब की औलाद आज अपनी सारी बहादुरी भूल बैठी है ?....भाइयों ! मुझे देखो, मैं उतनी दूर से आकर तुम्हें आजादी की सीख दे रहा हूँ, और तुम मुसलमान हिन्दुओं की गुलामी में इस तरह जकड़ गये हो कि अपने आप तक को भूल बैठे हो..."

"हम आपके साथ हैं– आप हमें रास्ता बताइए।" मुसलमान चिल्ला उठे।

"तुम पाकिस्तान का नारा बुलन्द करो, खून की नदी बहाओ, बहादुर बनो, तब गुलामी से तुम्हें आजादी मिलेगी...." साहब ने जल गई आग में आहुति छोड़ी—"आजादी सिर्फ चाहने से नहीं मिल जायगी। उसके लिए कुर्बानी करने की जरूरत पड़ेगी। अगर तुममें ताकत न हो, तो हमारा सहारा लो। हम तुम्हें पाकिस्तान दिलाने में मदद करेंगे। इन हिन्दुओं ने तुम्हें बरबाद कर दिया है। अगर तुममें

मर्दानगी है तो काफिरों के खून से आजादी हासिल करो। मैं हमेशा तुम्हारी पीठ पर तैयार मिलूँगा ..."

"हम लोग तैयार हैं..." सभी चिल्ला उठे—"आपका इशारा पाकर हम खून की नदी बहा देंगे...."

मुसलमानों पर जैसे खून सवार हो गया था।

"अभी खामोश रहो...." साहब बोला—"कुछ दिन और सब्र करो, मौका आते ही हम तुम्हें इशारा करेंगे....इस वक्त तुम लोग एक काम करो!..."

"कौन-सा काम ?"

"तुम्हारी मस्जिद अधूरी बनकर रुकी पड़ी है...." साहब ने कहा—"कल से तुम लोग उसमें काम लगा दो। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे खुदा को जगह अधूरी और सूनी पड़ी रहे! तुम लोगों की मजदूरी मैं दूँगा! मगर यह बात हिन्दुओं को मालूम न हो और न कल्लन मियाँ को ही मालूम हो सके...."

"ऐसा ही होगा..." सब एक साथ चिल्ला पड़े।

दूसरे दिन !

कल्लन मियाँ को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि सभी मुसलमान मजदूर काम पर लौट आये हैं। उनके मन में शंका उठ खड़ी हुई, क्योंकि हिन्दू मजदूर एक भी नहीं आये थे। इसके पहले हिन्दू-मुसलमान दोनों मस्जिद में काम करते थे।

फिर भी उन्होंने पूछ-ताछ नहीं की।

शाम को जब कल्लन मियाँ मजदूरों को मजदूरी देने आये तो उन्होंने मजदूरी लेने से इन्कार कर दिया, क्योंकि साहब ने उन्हें मजदूरी देने का वादा किया था।

उनके इनकार से कल्लन मियाँ और भी आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने फैल गई आँखों से पूछा—"तुम लोग मजदूरी लेने से इन्कार क्यों कर रहे हो ?...."

"अरे यह तो अपना काम है, मौलाना !..." मजदूर बोले—"अपने खुदा का घर है यह। हम मजदूरी नहीं लेगें। आखिर आप

भी तो इस मस्जिद को, हमारी इबादत के लिए ही बनवा रहे हैं ?'

कल्लन मियाँ इस सहृदयता के भीतर छिपे विष को नहीं भाँप सके। उन्हें अत्यधिक प्रसन्नता हुई गाँव के मुसलमानों में आज पहली बार मनुष्यता का संचार हुआ देखकर।

जिस समय यहाँ पर साहब की यह चाल कारगर हुई, उसी समय उसके बँगले पर एक दूसरी ही बात हो रही थी।

साहब ने हिन्दू मजदूरों को एकत्र किया था और उनसे कह रहा था—

"भाइयों ! आज मुझे तुम लोगों से महत्वपूर्ण बातें कहनी हैं। हिन्दुओं की प्राचीन वीरता, इतिहास के पन्ने-पन्ने पर अंकित है। तुम लोग उन आर्यों के सन्तान हो, जिनका लोहा सारा संसार मानता है। आज मुझे तुम्हारी दयनीय दशा देखकर आँखों में आँसू आ रहे हैं। तुम मुसलमानों को भाई समझते आ रहे हो, परन्तु यह भूल गये हो कि इन्हीं के पूर्वजों ने तुम्हारी स्वतन्त्रता का अपहरण कर भारत में मुसलमानी साम्राज्य की नींव डाली थी। इन मुसलमानों ने तलवार के बल पर अपने धर्म का प्रचार किया था। तुम्हारी बहू-बेटियों के साथ बलात्कार कर उन्हें अपना मजहब मानने के लिए मजबूर किया था। तुम लोग कायर हो। तुम्हारा खून ठण्डा पड़ चुका है। तुम अपनी बेइज्जती, अपना अपमान भूल गये हो। मुझे देखो, मैं विदेशी होते हुए भी तुम्हारा साथ दे रहा हूँ। तुम्हें उत्थान के शिखर पर चढ़ाना चाहता हूँ। मैंने अपने यहाँ से सब मुसलमान मजदूरों को निकाल दिया है।

अब मैं तुम्हारा हूँ। अगर तुमने बहादुरी के साथ कार्य किया तो तुम इन थोड़े से मुसलमानों को मौत के घाट उतार सकोगे !... बोलो ! क्या तुम लोग तैयार हो ?"

"हम तैयार हैं...." सदियों से भीरु बने हुये हिन्दुओं का स्वर गरज उठा था। साहब बोला—"मैं समय आते ही तुम्हें आगाह करूँगा अगर तुमने मजबूती के साथ हथियार पकड़ा, तो इस गाँव से मुसलमानों को नेस्तनाबूद कर दोगे..."

अपनी धूर्तता के लिए प्रसिद्ध अंग्रेज जाति से एक निकृष्ट व्यक्ति ने, वहाँ का वातावरण विषाक्त कर दिया। आग लग चुकी थी। लपटें उठनी शेष थी।

११

जगदीश के नाम कमल का दावा दायर हो गया !

जब पहले पहल जगदीश को अदालत का सम्मान मिला, तो वह एकाएक घबड़ा उठा।

तुरन्त ही अदालत की दौड़-धूप शुरू हो गई। अर्जी-दावे की नकल लेने पर जगदीश को सारा हाल मालूम हुआ। उसपर जैसे वज्र गिर पड़ा। तो कमल ही विजय बहादुर का लड़का है — अमिलहा का वास्तविक अधिकारी ! पछताने लगा जगदीश। क्यों नहीं उसने कमल की हत्या उसी समय कर दी, जब जंगी ने उसे संदेह दिलाया था ? इतनी गफलत में पड़ कर क्यों उसने अपने सिर यह आफत मोल ली !

क्षण के लिए उसे महसूस हुआ, जैसे फाँसी का फन्दा उसके सामने भूल उठा है और हवेली की दीवारें जैसे बन्दीगृह की भयावनी दीवारें बन गईं हैं।

उधर बड़े राजा भी चिन्ता से मुक्त न थे। आजकल उनके सामने कई चिन्ताजनक समस्यायें आ खड़ी हुई थीं साहब का प्रभाव बढ़ता जा रहा था—हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के प्राणघातक शत्रु बनते जा रहे थे—गाँव की सारी सुव्यवस्था एवं शान्ति नष्ट हो चुकी थी—और इस मुकदमें की झंझट तो सबसे बड़ी मुसीबत थी।

बड़े राजा इन्हीं सब चिन्ताओं में ग्रस्त रहते। उनका स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहता था। अथक परिश्रम ने उनके वृद्ध शरीर पर कुप्रभाव डालना प्रारम्भ कर दिया था।

वे जानते थे कि जगदीश जैसा भयानक व्यक्ति, मुकदमे से और भी भयंकर हो उठेगा और ठकुराइन तथा कमल की जान लेने का

जो-तोड़ प्रयत्न करेगा।

इसलिए आजकल हवेली में लठैतों का रात-दिन कड़ा पहरा रहता था। ठकुराइन को सावधान कर दिया था और कमल को अपने गाँव मे भी घूमने की मनाही थी। जब कभी बाहर जाता, तो उसके पास दस-बारह लठैत अवश्य रहते !

जगदीश इस समय चुटीला साँप हो रहा था और बड़े राजा ने उसका वार बचाने के लिये जो कुछ किया और कर रहे थे, वह उचित ही था।

बड़े राजा, कमल और ठकुराइन शहर आये थे। ठकुराइन पालकी में परदे के अन्दर बैठी थीं। चारो ओर लठैतों का पहरा था। बड़े राजा और कमल के साथ भी दो-चार लठैत थे।

न्यायाधीश आये, तो मुकदमा पेश हुआ।

पुकार होने पर सब यथा-स्थान आकर खड़े हो गये।

सब ने शपथ ग्रहण की।

"तुम्हारा नाम ?" पेशकार ने कमल से पूछा।

"कमल...."

"पिता का नाम ?"

"विजय बहादुर सिंह...."

"कुछ और प्रश्न पूछने के बाद न्यायाधीश ने कहा—"तुम अपना बयान दो !"

कमल अपना बयान देने लगा। जिस तरह उसके वकील ने उसे सिखलाया था उसी तरह वह सब कुछ कह गया। न्यायाधीश ध्यान-पूर्वक सुनते रहे। पेशकार लिखता रहा।

"गवाह पेश करो !" न्यायाधीश ने आज्ञा दी।

बड़े ठाकुर उठ खड़े हुए। बोले—"हुजूर ! मैं ही इस लड़के और इसकी माँ का संरक्षक हूँ। मैंने ही इसकी माँ की रक्षा की थी अतः इस मुकदमे का प्रमुख गवाह मैं हूँ ! जिस समय मेरी अवस्था पचीस वर्ष की थी, उस समय जवानी के जोश में आकर मैंने दिल का सौदा किया था, गभर मैं जिसे चाहता था, उसका एक और प्रेमी

था—अमिलहा का जमींदार विजय बहादुर ! अन्त में मेरी प्रेयसी ने विजय बहादुर के गले जयमाल डाल दी और मैं अपना टूटा दिल लेकर तड़पता रह गया..."

विपक्षी के वकील ने जिरह की—"विजयबहादुर की इस सफलता पर क्या आपके हृदय में विद्वेष-भावना जाग्रत नहीं हुई ?"

"नहीं !...." ठाकुर बोले—"पवित्र प्रेम में उपासना की भावना रहती है, विद्वेष की नहीं ।"

"आप असम्भव बात कर रहे हैं...." विपक्षी वकील ने कहा—"आप नहीं जानते कि प्रेम में निराश होकर मनुष्य हत्या तक कर सकता है !"

"नहीं, मैं ऐसा नहीं मानता...." ठाकुर ने कहा—"अगर यह सच भी हो, तो मैंने इसे झूठ कर दिखाया है ।"

"क्या यह नहीं हो सकता कि आप असफल प्रेम से क्रोधित हो उठे हों ?...." विपक्षी के वकील ने पूछा ।

ठाकुर का वकील तड़पकर न्यायाधीश से बोला—"माई लार्ड ! यह मेरे मुअक्किल का अपमान है । ऐसे प्रश्न पूछे जाने की आज्ञा न दी जाय...."

"पूछने दीजिये वकील साहब !...." ठाकुर बोले—"इन प्रश्नों की बौछार से मेरी महत्ता कम न होगी ।"

न्यायाधीश ने कहा—"गवाह को अपना बयान जारी रखने दिया जाय..."

"तो प्रेम की प्रबल आग छिपाये मैं अपने कार्य में निमग्न रहा...."कहने लगे ठाकुर—"अपनी प्रेयसी नीलमुखी के लिए कभी मैं रोया नहीं, तड़पा नहीं । हमेशा अपने दिल को मजबूत बनाये रखा । इस तरह दिन सरकते गये । जब मैंने सुना कि नीलमुखी का वैवाहिक जीवन अत्यन्त सुखप्रद है तो मुझे सन्तोष हुआ । विजयबहादुर मेरा मित्र था । कभी-कभी मैं उसके यहाँ जाया करता था ! वह मेरी बड़ी खातिर करता था । उस समय विजय बहादुर के कारिन्दा यह जगदीश ठाकुर थे । अमिलहा जाने पर अक्सर इनसे मेरी भेंट होती

थी, मगर मैंने इन्हें कभी अच्छा आदमी नहीं समझा....''

''इसका कारण ?''विपक्षी के वकील ने पुनः बाधा उपस्थित की।

''इनकी कार्य शैली मुझे पसन्द न थी....'' ठाकुर बोले ''ये प्रजा पर बहुत अत्याचार किया करते थे। दो-एक बार मैंने विजय बहादुर से इनके अत्याचार की शिकायत की थी, मगर वह हँसकर चुप रह जाते थे, क्योंकि जगदीश ठाकुर उसके रिश्तेदार थे...''

''मालूम होता है कि ठाकुर जगदीश शरण से आप बहुत पहले से ही जलते थे !'' विपक्षी वकील बोला।

''मेरी बात का गलत मतलब न लगाइये, वकील साहब !....'' ठाकुर ने कहा—''जगदीश ठाकुर के अनुचित कार्यों के लिए ही मैंने विजय बहादुर से इनकी शिकायत की थी, नहीं तो हमारी इनसे कोई दुश्मनी नहीं थी ...''

कहकर ठाकुर चुप हो गये।

''बयान जारी रहे, ठाकुर साहब...'' न्यायाधीश ने कहा।

''इस तरह साल दो साल और बीते...'' ठाकुर कहने लगे—''इसके बाद जब मैं एक दिन विजय बहादुर के यहाँ गया, तो उसने मुझे प्रसन्न मुद्रा में बताया कि उसकी ठकुराइन को गर्भ है...''

''क्या वे अक्सर आप से अपने दिल की बात कह दिया करते थे ?'' विपक्षी के वकील ने पूछा।

''हाँ, वे मुझसे कुछ नहीं छिपाते थे।''

''क्या उन्हें मालूम था कि आप उनकी पत्नी के प्रेमी रह चुके हैं ?....''

''नहीं !....'' ठाकुर बोले—''यह बात सिवा मेरे और ठकुराइन नीलमुखी के अन्य किसी को भी न मालूम थी....जब मैंने गर्भ की बात सुनी तो मुझे भी प्रसन्नता हुई। चार दिन वहाँ रहकर मैं फिर करमपुर लौट आया। उसके बीस दिन बाद ही सुना कि विजय बहादुर की मृत्यु हो गई है और ठकुराइन लापता हो गई हैं। मुझे महान दुःख हुआ। मैं दौड़ा-भागा अमिलहा गया। उस समय जगदीश ठाकुर जमींदारी की गद्दी सम्हाल चुके थे, क्योंकि विजय बहादुर का

कोई वारिस न था। मैंने अनुभव किया कि विजय बहादुर के मरने का इन्हें जरा भी शोक नहीं है। उस समय मेरी बातों का इन्होंने ठीक-ठीक जबाब भी नहीं दिया था....तब मैं जवान था, हृष्ट-पुष्ठ था इनकी उत्तेजित भावना देखकर दिल में तो आया कि इनका गला घोंट दूँ, मगर मैंने अपने को असंयत नहीं होने दिया। उस समय व्यर्थ के झगड़े में पड़ना मैंने उचित नहीं समझा। जब मैं घर लौटा, तो मेरा हृदय रो रहा था। ठकुराइन कहाँ होंगी? इस चिन्ता ने मुझे झकझोर दिया...और एक दिन —

× × ×

एक दिन अपनी चिन्ता से ऊबकर ठाकुर चन्द्रकिशोर नारायण सिंह शहर चले आये। सत्ताइस वर्ष की उनकी अवस्था थी, अल्प-आयु में ही वे दुनियादारी से विरक्त हो गये थे।

शहर की चहल-पहल ने उनके चिन्तित मस्तिष्क को कुछ विश्राम दिया। वे शहर की गलियों में निरुद्देश्य भाव से इधर-उधर घूम रहे थे, कि पास ही कहीं से दौड़ती हुई एक भिखारिन उनके पास आई।

उसके कपड़े फटे-पुराने थे, फिर भी दीनता के बीच उसकी जवानी का सौंदर्य झाँक रहा था। ठाकुर का पैर पकड़कर बोली — "मुझे बचाइये बाबू! इन गुण्डों से बचाइये मुझे...."

ठाकुर ने चौंककर उस युवती भिखारिन की ओर देखा, फिर देखा उन गुण्डों की ओर जो उसके पीछे-पीछे आ रहे थे। वे संख्या में चार थे। उसकी असमत लूटना चाहते थे।

"उठो ठकुराइन!" ठाकुर ने भिखारिन का हाथ पकड़कर उठाया। ठाकुर के स्वर और सम्बोधन से भिखारिन चौंक पड़ी। उसने आँखें उठाकर ठाकुर की ओर देखा और झट मुँह पर थोड़ा-सा घूँघट खींच लिया।

ये ठकुराइन नीलमुखी थीं।

जगदीश के भय से अपनी जान बचाये फिर रही थी।

उनकी दशा देखकर ठाकुर का हृदय हाहाकार कर उठा।

"तुमने अपने को यह क्या बना डाला, ठकुराइन...." करुण स्वर

में ठाकुर ने कहा।

"ईश्वर की यही मर्जी थी, बड़े राजा!" ठकुराइन बोली।

वे गुण्डे, ठाकुर की शक्ति का अनुमान लगाकर रफूचक्कर हो गये थे।

ठाकुर ठकुराइन को लेकर धर्मशाले में आये, जहाँ वे ठहरे हुये थे। उन्होंने ठकुराइन को स्नान करने के लिए कहा और उन्हें अच्छी सी धोती लाकर पहनने को दी। भोजन से निपटकर दोनों पास बैठे।

"तुम मुझे सब कुछ बताओ, ठकुराइन?"—ठाकुर ने कहा।

और ठकुराइन ने रो-रोकर सब कुछ कह डाला।

"तो इस तरह तुम्हें भागना पड़ा...."

ठकुराइन ने एक दीर्घ श्वांस छोड़ा और बोलीं—"मैं न भागती तो क्या करती? कुटिल जगदीश मेरा सतीत्व भंग कर मुझे मृत्यु के घाट उतार देता और तब अमिलहा पर निष्कंटक राज करता...."

"तुमने भाग कर अच्छा ही किया, ठकुराइन! परन्तु सीधे तुम्हें मेरे पास आना चाहिए था..."

"कौन मुँह लेकर तुम्हारे पास आती, ठाकुर?" बोली ठकुराइन—"मेरे ही कारण तो तुमने आजीवन अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की...."

"ठकुराइन!...." भींगे स्वर में बोले ठाकुर—"क्या तुम नहीं जानती थी कि दुनिया में अब भी एक ऐसा आदमी है, जो तुम्हारे लिए सब कुछ कर सकता है—अपनी जान भी दे सकता है!...मैं तुम्हारे लिए समाज की कटु आलोचना और संसार की सारी भर्त्संना प्रसन्नता-पूर्वक सहन कर सकता हूँ।"

"ऐसी जानकारी होती, ठाकुर! तो इतना दुःख क्यों उठाती!"

"अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है, ठकुराइन! अब भी तुम्हारे लिए मेरे घर का द्वार खुला है..."

"ठाकुर!...."

"तुम शंका मत करो, नीलमुखी!...." ठाकुर ने कहा—"मेरे चरित्र पर सन्देह की दृष्टि मत डालो। एक बार तुम्हें खोकर फिर पाने की आकांक्षा नहीं है मेरे हृदय में। तुम मेरे घर चलो, मैं तुम्हें

देवी का आसन देकर पूजा करूँगा। तुम्हारा यौवन, तुम्हारा सौन्दर्य मेरे लिए तृष्णा नहीं, उपासना की वस्तु होगी...."

"तुम महान हो ठाकुर ? मैं अत्यन्त क्षुद्र हूँ...." ठकुराइन बोली—"मैंने तुम्हारी महानता को पहले नहीं, अब समझा है और पछता रही हूँ...."

"पश्चाताप से ग्लानि बढ़ती है, ठकुराइन ! अपने पिछले कृत्य के लिए दुःख न करो, तुम मेरे साथ चलो...."

"दुनिया क्या कहेगी, ठाकुर ?"

"मुझे दुनियाँ की परवाह नहीं।" ठाकुर ने कहा

"लोग तुम्हारे चरित्र पर संदेह करेंगे।"

"करने दो ठकुराइन ! यदि तुम्हारा कुछ भी भला हो सके तो मैं दुश्चरित्र ही कहलाना अधिक पसंद करूँगा।"

"मेरे विषय में लोगों से क्या कहोगे, ठाकुर ?"

"तुम्हें अपनी पत्नी बताऊँगा...." ठाकुर बोले—"दुनियाँ की नजरों में हम तुम पति और पत्नी रहेंगे—मगर गृहस्थी की चहार-दीवारी में केवल मित्र !"

"क्या यह समाज स्वीकार करेगा ?"

"समाज का मैं ही कर्णधार हूँ, ठकुराइन ! मेरे इशारे पर समाज नाचता है। समाज के जीव साधनहीन व्यक्तियों की ओर उँगली उठा सकते हैं, मगर सम्पन्न व्यक्तियों के सामने उनकी उँगलियों पर नाचते हैं...."

"क्या इस समय जगदीश से बदला लेने का कोई साधन नहीं हो सकता ठाकुर ? ..." ठकुराइन ने पूछा।

"इस समय कुछ भी नहीं हो सकता..." ठाकुर बोले—"यह उसी समय होगा, जब तुम्हारी सन्तान जो इस समय तुम्हारे गर्भ में पोषित हो रही है, बालिग हो जायगी....।"

"तुम यह बात जानते हो, ठाकुर !...." ठकुराइन अपने गर्भ की बात सुनकर लज्जा से गड़ गई।

"हाँ, मैं जानता हूँ...."

"मैं अभी यह बात तुमसे कहने ही वाली थी, ठाकुर !...." बोली ठकुराइन—"सोचा, नहीं कहूँगी तो बाद में शायद तुम्हें मेरे चरित्र पर सन्देह होने लगे...."

"कैसी बातें करती हो, ठकुराइन !...." मधुर झिड़की दी ठाकुर ने—"देवी के चरित्र पर लाँछन कौन लगा सकता है ? तुम्हारे हृदय में ऐसा विचार कैसे आया, नीलमुखी ?...."

"मैं लज्जित हूँ तुम्हारे सामने ठाकुर !...."

"तुम्हारे गर्भ का यह जीव मेरे मित्र की अन्तिम निशानी है, ठकुराइन !...." ठाकुर ने कहा—"मैं उसे अपनी सन्तान समझूँगा। मेरे कलेजे का कोना उसके लिए ममत्व से भरा रहेगा...."

"तो गाँव कब चलोगे ?" पूछा ठकुराइन ने।

"आज ही !...."

"शहर क्या करने आये थे ?"

"हार्दिक व्यथा से ऊबकर यहाँ चला आया था...."ठाकुर बोले—"तुम्हें खोकर लगता था, जैसे मैंने अपने जीवन की सारी शान्ति खो दी है। अब तुम मिल गई हो, मैं भी स्वस्थ हो गया हूँ। तुम्हें पाकर मैं प्रसन्न हूँ। तुम मेरे पास रहोगी तो मेरे अव्यवस्थित जीवन में सरसता आ जायेगी—मेरी दुनिया ही बदल जायेगी, ठकुराइन !...."

"तुम अपनी शादी कर लो न ठाकुर !"

"शादी तो मेरी उसी समय हो गई थी ठकुराइन, जब मैंने तुमसे प्रेम किया था। क्या शादी बार-बार करता रहूँगा ?" करुण हँसी हँसकर बोले ठाकुर।

"क्या इन्सान दो शादियाँ नहीं करता ?"

"प्रेम ऐसी हेय वस्तु नहीं, ठकुराइन !"

ऐसी ही बातें होती रहीं।

"और दूसरे दिन, मैं ठकुराइन नीलमुखी को लेकर करमपुर लौट आया ..." ठाकुर कह रहे थे और न्यायाधीश सुन रहे थे—"रात के वक्त हमलोग लौटे थे। सुबह होते ही मेरी हवेली पर मेला लग गया। सभी एक मत थे कि मैं शहर से अपने लिए पत्नी लाया

हूँ। लोगों को मेरे प्रति शंका तो अवश्य हुई, मगर मेरे रोब के आगे किसी को कुछ कहने का साहस न हुआ। धीरे-धीरे सब काम सुचारु-रूप से चलने लगे। लोग पिछली घटनायें भूल गये। इस तरह ठकुराइन नीलमुखी मेरी पत्नी न होते हुए भी पत्नी घोषित हो गईं। सात महीने पश्चात उनके गर्भ से कमल का जन्म हुआ। मैंने उसे अपनी सन्तान समझकर पाला-पोसा। एक क्षण के लिए भी मैंने उसे यह मालूम न होने दिया कि मैं उसका पिता नहीं हूँ....इससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है....''

ठाकुर बैठ गये।

अब ठकुराइन की बारी आई। कमरे में एक चिक डाल दी गयी। उसी के अन्दर ठकुराइन जाकर बैठी। जगदीश धड़कते हुए हृदय से बस चिक की ओर देख रहा था।

ज्योंही ठकुराइन के मुख से आवाज निकली, वह गिरते-गिरते बचा। वह उसका स्वर पहचान गया था।

ठकुराइन ने करुण स्वर में अपना बयान दिया। विजय बहादुर की मृत्यु का वर्णन करते-करते वे रोने लगीं। स्वयं न्यायाधीश ने उन्हें धैर्य बँधाया।

और दूसरे दिन!

ठकुराइन का बयान समाप्त हो चुकने पर मुकदमा दूसरी तारीख के लिए स्थगित हो गया।

तारीख एक महीना आगे पड़ी।

१२

शाम हो गई थी।

हवेली के अपने निजी कमरे में बैठा हुआ कमल विचारों में निमग्न था कि उसी समय धीरे से कमरे का बाहरी दरवाजा खुला और एक युवती अन्दर आई।

उसे देखकर चौंक पड़ा कमल।

धीरे से बोला..."मेंहदी तुम !"

"हाँ छोटे राजा !...." मेंहदी बोली—"सबकी नजरें बचाकर आई हूँ। सोचा, कोई देख लेगा तो व्यर्थ तुम्हारी बदनामी होगी...."

"अमिलहा से कब आई तुम ?...." पूछा कमल ने।

"आज सुबह ही तो आई हूँ...."

"वहाँ का क्या हाल है ?"

"अच्छा ही है...." मेंहदी बोली—"राजमणि तुम्हारे प्रेम में दिन-रात तड़पती रहती है।"

"यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ, मेंहदी ?..."

"स्वयं राजमणि ने ही मुझसे कहा ..." मेंहदी बोली—"तुमने उसके दिल को जीत लिया है, छोटे राजा !...जब से आई हूँ, तुमसे मिलने का अवसर खोज रही थी ..."

"किसलिए मेंहदी !...." कमल ने पूछा—"क्या मेरी धृष्टता के लिये उलहना देने आई हो ?"

"नहीं छोटे ठाकुर !....मुझे जो निश्चय करना था, कर लिया है....अब तुम्हें क्या उलाहना दूँगी ? मैं तो स्वयं ही चाहती थी कि हमारा प्रेम का रिश्ता खतम हो जाय ...."

कहते-कहते मेंहदी का गला भर आया।

"फिर तुम्हारे यहाँ आने का कारण ?"

"मैं राजमणि का संदेश लेकर आई हूँ, छोटे राजा !" मेंहदी बोली—"तुम्हें प्यार करती हूँ तो प्यार का बलिदान भी करना जानती हूँ। यह भी जानती हूँ कि तुम इस समय राजमणि के हो रहे हो। अतः तुम्हारे व्यथित हृदय को शान्ति प्रदान करने में ही मैंने प्यार की महत्ता समझी..."

कहकर मेंहदी ने एक मुड़ा हुआ कागज कमल के हाथ पर रख दिया।

"यह क्या है ?...." पूछा कमल ने।

"राजमणि का पत्र !"

"क्या लिखा है इसमें ?"

वह कमल की मूर्खता पर हँस पड़ी।

"यह तो आप ही जानें ?..." बोली वह—"मुझे तो ये अक्षर अपनी भैंसों के समान काले दिखते हैं...."

अब कमल को भी अपनी मूर्खता का ज्ञान हुआ। लज्जा से सिर नीचा कर लिया उसने और पत्र खोलकर पढ़ने लगा। लिखा था—

मेरे देवता,

तुम यहाँ से रूठ कर चले गये तो मुझे कितना दुःख हुआ, यह मैं ही जानती हूँ। मेरे पिता से तुम्हारी अनबन थी, मगर मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था, जो मुझे जलती आग में भस्म होने के लिए छोड़कर चले गये और फिर खोज-खबर तक न ली। आज भी तुम मेरे मन-मन्दिर में विराजमान हो। तुम्हारी मादक स्मृति से मेरे जीवन के कण-कण में पीड़ामयी व्यथा भर गई है। मेरे नयनों के मधुर स्वप्नों में प्रकट होकर तुम क्रीड़ा करते रहते हो।

इतनी बेकली और बेचैनी मेरे हृदय में और कभी नहीं हुई थी। जानती हूँ, तुम मुझसे अप्रसन्न हो। हमारा विनाश करने की प्रतिज्ञा कर चुके हो। मुकदमा भी दायर कर दिया है—

मगर प्राण ! तुम अपनी दासी का विनाश क्यों कर रहे हो ? क्या इसी अपराध के कारण कि मैं उस पिता की पुत्री हूँ, जिसने आपके पिता के साथ विश्वासघात किया ?

छोटे राजा ! इस संसार में हर प्राणी एक दूसरे से सम्बन्धित है, परन्तु प्रत्येक का अस्तित्व अलग-अलग है। ऐसी दशा में तुम मेरे पिता के अपराधों का प्रतिशोध, मेरे तड़पते हुए हृदय से न लो। यही मेरी प्रार्थना है तुमसे।

मैं तुम्हारी याद में तड़प रही हूँ। पिता की हवेली मेरे लिए कारागार हो उठी है। तुम एक बार आओ। अपनी अमृतमयी वाणी से मेरे अन्तराल का कोना-कोना रसमय कर दो ! मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी।

किसी दिन, अर्द्धरात्रि की नीरवता में चुपके से तुम मेरे पास

आओ। मैं दुनिया की सारी मोहमाया त्यागकर, तुम्हारे साथ सुख-दुख का भागीदार बनने के लिए निकल पड़ूंगी। किसी को कुछ पता न चलेगा।

तुम आना। निष्ठुरता की ठोकरों से मेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े मत कर देना। किसी दिन ! आधी रात के समय ! समझ गये न ! बस ! तुम्हारी प्रतीक्षा में !

तुम्हारी ही—
राजमणि

पत्र पढ़कर एक दीर्घ श्वांस ली कमल ने।

"अब मैं चलूं, छोटे राजा !..." मेंहदी करुण स्वर में बोली। शायद अपना लुटता हुआ संसार देखकर वह विचलित हो उठी थी—"मैंने अपना काम पूरा कर दिया। राजमणि ने कहा था कि यह पत्र चुपके से उन्हें दे देना, सो मैंने तुम्हें दे दिया। अब मेरा कार्य समाप्त हुआ। आगे जब कभी मेरी आवश्यकता पड़े तो याद करना। मैं आप दोनों के सुख के लिए, हमेशा-हमेशा कुर्बानी करने को तैयार रहूँगी...."

इतना कहकर भाग गई मेंहदी।

अगर वह थोड़ी देर तक और वहाँ रुकती तो निश्चय ही रो पड़ती। दूसरा अवसर होता तो मेंहदी की इन मार्मिक बातों से कमल का कलेजा चलनी हो जाता, मगर इस समय तो वह पूर्णतया राजमणि के प्रेम-पाश में आबद्ध था।

मेंहदी के त्याग को समझ सकना उसके लिए असम्भव था।

वह बड़ी देर तक राजमणि का पत्र हाथ में लिए बैठा रहा।

प्रेमावेश में उसने कागज के उस टुकड़े को कई बार पढ़ा। उसे अनुभव हुआ जैसे उस पत्र के अक्षर-अक्षर से राजमणि की करुणा एवं अश्रुपूर्ण मुखाकृति झांक रही है।

उसने बुलाया है !

वह सन्तप्त है। वियोग की घड़ियाँ काट सकना असम्भव है उसके लिये।

वह जायगा....जरूर जायगा राजमणि के पास।

आज ही रात को चुपके से जायगा। किसी से नहीं पूछेगा वह। चाँदनी रात उसे रास्ता दिखायेगी और वह जल्दी ही अमिल्हा जा पहुँचेगा।

दृढ़ निश्चय से कमल की आँखें चमक उठी।

वह उठा और धीरे से कमरे के बाहर निकला।

अस्तबल में आया और एक हृष्ट-पुष्ट घोड़े पर जीन कसकर बाहर निकला। छलांग मारकर उसपर सवार हो गया और द्रुतगति से अमिलहा की ओर चल पड़ा।

उस समय अमिलहा में जगदीश अपने कमरे में बैठा था।

उसके सामने वह भयानक व्यक्ति जंगी उपस्थित था।

जंगी बोला—"अब क्या होगा ठाकुर ?...."

"घबड़ाने से काम नहीं चलेगा !...." जगदीश बोला—"मैं जानता हूँ कि तुम जितने संगदिल हो, उतने ही कायर भी हो...."

"ऐसा न कहो ठाकुर ! मैंने तुम्हारे लिए बहुत कुछ किया है...."

"उसका पूरा-पूरा बदला धन के रूप में मैं तुम्हें दे चुका हूँ, जंगी !...." जगदीश ने कहा—"तुम अपने अहसानों की याद दिला कर मेरे दिये रुपयों को मत भूलो...."

"अहसान को रुपयों से नहीं खरीदा जा सकता, ठाकुर !...." जंगी बोला—"मैंने अपना खून बहाकर तुम्हारे लिए जो-जो काम किये हैं, तुम्हारा रुपया वह काम नहीं कर सकता था !"

"रुपया ही तो सब कुछ है, जंगी ! उसी के लोभ में पड़कर ही तो मेरा साथ दे रहे हो तुम ..."

जंगी को जगदीश की यह बात बुरी लगी।

वह बोला—"मुझे धन की कमी नहीं है, ठाकुर !...जब मैं तुम्हारा काम करता हूँ तो पेट भरने के लिए रुपया चाहिए ही। मगर रूपयों से ही मेरे अहसानों का बदला नहीं चुक जायगा। अगर आज मैं बड़े राजा से जाकर मिल जाऊँ तो तुम्हें फाँसी पर लटकवा सकता हूँ, इनाम में बड़े राजा से दो-चार गाँव लेकर मौज कर सकता हूँ...."

"मैं जानता हूँ जंगी..." जगदीश बोला—"कि तुम सब कुछ कर सकते हो मगर यह नहीं कर सकते, मुझे धोखा नहीं दे सकते...."

"बातों की चोट बहुत खतरनाक होती है, ठाकुर !....इसकी चोट खाकर बहुतों का दिमाग बदल जाता है। तुम मुझपर व्यंग की बौछारें न छोड़ा करो...."

"मैं आवेश में आ गया था, जंगी !...." जगदीश बोला—"अपने ऊपर आई हुई विपत्तियों को देखकर मैं घबरा गया हूँ। इस समय तुम ही मेरे आधार हो। अगर तुम भी मेरा साथ छोड़ दोगे तो मैं कहीं का न रहूँगा, कुछ भी न कर सकूंगा ?..."

"ठाकुर ! शरीर में प्राण रहते मैं तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूँगा...." जंगी ने कहा—"पर तुम अपनी जबान से समझ-बूझकर बातें निकाला करो..."

"अब ख्याल रखूंगा जंगी ! अब यह बताओ कि करना क्या चाहिए ?"

"यह तो निश्चय हो गया कि ठकुराइन नीलमुखी अब तक जीवित हैं और कमल उनका ही बेटा है...ऐसी दशा में अब हम लोग कर ही क्या सकते, ठाकुर...."

"अभी तो केवल उनका ही बयान हुआ है, जंगी !"—जगदीश बोला—"हम लोगों का बयान अभी बाकी ही है..."

"तुम अपने बयान में क्या कहोगे ठाकुर ?"—पूछा जंगी ने।

"मैं वह बात कहूँगा, जो इस मुकदमे का पहलू ही पलट देगा...." जगदीश शान से बोला।

"क्या कहोगे तुम ?"

"मैं कहूँगा कि नीलमुखी के प्रेम से निराश होकर बड़े राजा के हृदय में विद्वेष की भावना जाग्रत हुई...."

"ऐसा कहोगे ठाकुर ?"

"हाँ....और कहूँगा कि बड़े ठाकुर के बहकावे में आकर नीलमुखी भी उसी तरफ हो गई और दोनों ने षड्यंत्र करके ठाकुर विजय बहादुर को विष दे दिया। क्योंकि वे अपने रास्ते से कंटक दूर करना

चाहते थे...''

''और क्या कहोगे ?''

''और कहूँगा कि यह विजय बहादुर का बेटा नहीं, ठकुराइन और बड़े राजा का पाप-पुत्र है...'' जगदीश बोला।

''वाह ठाकुर !'' हर्षित होकर उछल पड़ा जंगी—''तब तो मैदान मार लोगे तुम !....हैं ! यह कैसी आवाज ?''

बाहर से कोई खटका हुआ था, जिसे जंगी के सजग कानों ने सुन लिया था।

उस समय आधी रात व्यतीत हो चुकी थी।

''क्या है जंगी ''—पूछा जगदीश ने।

''कुछ आवाज आई है, ठाकुर !'' धीरे से बोला जंगी।

''खिड़की खोलकर देखो। आवाज न होने पाये।

''जंगी ने आहिस्ते से खिड़की खोली। अँधेरे में उसे एक घुड़सवार दिखाई पड़ा, जो घोड़े से उतर कर राजमणि के कमरे की ओर बढ़ रहा था।

''क्या बात है, जंगी ?....'' जगदीश ने पूछा।

जंगी ने होठों पर उँगली रखकर चुप रहने का इशारा किया और पास आकर देखने के लिए कहा।

जगदीश खिड़की के पास चला आया। उसने भी उस घुड़सवार को देखा।

'कौन है वह, जंगी ?''

''पता नहीं ठाकुर ! राजमणि के दरवाजे पर खड़ा है...'' जंगी बोला।

''तुम मेरे साथ आओ ?'' जगदीश ने कहा। चुपके से बाहर निकल कर दोनों राजमणि के कमरे की ओर बढ़े। जंगी ने हाथ में एक मजबूत लाठी ले ली।

राजमणि के कमरे में उस समय दीपक जल रहा था। वह जाग रही थी और चारपाई पर लेटी हुई बेचैनी से करवटें बदल रही थी।

कमल की दाहक स्मृति उसका पीछा नहीं छोड़ रही थी।

बाहरी दरवाजे पर धीरे से थपकी की आवाज सुनाई पड़ी। चौंककर उठ बैठी राजमणि और उस थपकी पर विस्मय करने लगी।

दरवाजे पर पुनः थपकी पड़ी। राजमणि ने शीघ्रता से उठकर दरवाजा खोला। देखा—उसकी मादक पीड़ा का आधार खड़ा था, साकार रूप में।

कमल था वह।

"मेरे प्राण !"...." दौड़कर लिपट गई वह कमल से।

"मेरी रानी !...." कमल ने उस फूल से शरीर को अपने वक्ष पर सम्हाल लिया।

"आ गए तुम ! आ गए मुझे रुलाने वाले निर्मोही, मुझे जलाने वाले दीपक ! मुझे तड़पाने वाले भँवरे !....आ गये तुम !"

"आ गया राजमणि !...अपने को सम्भालो तुम !"—कमल बोला।

"मुझे एकदम क्यों भूल गये थे, प्राण ?"

"तुम्हें भूल सकना असम्भव है, राजमणि !"

"तुम मुझसे रुष्ट तो नहीं हो, छोटे राजा !"

"कांटों का बदला फूल से नहीं लिया जाता, रानी !" कमल बोला—"काटें शरीर में चुभते हैं, परन्तु फूल की सुगन्ध हृदय का कोना-कोना सुवासित कर देती है...."

"मैं प्रसन्न हूँ ...तुम्हें देखकर मैं अपना सारा दुःख भूल गई हूँ !"

"राजमणि !..." कमल ने कहा —"समय बहुत कम है। किसी को पता लग गया तो हमारी खैर नहीं। अब इन काँटों का साथ छोड़, मेरे साथ चलो और मेरे हृदय सरोवर में खिलकर रोम-रोम को सुवासित कर दो...."

'मैं तैयार हूँ छोटे राजा ! इसी दिन की तो प्रतीक्षा कर रही थी...."

"चलो जल्दी करो...." कमल ने कहा।

वे दरवाजे की ओर तेजी से बढ़े—परन्तु दरवाजे पर जगदीश

को खड़ा देख दोनों स्तब्ध रह गये। कमल चौंक पड़ा। जगदीश ने जंगी के साथ कमरे में प्रवेश किया। भय से कमल का शरीर कम्पित हो उठा।

"चोरी करने आये थे, कमल ठाकुर ?...." तीव्र स्वर में बोला जगदीश—"मुझ पर झूठा मुकदमा दायर कर अब मेरी इज्जत लूटने आये हो ?...."

"...."

कमल निर्वाक खड़ा रहा। उसे इस आकस्मिक विपत्ति की आशंका न थी।

"अब तुम यहाँ से जीवित बचकर नहीं जा सकते, कमल !...." जगदीश बोला—"जंगी इस चोर को पकड़ लो...."

जंगी आगे बढ़ा।

कमल सचेत हो गया। उसने जंगी को पकड़ कर पीछे ढकेलना चाहा, मगर तब तक जंगी के हाथ की वजनी लाठी, तड़ाक से उसके सर पर जा बैठी। एक क्षण भी मौका न मिला। सर से रक्त की लाल धारा प्रवावित हो चली और बेहोश होकर कमल जमीन पर गिर गया।

जगदीश ने झुककर कमल की उँगली से उसकी सोने की अंगूठी निकाल ली। बोला—'अब ठीक है। इससे मेरा सब काम बन जायगा....तुम इसे घसीट ले जाओ जंगी। उस कोने के कमरे में बन्द करके ताला लगा दो...." इसके बाद मेरे पास आओ, मैं तुम्हें आगे का कार्यक्रम विधिपूर्वक समझाऊँगा..."

जंगी बेहोश कमल को उठाकर चला गया।

जगदीश राजमणि के सामने आया। उसकी आँखें क्रोध से जल रही थीं। "नादान छोकरी !...." गरजकर बोला वह—"मेरे मुँह पर कालिख लगाना चाहती थी !....जो मेरा घर उजाड़ रहा है, उसी का तू घर बसाने जा रही थी !"

चट्‌ट से एक तमाचा राजमणि के गालों पर पड़ा।

आँसू बह चले उसकी आँखों से।

ये आँसू चोट के नहीं, बेबसी के आँसू थे।

पैर पटकता हुआ जगदीश कमरे से बाहर निकल आया। बाहर आकर स्वतः बड़बड़ाया—"कमल तो मेरे पंजे में आ ही चुका है, अब उसकी अंगूठी से ठकुराइन पर अधिकार करूँगा ! अब मेरा रास्ता साफ है..."

और वह अट्हास कर उठा।

उसके भीषण अट्टहास से राजमणि का कलेजा कांप उठा।

१३

आज बड़े राजा के मुख पर जितनी बेचैनी थी, उतनी कभी नहीं थी। वे व्यग्र भाव से ठकुराइन के कमरे में टहल रहे थे। ठकुराइन नीचे जमीन पर बैठी थीं, मगर उनका चेहरा अश्रुपूर्ण था।

"अब क्या होगा, ठाकुर ?"—रोती हुई आवाज में पूछा ठकुराइन ने।

"लगता है ठकुराइन, जैसे हमलोग मंजिल की छोर तक पहुँचकर भी, उससे दूर हुए जा रहे हैं...." ठाकुर बोले..."कमल का इस तरह लापता होना, हमारी योजना की असफलता का सूचक है...."

"कमल कहाँ चला गया ?"

"यही तो मैं भी सोच रहा हूँ, ठकुराइन !...." ठाकुर कहने लगे—"वह जहाँ कहीं जाता था, हमेशा मुझे सूचित करके जाता था। मैंने उसे इधर-उधर घूमने के लिए मना कर दिया था, फिर भी वह चला गया।"

"वह अपने से कभी न गया होगा, बड़े राजा ?"

"वह अपने से ही गया है, ठकुराइन ! घुड़साल का एक घोड़ा लापता है।"—ठाकुर बोले।

"हे भगवान ! कहाँ होगा वह ?....मेरा बच्चा कहाँ होगा ?...." रोने लगीं ठकुराइन।

"धीरज धरो, नीलमुखी ! विपत्ति के समय धैर्य से काम लेना बुद्धिमानी है ।"

"तुम जल्दी से कुछ करो, ठाकुर !....कमल को वापस लाने के लिए कोई उपाय सोंचो....मेरा कलेजा धड़क रहा है... अपनी जान दे दूँगी मैं....मैं उसके बिना जी नहीं सकती ।"

"तुम्हें यों ही जान न देने दूँगा ठकुराइन !...." ठाकुर बोले— "आज तक जिस पौधे को स्नेह-जल से सींच-सींच कर हरियाली प्रदान की है, उसे अनायास ही सूख जाने नहीं दूँगा....मैं कमल की खोज में जाऊँगा ।"

ठकुराइन बोलीं—"कहाँ जाओगे ठाकुर ?....कहाँ जाकर उसकी खोज करोगे ?"

"अमिलहा जाऊँगा...." बोले ठाकुर—"मेरा अनुमान है कि कमल के इस तरह गायब होने में अवश्य ही जगदीश का हाथ है..."

"तुम्हारा अमिलहा जाना ठीक नहीं, ठाकुर !...." ठकुराइन ने कहा—"जगदीश तुमसे जला हुआ है । वह तुम्हारी जान ले लेगा, तुम्हें वापस नहीं आने देगा...."

"अपनी जान के डर से मैं कमल को खतरे में नहीं छोड़ सकता, नीलमुखी ?"

"तो क्या तुम्हारा ख्याल है कि कमल वहीं गया है ?"

"हाँ !....वह जगदीश की बेटी के पीछे पागल है...." ठाकुर बोले ।

"यह लड़का विनाश करने पर तुल गया है, बड़े राजा !"

"ऐसी बात न कहो, ठकुराइन !...." ठाकुर ने कहा—"तुम यहाँ सावधानी से रहना, मैं अभी अमिलहा जाता हूँ । किसी अपरिचित पर विश्वास न करना और न तो हवेली के बाहर कहीं जाना..."

शीघ्रतापूर्वक ठाकुर कमरे से बाहर चले गये ।

कारिन्दा के पास आकर वे बोले—"मुनीमजी ! कमल की खोज करने मैं अमिलहा जा रहा हूँ । मेरे साथ दस-बारह लठैत रहेंगे । अगर मैं चौबीस घंटे में वापस न लौटूँ तो, तुम दो सौ लठैतों को

एकत्र करके अमिलहा पर धावा बोल देना और वहाँ की ईंट-से-ईंट बजा देना। बाद को जो होगा देखा जायगा....''

"जो आज्ञा !" कारिन्दा ने कहा।

बड़े राजा घोड़े पर सवार हो गये। उनके साथ दस लठैत भी तैयार खड़े थे। वे लठैतों से बोले—"मैं धीरे-धीरे घोड़े पर चलता हूँ। तुम लोग छद्मवेष में पैदल मेरे पीछे-पीछे आओ !"

चल पडे बड़े राजा।

उनके लठैत उनसे दो सौ गज पीछे चल रहे थे। अमिलहा उनका लक्ष्य था। दो-तीन कोस जा चुकने पर बड़े ठाकुर ने एक घुड़सवार को देखा, जो तेजी के साथ करमपुर की ओर जा रहा था। उसे देखकर उनका माथा ठनका। जंगी को वे पहचान गये थे।

वे आड़ लेकर एक जगह खड़े हो गये। जब जंगी दूर निकल गया तो उन्होंने भी अपना घोड़ा मोड़ दिया। जंगी ने बड़े ठाकुर को नहीं देखा था।

वह सीधे करमपुर आकर रुका। गाँव में घुसकर पता लगाया तो मालूम हुआ कि बड़े राजा घोड़े पर चढ़कर कहीं दूर सफर को गये हैं। और कारिन्दा वसूली के लिये दूसरे गाँव में गया हुआ है।

जंगी के लिए मैदान साफ था।

वह ठाकुर की हवेली में गया और ठकुराइन को खबर भेजवाई कि एक आदमी छोटे राजा का आवश्यक सन्देश लेकर आया है और उनसे इसी समय मिलना चाहता है।

ठकुराइन कमल का नाम सुनकर हर्षित हो उठीं। उन्होंने जंगी को अपने पास बुलाया। जंगी ने ठकुराइन को लम्बा सलाम किया।

ठकुराइन जंगी को नहीं पहचानती थीं, क्योंकि अमिलहा में वे सदैव परदे के अन्दर रहा करती थीं।

"कहाँ से आ रहे हो तुम ?...." ठकुराइन ने पूछा।

"अमिलहा से...." जंगी ने नम्रतापूर्वक कहा।

"अमिलहा से !"

"जी हाँ ! कमल ठाकुर का सन्देश लेकर आया हूँ मैं।"

"कहाँ है वह ? सकुशल तो है ?...." ठकुराइन ने उतावली के साथ पूछा ।

"कुशल नहीं है, ठकुराइन !...." बोला जंगी—"जगदीश के आदमियों ने उन्हें सख्त घायल कर दिया ! भगवान की कृपा कहिए कि मैं मौके पर पहुँच गया और उनकी जान बच गई, नहीं तो उन्होंने उन्हें मार ही डाला होता...."

"इस समय कमल कहाँ है ?" घबड़ा कर उन्होंने पूछा ।

"इस समय वे मेरी झोपड़ी में आहत अवस्था में पड़े हैं...." जंगी ने कहा—"उनकी हालत बहुत ही चिन्ताजनक है । वे आखिरी वक्त आपसे मिलना चाहते हैं...."

"ओह !...." ठकुराइन की आँखों से आँसू चू पड़े । कमल को वे अत्यधिक प्यार करती थीं । उसकी चिन्तनीय दशा का समाचार सुनकर वे अपनी करुणा रोक न सकीं । रो पड़ीं ।

"समय बहुत कम है, ठकुराइन ?...." बोला जंगी—"कमल ठाकुर ने मुझे आपके पास भेजा है । आप तुरन्त मेरे साथ चलें...."

"मगर....मगर बड़े ठाकुर हैं नहीं ।"

"बड़े राजा होते तो मैं आपके सामने आता ही क्यों, ठकुराइन !....अगर आप जरा भी देर करती हैं तो कमल ठाकुर की जान आपकी याद में तड़पते-तड़पते निकल जायगी...."

"ओह ! ...मैं क्या करूँ ? क्या करूँ मैं ?" ठकुराइन रोने लगीं ।

"मैं जानता था कि आपको शायद मेरी बातों पर विश्वास न हो...." जंगी बोला—"इसलिए मैं कमल ठाकुर की अंगूठी लेता आया हूँ...."

जंगी ने सोने की एक अंगूठी ठकुराइन के हाथों पर रख दी ।

अंगूठी देखकर उनका हृदय हाहाकार करने लगा ।

पुत्र की ममता हृदय के पोर-पोर से चित्कार उठी ।

"मेरा बेटा !....मेरा लाल !....मेरी सर्वस्व !" ठकुराइन अस्त-व्यस्त स्वर में बोलीं—"मैं चलूँगी तुम्हारे साथ....बड़े राजा

भले ही रुष्ट हो जायँ तो हो जायँ ! मैं चलूँगी...पुत्र की विपत्ति सुनकर एक माँ अपने को कैसे रोक सकती है ? एक माँ के लिए उसके बेटे की जान सबसे बड़ी दौलत है...."

ठकुराइन के निश्चय से जंगी अत्यन्त प्रसन्न हुआ, मगर उसने अपनी प्रसन्नता प्रगट नहीं होने दी ।

तुरन्त ही पालकी तैयार हुई और ठकुराइन बिना किसी से पूछे, उस अपरिचित व्यक्ति के साथ चल पड़ीं ।

पूछतीं भी तो किससे ?

बड़े राजा तो पहले ही जा चुके थे और करिन्दा भी अनुपस्थित था, आगे-आगे पालकी चली और उसके पीछे घोड़े पर जंगी चला ।

धीरे-धीरे चार कोस रास्ता तय हो गया । यहीं से बड़े ठाकुर की जमींदारी का अन्त होता था और अमिलहा की जमींदारी शुरू होती थी ।

ठकुराइन ने पालकी में से कहा—"देखो जंगी ! जगदीश को जरा भी खबर न होने पाये कि मैं अमिलहा आई हूँ...."

"ऐसा ही होगा...." जंगी बोला—"जब कमल की रक्षा मैंने की है तो आपको विपत्ति के मुख में कैसे डाल सकता हूँ..."

ऊभड़-खाभड़ पगडण्डी पर चलते हुए दो कोस और गुजर गये । यहाँ से रास्ता एक बड़ी-सी अमराई के बीच से जाता था । अमराई बहुत घनी थी और बीच-बीच में बेर के पेड़ थे, जिससे दिन के समय में भी वहाँ धुँधला छाया रहता था । जब पालकी अमराई में पहुँची तो एकाएक पन्द्रह-बीस आदमियों ने पालकी चारों ओर से घेर ली ।

ठकुराइन का हृदय काँप उठा ।

"क्या बात है ?"—उन्होंने जंगी से पूछा ।

"आप घबड़ाइये नहीं..." जंगी हँसकर बोला—"ये सब हमारे साथी हैं..."

जंगी की कुटिलतापूर्ण हँसी से ठकुराइन का संदेह बढ़ गया ।

उन्होंने पूछा—"ये सब यहाँ क्यों आये हैं ?"

ये लोग आप को कोई हानि नहीं पहुँचायेगें...." जंगी ठठाकर

हँसते हुए बोला—"केवल आपकी जान लेगें..."

"मेरी जान !...." कम्पित स्वर में बोली ठकुराइन—"क्या करोगे जान लेकर मेरी !"

"अपने मालिक जगदीश ठाकुर का रास्ता निष्कंटक करेगें...." जंगी ने कहा—"तुम और तुम्हारे बेटे ने उनकी नींद हराम कर दी है। कमल तो अब तक मौत के घाट उतर ही चुका होगा, अब तुम्हें भी मारकर हम लोग निश्चिन्त हो जायेगें...."

जंगी के मुख पर पैशाचिकता नाच रही थी।

ठकुराइन पालकी से उतर कर खड़ी हो गई। उनकी नस-नस में दौड़ता हुआ क्षत्राणी का खून उबल पड़ा, आँखों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। सारा भय दूर भाग गया। वे कड़कती आवाज में बोली—"एक स्त्री के साथ विश्वासघात करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आई ?"

"विश्वासघात तो हमारा पेशा ही है, ठकुराइन...." जंगी क्रूर हँसी हँसकर बोला—"हम किसी की जान लेने से डरते नहीं....!"

"तुम राक्षस हो...." गरज पड़ीं ठकुराइन।

"वही सही ठकुराइन !...." जंगी ने हँसकर कहा—"इस सुनसान जगह में तुम अकेली हो, यहाँ कोई तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता...."

"ईश्वर मेरी रक्षा करेगा पापात्मा....!"

"ईश्वर का नाम क्यों बदनाम कर रही हो ठकुराइन ?....ईश्वर तुम जैसे पापिनियों की रक्षा नहीं करता।"

"पापी तू है कि एक निरीह अबला की हत्या करने का विचार कर बैठा है...." निर्भीक स्वर में कहा ठकुराइन ने।

"तो तुम अपने को निर्दोष समझती हो, ठकुराइन !....विजय बहादुर को तुम्हीं ने जहर देकर मार डाला और बड़े ठाकुर के घर जा बैठी....क्या तुम अपने पाप की कहानी भूल गई ?....कमल गवाह है, वह तुम्हारा पाप-पुत्र है...."

"नीच ?" क्रोध से काँप उठीं ठकुराइन।

लपककर उन्होंने एक आदमी के हाथ से लाठी छीन ली। उस क्षत्राणी के हाथ से चोट खाकर दो आदमी जमीन सूंघने लगे।

"पकड़ लो !..." चिल्लाया जंगी—"मार डालो इसे !"

सब आदमी टूट पड़े ठकुराइन पर। ठकुराइन की लाठी ने दो आदमियों को और घायल कर जमीन पर सुला दिया। अन्त में जंगी ने पीछे जाकर उनकी लाठी पकड़ ली। वे असहाय हो गईं।

"हरखू ! तुम इसके सीने में छुरा भोंक दो...." जंगी ने एक आदमी से कहा।

वह आदमी छूरा लेकर ठकुराइन की ओर लपका, परन्तु दूसरे ही क्षण वह चीख के साथ जमीन पर गिर पड़ा। उसकी पीठ में एक लम्बा बरछा आ घुसा था।

जंगी ने दृष्टि उठाई। देखा—क्रोध से हाँफते हुए बड़े राजा खड़े थे। उसके पैर-तले की जमीन जैसे एकाएक खिसक गई हो, ऐसा उसे लगा। मगर उसने अपने को सम्हाल लिया।

"तुम भी आ गए बड़े राजा !...." वह बोला—"अभी कुछ दिन और जीते न बना तुमसे ?"

"चुप रह, कमीना..." बड़े राजा गरज पड़े।

जंगी ने देखा, बड़े ठाकुर अकेले हैं।

वह चिल्लाया—"इसे भी मार डालो...."

देखते-देखते सब आदमी बड़े राजा पर टूट पड़े। बड़े राजा के हाथ का बरछा खचाखच शत्रुओं के शरीर को छेदने लगा। इसी समय ठाकुर के लठैत भी आ पहुँचे।

लाठियां बरसने लगीं।

खून से धरती लाल होकर काली पड़ने लगी। शत्रुओं के पैर उखड़ने लगे। बड़े ठाकुर के लठैत जी-जान लगा कर लड़ रहे थे। उन्होंने उनका नमक खाया था, वे अपनी आँखों के सामने अपने रहमदिल मालिक का अपमान कैसे देख सकते थे ?

थोड़ी ही देर में बचे हुए विपक्षी भाग खड़े हुए। जंगी ने भागना चाहा, मगर ठाकुर के लठैतों ने उसे पकड़ लिया।

"ठकुराइन ! मैंने तुमसे मना किया था, मगर तुमने अपने मन की बात की..." ठाकुर बोले--"खैर ! तुम्हारी जान बच गई, यह मेरे लिए बहुत खुशी की बात है...तुम लठैतों के साथ घर जाओ। मैं अकेले अमिलहा जाता हूँ..."

"अकेले न जाओ, ठाकुर !"—ठकुराइन ने प्रार्थना भरे स्वर में कहा।

"मुझे कोई डर नहीं, ठकुराइन !"-- आश्वासन देकर उन्होंने लठैतों से कहा "तुम लोग हवेली लौट जाओ। इस बदमाश का ख्याल रखना। भागने न पाए !"

ठकुराइन और जंगी को साथ लेकर लठैत लौट चले।

ठाकुर घोड़े पर चढ़कर अमिलहा की ओर बढ़े। इस समय भी उनके हाथ में रक्तात्क बरछा था।

१४

जिस कमरे में कमल बन्द किया गया था, वह हवेली के एक कोने में पड़ता था। उस तरफ लोगों की आवाजाही बहुत कम होती थी।

जब कमल की बेहोशी दूर हुई तो उसे बहुत दुःख हुआ। कमरे के क्षीण प्रकाश को देखकर उसने यह अनुमान लगा लिया कि रात्रि व्ययतीत हो चुकी है और दिन निकल आया है। फिर भी उसके कमरे का दरवाजा अभी तक बन्द ही था। उसे खोलने कोई भी न आया था।

यह जानता था कमल कि उसे अपने कब्जे में पाकर जगदीश उसके साथ अत्यन्त निष्ठुरता का व्यवहार करेगा। हो सकता है कि वह उसकी जान भी ले ले।

इसलिए पछता रहा था अब ! क्यों नहीं उसने बड़े राजा से सारी बातें कह दी ? क्यों अकेले इस नरक-कुण्ड तक चला आया ? मगर अब क्या हो सकता है ? प्रातःकाल जब बड़े राजा उसे नहीं देखेगें तो क्या सोचेगें अपने मन में ?

कमल ने अपना सर छुआ। घाव से रक्त निकलना बन्द हो चुका

था, परन्तु पीड़ा ज्यों की त्यों थी।

वह असहाय पड़ा था उस कमरे में।

दिन भर यों ही पड़ा रहा। कोई उसकी खोज-खबर लेने नहीं आया। उससे भोजन तो क्या, पानी पीने के लिए भी नहीं पूछा गया।

कमल उद्विग्न होता जा रहा था यह सोचकर कि राजमणि कैसी होगी ? उस पर क्या बीत रही होगी ? और जब जगदीश को उसकी जान लेनी है तो वह इतनी देर क्यों कर रहा है ?

कमरे में सघन होते हुए अन्धकार को देखकर, कमल समझ गया कि संध्या हो चुकी है।

एक घण्टा और व्ययतीत हुआ।

तब दरवाजे की कुण्डी खटकी। किसी ने धीरे से ताला खोला। कमल सजग होकर बैठ गया। समझ गया वह कि अब मृत्यु की घड़ी आ पहुँची है।

दरवाजा खुला और कमल को यह देखकर महान् आश्चर्य हुआ।

"तुम...." इसके आगे कुछ बोल न सका वह।

राजमणि दौड़कर उससे लिपट गई। फिर कान के पास मुँह ले जाकर घबड़ाहटभरे स्वर में बोली—"बड़ी मुश्किल से इस दरवाजे की ताली चुराकर लाई हूँ। आप अभी यहाँ से चले जाइये। मैंने बाहर एक घोड़े का प्रबंध कर रखा है...."

"राजमणि !...."कमल बोला—"तुम क्यों मेरे लिए इतनी मुसीबत अपने सर पर ले रही हो ? मेरी जान की इतनी चिन्ता तुम्हें क्यों है ?..."

"आपकी जान और मेरी जान दो नहीं हैं, छोटे राजा ! आप जल्दी करें...."

'मैं बिना तुम्हें लिए, यहाँ से नहीं जा सकता...."कमल ने कहा

"तो चलिए। मैं भी तैयार हूँ...." राजमणि बोली।

दोनों चुपके से निकले।

उस समय जगदीश अपने कमरे में चिन्तामग्न बैठा था। उसकी चिन्ता का कारण था जंगी। आज प्रातःकाल ही जगदीश ने उसे

करमपुर भेजा था। उसे विश्वास था कि जंगी अवश्य ही अपने कार्य में सफल होगा—और जब ठकुराइन मार डाली जायगी तो कमल को मारकर वह निश्चिन्त हो जायगा—मगर अब तक जंगी आया न था। उसे अब तक तो लौट आना चाहिए था....।

अकस्मात दरवाजे के बाहर कुछ खटका हुआ और जगदीश समझ गया कि जंगी लौट आया है।

मगर दरवाजे पर दृष्टि पड़ते ही चौंककर उठ खड़ा हुआ। बीच दरवाजे में बड़े ठाकुर खड़े थे। उनका वृद्ध शरीर क्रोध से काँप रहा था।

ठाकुर अन्दर चले आये। हाथ का बरछा उन्होंने कोने में खड़ा कर दिया। उन्हें देखकर जगदीश भयभीत हो उठा। वह अस्त-व्यस्त स्वर में बोला—"तुम....बड़े राजा तुम !...."

"हाँ मैं हूँ जगदीश !...." ठाकुर बोले—"तुमने गलत नहीं पहचाना है, मुझे। मैं आया हूँ और बिल्कुल अकेला आया हूँ—हिम्मत हो तो अपने आदमियों को बुला लो और मुझे भी कत्ल करवा दो...."

"कत्ल !....क्या कहते हो बड़े ठाकुर तुम !..."

"ठीक कह रहा हूँ मैं !....तुम्हारे रग-रग में साँप का जहर भरा है...तुमने जिसे डसा वह जिन्दगी में आखिरी साँस भी न ले सका...." बड़े राजा तीव्र स्वर में बोले।

"तुम यहाँ आये क्यों हो, बड़े ठाकुर ?"

"तुम्हीं ने तो बुलाया था मुझे....क्या भूल गये ?...." ठाकुर ने कहा—"तुमने कहा था न, कि एक बार अमिलहा आना !....और मैं आ गया हूँ...."

"मगर तुम्हारा इस तरह आना मुझे भयभीत कर रहा है, बड़े-राजा !...." जगदीश बोला—"तुम उत्तेजित हो और तुम्हारे पास खून से भींगा हुआ बरछा है, बात क्या है ?"

"जानकर भी अनजान न बनो, जगदीश ठाकुर !....सीधे बता दो, कमल कहाँ है ?"

"कमल !....कमल तो तुम्हारे पास होगा, बड़े राजा ! वह

तुम्हारा बेटा है न...'' उसने व्यंग किया।

''जगदीश !....'' लपककर ठाकुर ने अपना बरछा उठा लिया — ''तुम जानते हो वृद्ध हो जाने पर भी, मेरी भुजाओं में अब भी प्रलय की शक्ति है और उस व्यक्ति को क्रोध ने द्विगुणित कर दिया है। अच्छा हो कि कमल को मेरे सामने उपस्थित कर दो....''

''पागल हो गये हो, ठाकुर !''

''पागल ही समझ लो !...मगर याद रखो, आज मैं यहाँ मरने और मारने के लिए तैयार होकर आया हूँ...''

कहते-कहते रुक गये बड़े राजा।

एकाएक उनकी दृष्टि, खुली हुई खिड़की की राह, बाहर जा पड़ी थी और उन्होंने देखा—अँधेरे में, हवेली से निकल कर दो व्यक्ति एक घोड़े पर चढ़कर भाग रहे हैं। ठाकुर समझ गये कि उनमें से एक कमल है।

''खैर !....'' बड़े ठाकुर ने अपना सिलसिला जारी रखा—''मुझे आशा है कि तुम मुझे क्रूर होने पर विवश न करोगे !''

''मगर कमल को मैं नहीं जानता, ठाकुर ! वह यहाँ आया तक नहीं है....'' जगदीश बोला।

बड़े ठाकुर बराबर खिड़की से सामने देख रहे थे। इस बार उन्होंने देखा कि जगदीश का लड़का गोपाल, दो आदमियों के साथ घोड़े पर सवार हो कमल का पीछा करने की तैयारी में है।

न जाने कैसे कमल के भागने का उसे पता चल गया था।

''क्या तुम सच कहते हो, जगदीश ठाकुर !....''बड़े राजा बोले— ''जी चाहता है कि इस बरछे से तुम्हारा कलेजा छेद दूँ....मैंने अभी अपनी आँखों से देखा है कि कमल तुम्हारी हवेली से निकल कर भागा है।''

''क्या वह भाग गया ?....'' चौंक पड़ा जगदीश।

''हाँ, वह भाग गया। तुम्हारे सीने पर लात मार कर भाग गया वह....मगर गोपाल ने उसका पीछा किया है। मैं भी जाता हूँ। अगर तुम्हारे बेटे ने कमल को जरा भी चोट पहुँचाई तो इस बरछे से उसे

छेद कर रख दूँगा...."

"जाने दो ठाकुर !...." जगदीश बोला "लड़के लड़ते हैं तो लड़ने दो। हम बूढ़े क्यों उनके मामलों में दखल दें ?"

"ठीक कहते हो तुम....दूसरा मौका होता तो मैं तुम्हारी बात मान लेता और उन्हें कदापि न रोकता...." बोले बड़े राजा—"कमल भी क्षत्रिय का बेटा है। वह मरने-मारने से कभी भाग नहीं सकता, मगर इस समय मुझे उसकी जान बचानी ही होगी। तुम्हारा मित्र होने के नाते मैं तुम्हारी बेटी को विधवा होते नहीं देख सकता...."

और तेजी से बड़े ठाकुर बाहर निकल आये। उनका घोड़ा पास ही खड़ा था। वे उस पर जा चढ़े। एड़ लगाई। घोड़ा तीर की तरह दौड़ चला।

कमल और राजमणि एक ही घोड़े पर चढ़कर भागे जा रहे थे।

वे जल्द-से-जल्द अमिलहा से दूर निकल जाना चाहते थे।

उन्हें कुछ पता नहीं था कि गोपाल उनका पीछा कर रहा है। उनका घोड़ा तेज नहीं चल पा रहा था, क्योंकि उसकी पीठ पर दो सवारियाँ थी।

कमल बोला—"आज तो मैं तुम्हें उसी तरह अपहरण कर लिये जा रहा हूँ जैसे...."

"जैसे....?" उत्सुकतावश बीच में ही पूछ बैठी वह।

"जाने दो, जबान यूँ ही भटक गई थी...."

"नहीं कहिए, अपना वाक्य पूरा कीजिये !...."

"तो सुनो !....जैसे पृथ्वीराज संयोगिता का अपहरण कर ले गये थे, उसी तरह...."

"चलिये ? आप बड़े वैसे हैं ?...." संकेत समझ कर राजमणि हंसकर अपने आप में सिकुड़ गई।

"मैं झूठ नहीं कह रहा हूँ, रानी !" कमल ने कहा।

"उस जमाने और आज के जमाने में बहुत अन्तर है...." राजमणि बोली—"पृथ्वीराज और संयोगिता से हमारी बराबरी ही क्या ?"

"ठीक कहती हो तुम...." उसको बन्धन में लेकर बोला कमल– "हमारी राजमणि तो संयोगिता से भी बढ़कर सौन्दर्यमयी है...."

"और हमारे प्राण, पृथ्वीराज से बढ़कर बहादुर..." लजाकर कहा राजमणि ने।

"सुनो...." चौंककर बोला कमल—"पीछे से टापों की आवाजें आ रही हैं...."

राजमणि चुप हो रही। दोनों ने कान लगाकर सुना।

"हमारा पीछा हो रहा है, राजमणि ! मालूम होता है, तुम्हारे पिता को हमारे भागने की खबर लग गई है !"—कमल ने कहा।

"अब क्या होगा, छोटे राजा ?"—भयभीत स्वर में बोली राजमणि।

"देखा जायगा...." लापरवाही से उत्तर दिया कमल ने और घोड़े को एक जबरदस्त एड़ लगाई।

मगर उसका घोड़ा दूना बोझ लादकर ज्यादा तेज चल न सका। उधर पीछा करने वाले बराबर पास आ रहे थे। उनके घोड़े काफी तेज थे।

अन्त में वे निकट आ पहुँचे।

"ठहरो कमल ठाकुर !" दूर से ही चिल्लाकर बोला गोपाल।

"हम भाग नहीं सकते, राजमणि !...." कमल ने घोड़ा रोक दिया और उतर पड़ा। राजमणि भी उतर पड़ी।

गोपाल अपने घोड़े पर से उतरता हुआ बोला—"लुटेरे ! मेरी बहन को लेकर कहाँ भागे जा रहे थे तुम ?...."

"अच्छा हो कि तुम लौट जाओ गोपाल ठाकुर ! और अपनी बहन को उसके भाग्य पर छोड़ दो..."—बोला कमल।

गोपाल कुछ बोला नहीं। टूट पड़ा कमल पर। दोनों प्रतिद्वन्दी आपस में गुँथ गये।

गोपाल के दोनों साथी अलग खड़े थे और गोपाल के हुक्म की प्रतीक्षा कर रहे थे।

"घबड़ाना मत कमल ! आ गया हूँ मैं...." दूर से आवाज आई।

बड़े राजा का स्वर सुनकर कमल का बल दूना हो गया। उसने गोपाल को उठाकर जमीन पर पटक दिया।

उसी समय गोपाल के साथी ने कमल को मारने के लिए लाठी तानी—तब तक आ पहुँचे बड़े राजा और उनके बरछे ने उस आदमी का काम तमाम कर दिया। दूसरा आदमी बड़े राजा को देखते ही भाग खड़ा हुआ।

"छोड़ दो उसे कमल !...." बड़े राजा ने आज्ञा दी।

कमल ने गोपाल को छोड़ दिया। पराजित गोपाल अपने घोड़े पर चढ़कर वापस लौट गया।

"यह कौन है कमल ?..." राजमणि की ओर देखकर, बड़े राजा ने कमल से पूछा। जानते हुए भी अनजान बन गये थे वे।

"पिताजी !...." लज्जा ने कमल की जबान पकड़ ली।

"अपने लिए तो तूने बड़ी अच्छी बहू चुनी, बेटा !....मगर हमसे कहा तक नहीं...." ठाकुर बोले।

राजमणि ने आगे बढ़कर ठाकुर के पैर छुए।

"जीती रहो बेटी !...."ठाकुर ने आशीर्वाद दिया —"चलो कमल बहू को लेकर चलो...."

बड़े ठाकुर की सहृदयता देखकर, राजमणि क्षणभर के लिए आश्चर्यचकित-सी रह गई।

ठाकुर अपने घोड़े पर जा बैठे। अब कमल को लज्जा लगने लगी थी राजमणि को अपने आगे बिठाने में। अतः उसने अपने पीछे बैठा लिया। एँड़ खाते ही घोड़े पथ को रौंदने लगे।

रास्ते में राजमणि ने धीरे से कमल के कान में कहा—"पहले मैं थी तुम्हारी गोद में, अब तो तुम मेरे गोद में हो, छोटे राजा !"

कमल मुस्कुराकर चुप रह गया।

१५

"आ गये ठाकुर !...." ठकुराइन ने पूछा।

"हाँ ठकुराइन ! तुम्हारा कमल मिल गया। उसे सकुशल लौटा

लाया हूँ....'' ठाकुर बोले।

''कहाँ है वह ?''

''बहू के साथ अपने कमरे में....''

''बहू !...कैसी बहू बड़े राजा ?....'' ठकुराइन ने आश्चर्य में भर कर पूछा।

''तुम्हारी बहू ठकुराइन !...हमारे कमल की दुलहिन !''

''कमल की दुलहिन !....कहाँ से पकड़ लाये ठाकुर ?''

''अमिलहा से, और कहाँ से ?'' ठाकुर बोले।

''कौन है वह ?....'' तेजी से पूछा ठकुराइन ने।

''जगदीश की बेटी...''

''दुश्मन की बेटी क्यों नहीं कहते, ठाकुर !....'' उत्तेजित होकर ठकुराइन बोलीं—''तुम हमारी इतनी भलाई करने के पश्चात्, अब कलेजे पर आरा चलाना चाहते हो....''

''ठकुराइन !....'' नम्र स्वर में ठाकुर ने कहा—''जरा विचार से काम लो....उसके बाप से तुम्हारी दुश्मनी है, मगर उस छोटी-सी जान ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? वह चाँदनी-सी सुन्दर बदली-सी गम्भीर, फूल-सी कोमल और प्रकृति-सी निष्कलंक है....उसे ठुकराओ नहीं, ठकुराइन।''

''ऐसी प्रार्थना करके मुझे नरक में न ले जाओ, ठाकुर !.... कमल के साथ अपने दुश्मन की बेटी को नहीं देख सकती मैं....''

''कमल तुम्हारा बेटा है...उसके सुख-दुःख का ध्यान रखना तुम्हारा कर्तव्य है, ठकुराइन !''

''तुम्हारा मतलब मैं नहीं समझी, बड़े राजा !''

''यही कि कमल उसे चाहता है। तुम्हारी अस्वीकृति से दोनों की आशाओं पर तुषारापात हो जायगा। ऐसा काम करो ठकुराइन, जिससे तुम्हारे कमल को शारीरिक और मानसिक कष्ट न हो। यदि कमल का भला चाहती हो तो तुम्हें इस सम्बन्ध को स्वीकार करना ही पड़ेगा। कमल जब मेंहदी की ओ आकर्षित हुआ तो मैंने उसे रोका, क्योंकि इसमें उसकी मर्यादा भंग होती थी— मगर उस समय

तुमने ही कमल की तरफदारी की और मुझे फटकारा....और जब कमल अपनी बिरादरी की एक सुशील लड़की पर आसक्त हुआ है तो तुम उसे रोक रही हो, नीलमुखी ! क्या तुम चाहती हो कि कमल राजमणि को छोड़कर मेंहदी से शादी करे ?''

''भला मैं क्यों ऐसा चाहने लगी...'' बोली ठकुराइन—''मगर तुम राजमणि को सुशील कैसे कहते हो, ठाकुर ? जिसका बाप इतना कृतघ्न है, क्या उसकी बेटी उससे कम होगी ! साँप के पेट से, साँप ही पैदा होता है, बड़े राजा ...''

''नहीं ठकुराइन !....'' बड़े राजा ने कहा—''कीचड़ की गोद में कमल खिलता है ! काँटों के अन्चल में फूल लहराते हैं। यह तुम्हारा तर्क व्यर्थ है ! आज तक मैंने तुमसे कुछ नहीं माँगा, नीलमुखी ! अब आखिरी बार मेरी माँग ठुकराओ मत तुम !''

''कमल के पिता हो बड़े राजा !....'' शरमाकर कहा ठकुराइन ने—''मगर तुम्हीं ऐसा कहते हो तो मुझे क्या अधिकार है उसे रोकने का ?''

''तुम उसकी माँ हो ठकुराइन, तुमसे पूछ लेना मेरा धर्म था....''

उसी समय कमल आ पहुँचा। उसके पीछे सिमटती-सकुचाती राजमणि भी।

''लो आ गया कमल....'' कहकर राजमणि की ओर अभिमुख हो कर वे बोले—''अपनी सास के पैर छूओ बेटी !...''

राजमणि ने आगे बढ़कर ठकुराइन के पैरों पर अपना मस्तक रख दिया।

उस सलोनी बहू को देखकर ठकुराइन का रोम-रोम खिल उठा।

उन्होंने बहू को उठाकर कलेजे से लगा लिया। आँखों से प्रेमाश्रु बह चले।

''कैसी है तुम्हारी बहू ?'' ठाकुर ने पूछा।

''यह तो चाँद का टुकड़ा है, बड़े राजा !....'' ठकुराइन ने कहा—''इसकी रोशनी पाकर कमल खिल उठेगा।''

बड़े-बूढ़ों की बात सुनकर कमल और राजमणि लज्जा से गड़े

जा रहे थे।

"अच्छा तो मैं चलता हूँ..." उठते हुए बोले ठाकुर—"तुम अपना बेटा और बहू सम्हालो...."

कमरे से बाहर निकल आये ठाकुर और चौपाल की ओर बढ़े।

चौपाल में आकर गद्दी पर बैठे ही थे कि कल्लन मियाँ आ पहुँचे।

"आओ मौलाना, बहुत दिनों पर तुमसे भेंट हुई...." ठाकुर ने कहा—"कहो, क्या हाल-चाल है?"

"सब खैरियत है, बड़े सरकार!" कल्लन मियाँ बोले।

"तुम्हारी मस्जिद अब तक अधूरी ही है न?"

"वह पूरी हो गई, ठाकुर! यही कहने आया था मैं।"

"कब तैयार हुई?" ठाकुर ने पूछा।

"पिछले हफ्ते...." मौलाना बोले—"हमारी जमात के मजदूरों ने मुफ्त में काम किया है, राजा!"

"अच्छा!...." आश्चर्य में भरकर कहा ठाकुर ने—"यह तो बड़ी अच्छी बात है, मियाँ!"

"एक बात और है, सरकार!"

"वह क्या?...."

"उस अंग्रेज साहब ने शहर से बहुत-सी मशीनें मँगवाई है.... मशीने कुछ आ गई हैं और कुछ दो-चार दिन में आ जायगी।"

"क्या करेगा वह उन मशीनों का?"

"गाँव में चीनी का मिल खोलेगा।"

"वह हमें बरबाद करने पर तुला है क्या मौलाना?...." बड़े ठाकुर ने कहा—"उसने बंगला बनवाने के लिए मुझसे जमीन ली थी, मिल बनाने के लिए नहीं?...."

"यह तो आप ही जानें, सरकार!"

"मैं अभी उसे बुलाकर पूछता हूँ...." ठाकुर बोले।

"उन्होंने लठैत को आवाज दी, तो तुरन्त लठैत आ खड़ा हुआ।

"साहब को अभी तुरन्त हाजिर होने का मेरा संदेश जाकर

सुनाओ....'' उन्होंने आज्ञा दी।

लठैत चला गया। थोड़ी ही देर में लौट आया।

बोला वह—''बड़े राजा! साहब मुझे देखकर बहुत लाल-पीला हो रहा था।''

''क्या कहा उसने ?''

''उन्होंने कहा कि तुम्हारे ठाकुर ने मुझे नौकर समझ लिया है क्या ? जाओ कह दो कि मुझे फुरसत नहीं है। हो सका तो शाम को आऊँगा....'' लठैत बोला।

''ऐसा कहा उसने ?....'' ठाकुर गरज कर बोले—''वह गोरा कुत्ता उतनी दूर से जमीन सूँघते-सूँघते यहाँ आ पहुँचा और हमारे टुकड़े खा-खाकर अब हमीं पर भौंक रहा है !''

''क्या है, ठाकुर साहब ? मैं आ गया....हूँ''—टामसन ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा।

''मैंने आपको बुलाया था और आपने आने से इन्कार कर दिया था....आखिर क्यों ?'' उत्तेजित स्वर में बोले ठाकुर।

''मुझे फुरसत नहीं था ?...'' टामसन बोला—''मगर चला आया। सोंचा शायद कोई जरूरी काम हो।''

''बिना काम के तुम्हें क्यों बुलाता, मि० टामसन ?''

''तो फिर फरमाइये !''

''आपने इतनी सब मशीनें क्यों मँगाई है ?'' ठाकुर ने पूछा।

''चीनी की मिल खड़ी करने के लिए !''—साहब बोला।

''यह क्यों नहीं कहते कि गाँव वालों का रक्त चूसने के लिए ..'' ठाकुर तड़प उठे—''आपने बँगला बनवाने के लिए जमीन ली थी, मिल खड़ी करने के लिए नही...''

''जमीन मेरी है, ठाकुर साहब ! हम अपनी इच्छानुसार जो भी चाहें कर सकते हैं... शायद आप यह भूल गये हैं कि वह जमीन आपने मेरे हाथ बेच दी है...''

''नहीं, मैं नहीं भूला हूँ....मगर आपने तो बँगला बनवाने के लिए लिया था।''

"इन्सान के इरादे हमेशा बदलते रहते हैं, ठाकुर साहब !...." उत्तेजित स्वर में बोला टामसन ।

"आपने उस जमीन का मूल्य भी मुझे नहीं दिया और न तो वह धन मेरी प्रजा के ही किसी काम आया....आपकी पिछली मीठी-मीठी बातें कहाँ गईं ?..."

"इन्सान अपने फायदे के लिए हमेशा मीठी-मीठी चिकनी-चुपड़ी बातें किया करता है ..."

"आपके देश में होगें ऐसे इन्सान ! ..." ठाकुर बोले—"हमारे देश में तो अपनी बात के लिए जान की बाजी लगा देने वाले होते हैं...."

"इन सब बातों से कोई फायदा नहीं, ठाकुर साहब !..."

"आपकी मिल यहाँ नहीं खड़ी हो सकती ..." ठाकुर ने आज्ञा भरे स्वर में कहा ।

"खड़ी होगी और जरूर खड़ी होगी ..." वह भी तनकर बोला—

"आपको रोकने का कोई अधिकार नहीं है ।"

"मैं यहाँ का जमींदार हूँ...."

"आप अपनी जमींदारी सम्हालिये...." टामसन बोला ।

"ठीक है, जमीन का पूरा मूल्य मुझे कल तक मिल जाना चाहिए ।"

"वह अब आपको नहीं मिल सकता, ठाकुर साहब !"

"मिल की एक-एक ईंट जमीन पर सुला दूँगा । तुमने मुझे समझ क्या रक्खा है ? तुम्हारी गोरी चमड़ी को जलाकर खाक कर दूँगा मैं...."

"तुम मुझे डराना चाहते हो, ठाकुर !" तीक्ष्ण स्वर में बोला साहब —"याद रखो । तुम्हारे देश पर हमारा अधिकार है । मैं चाहूँ तो सरकार की मदद लेकर तुम्हारा घमण्ड चूर कर सकता हूँ ...और तुम मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते । पहले अपने घर को ओर देखो । जब तुम्हारे घर में दो भाइयों में ही नहीं पटती तो तीसरे को कैसे पछाड़ सकोगे ?"

"निकल जाओ यहाँ से !...." पैर पटक कर बोले ठाकुर।

लाल-लाल आखें लेकर टामसन हवेली से बाहर निकल गया।

ठाकुर क्रोधावेश में हाँफने लगे थे।

बड़ी देर तक मौन रहे वे।

एक लठैत ने अन्दर से नीबू का शर्बत लाकर दिया।

ठाकुर ने गिलास लेकर चुपचाप पी लिया।

उनका मस्तिष्क कुछ शान्त हुआ।

"कल जो आदमी पकड़ा गया था, उसे पेश करो, जतन !..." ठाकुर ने लठैत को आज्ञा दी।

थोड़ी देर के बाद जंगी, ठाकुर के सामने लाया गया। उसके हाथ पैर रस्सियों से जकड़े हुए थे। वह बड़ी कठिनता से चल सकता था।

ठाकुर ने एक बार जंगी की ओर देखा, फिर लठैत की ओर।

"यह क्या बात है जतन ?...." वे बोले—"इसके हाथ पैर बँधे क्यों हैं ?"

"सरकार !...."

"अपने जैसे इन्सान के साथ, इतनी बेरहमी का बर्ताव नहीं किया जाता जतन ! इसके हाथ-पैर खोल दो...." ठाकुर ने कहा।

"बड़े राजा !...." जतन अति नम्र स्वर में बोला—"इसने रात भर में चार बार भागने की कोशिश की थी। लाचार होकर मुझे इसका हाथ पैर बाँधना पड़ा।"

"अब यह नहीं भागेगा, इसकी रस्सी खोल दो !"

जतन ने आगे बढ़कर जंगी को बन्धन-मुक्त कर दिया। जंगी निर्वाक खड़ा रहा। सर नीचा किये हुए सोंच रहा था वह कि उसके सामने मनुष्य बैठा है या ठाकुर के रूप में कोई देवता।

"तुम्हारा नाम ?"—ठाकुर ने नरमी से पूछा।

"जंगी....!"

"मेरी ओर देखो, जंगी ! नीचे क्या देख रहे हो ?" बड़े राजा ने ढाँढ़स बँधाया।

जंगो का सर झुका ही रहा।

"मेरी ओर देखो भाई!...." ठाकुर के मुँह से मिठासयुक्त आवाज निकली—"और बताओ कि तुम ऐसे घृणित काम क्यों करते हो?"

"........"

जंगो चुप रहा।

"मेरी बातों का जबाब दो, जंगी!...." ठाकुर कहने लगे—"कल तुमने ठकुराइन की जान लेना चाहा था.... अगर तुम खून के प्यासे हो तो मेरी ओर देखो, बूढ़ा आदमी जिन्दगी की आखिरी मंजिल तक आ पहुँचा हूँ। आगे बढ़ो, यह छूरा उठाकर मेरे कलेजे में रख दो और अपनी प्यास बुझा लो...."

"........"

"अगर तुम्हें धन की चाहना है, तो बोलो! मैं अपनी जमींदारी में से तुम्हें कुछ जमीन लिख देने को तैयार हूँ...."

"......"

"मुँह से बोलो जंगी। क्या चाहते हो क्या?"—ठाकुर ने पुनः पूछा।

जंगी क्षण-प्रतिक्षण लज्जा-भार से दबा जा रहा था। देवत्व के आगे राक्षसत्व पराजित हो चला था। देवता सर उठाये पूछ रहा था और दानव सर झुकाये खड़ा था—निस्तब्ध, निश्चल, निश्चेष्ट!

"बोलो जंगी! कल तुमने जो अपराध किया था, उसका क्या दण्ड दिया जाय तुम्हें?"

"मैं शैतान हूँ बड़े राजा!...." जंगी ने अपना मुँह खोला—"आप जो भी दण्ड मुझे देंगें, वह स्वीकार कर लूँगा।"

"स्वीकार करोगे तुम?"

"जी हाँ, बड़े राजा!" जंगी ने कहा।

"मुनीम जी!...." ठाकुर कारिन्दा से बोले—"इसे एक हजार रुपये दे दो....और तुम जतन! इसे अमिलहा तक पहुँचा आओ...."

"बड़े राजा!...."

दौड़ कर जंगी ठाकुर के पैरों पर गिर पड़ा।

"उठो जंगी!...." ठाकुर ने उसका हाथ पकड़ कर उठाया।

"बड़े सरकार, आप जीते मैं हारा...." बोला जंगी।

"अब इतनी कृपा और कीजिये सरकार कि मुझे मुँह-माँगा दण्ड दीजिये...."

"......"

"बोलो कौन सा दण्ड चाहते हो तुम ?"

"मैं चाहता हूँ कि आजीवन बड़े राजा के जूतों में पड़ा रहूँ.... मुझे निकृष्ट जानकर अपने से दूर न कर दें देवता !..."

"ऐसा ही होगा..." ठाकुर बोले—"मुनीमजी, इसके रहने का प्रबन्ध लठैतों के साथ कर दो !"

"जैसी आज्ञा !" कारिन्दा ने कहा।

"देखो जंगी, किसी बात का कष्ट होते ही, सीधे मुझसे आकर कहना !"—ठाकुर बोले।

"मुझे कोई कष्ट न होगा, बड़े राजा !...अब मेरे दिल में यही इच्छा है कि आपका नमक खाकर अपनी जिन्दगी सुधार लूँ, बहुत पाप कर चुका हूँ, सरकार !...." जंगी ने कहा।

"पिछली बातें भूल जाओ, जंगी...." ठाकुर बोले—"पश्चाताप मनुष्य को धो-पोंछ कर साफ कर देता है।"

जंगी ने बड़े ठाकुर का पैर छुआ और लठैतों के साथ बाहर चला गया।

१६

आजकल जगदीश की दशा कुछ विचित्र-सी हो रही थी।

कमल का राजमणि के साथ भाग जाना, बड़े ठाकुर का अकेले आकर उस पर अपना क्रोध प्रकट करना और जंगी का अब तक लौट कर न आना—इन सब कारणों से जगदीश की मनःस्थिति शोचनीय हो गई थी। वह रात-दिन अपने कमरे में बैठा हुआ न जाने क्या-क्या सोंचा करता था।

आज भी वह चिन्तामग्न अवस्था में अपनी कोठरी में बैठा था।

वह समझ गया कि अब उसपर वज्रपात होकर ही रहेगा। संसार की कोई भी शक्ति उसे विनाश के गर्त में गिरने नहीं बचा सकती....

वह अभी बैठा सोंच ही रहा था कि आ पहुँचा जंगी।

आश्चर्यचकित हो उठा जगदीश, उसे इतने दिनों के बाद देखकर।

"अच्छे हो ठाकुर !—" जंगी ने पूछा।

"अपनी कहो !...." बोले जगदीश—"इतने दिनों के बाद अब अपनी सूरत दिखाने आये हो—कहाँ थे अब तक ?"

"क्या बताऊँ, ठाकुर !..." जंगी उदास स्वर में कहने लगा—"मैं तो आपका काम करीब-करीब पूरा ही कर चुका था, केवल ठकुराइन के कलेजे में छुरी रखने की देर थी....इतने में ही बड़े ठाकुर आ गये...."

"वह कैसे वहाँ पहुँच गया ?....उसे पता कैसे लगा जंगी ?"

"चाहे जैसे लगा हो...." बोला वह—"बड़े ठाकुर के साथ बहुत से लठैत भी थे। उनसे हमारी भिड़न्त हो गई।"

"फिर क्या हुआ, जंगी ?"

"और हम हार गये। बड़े ठाकुर ने मुझे बन्दी बना लिया।" जंगी ने कहा।

"वह बुढ्ढा ठाकुर बड़ा ही शैतान है, जंगी ! उसके हाथों में पड़कर तो तुमने बहुत कष्ट उठाया होगा !"

"कुछ न पूछो ठाकुर ?...." जंगी बोला—'काफी तकलीफें उठाई, ठाकुर !....इतना ही नहीं फंसाने के लिए सुनहरा जाल फैलाया उसने—कहा कि तुम मेरा साथ दो तो घर तुम्हारा सोने से भर दूँगा..."

"फिर क्या कहा तुमने ?"

"पहले तो मैं इनकार करता रहा, ठाकुर !....मगर बाद को सोंचा कि अगर मैं स्वीकार न करूँगा तो यह निशाचर मेरी जान ले लेगा....अतः विवश होकर मुझे स्वीकार करना पड़ा।"

"तुमने उसका सौदा स्वीकार कर लिया, जंगी ?...." चौंक कर पूछ बैठा जगदीश।

"और क्या करता ठाकुर ?—इनकार करके उसकी क्रोधाग्नि का शिकार बनता क्या ?...."

"यह तुमने बहुत बुरा किया, जंगी !..." हताश स्वर में बोला जगदीश।

"ठाकुर ! मैं कच्चा खिलाड़ी नहीं हूँ...." वह कुटिल मुस्कान मुस्करा कर बोला—"मैंने उसका साथ देना स्वीकार कर अपने को बन्धन मुक्त करा लिया है और तुम्हारे पास लौट आया हूँ। अब तुम्हारा साथ देने से मुझे कौन रोक सकता है ?"

अदृश्य खुशी की हंसी हँस पड़ा जगदीश।

"अरे ठाकुर ! ऐसे बेवकूफों को उल्लू बनाते हुए मुझे कितनी देर लगता है ?...." जंगी ने कहा—"तुम देखते रहना। मैं इस मुकदमे में गवाही देकर सारा मामला ही पलट दूँगा। फिर जब हम लोग इधर की झंझटों से खाली हो जायँगे तो उस बड़े राजा और कमल से भी समझ लेंगे...."

"ठीक कहते हो तुम !..." जगदीश बोला—"अब मेरी सारी चिन्तायें दूर भाग गईं ! तुम्हें देखकर हृदय में बहुत धीरज बँध गया है जंगी ?"

इसके बाद दोनों बड़ी देर तक आपस में घुल-मिलकर जाने क्या-क्या बातें करते रहे।

उस ससय—

करमपुर में—

राजमणि अपने कमरे में बैठी थी। वह अपने भविष्य के विषय में चिन्तन कर रही थी। कमल के साथ क्षणिक आवेश में आकर भाग तो आई थी वह, मगर इस समय उसे पिता की याद बुरी तरह सताने लगी थी।

वह पिता जिसने जन्म दिया, जिसने इसके कोमल शरीर को स्नेह और प्यार से विकसित किया था। वे जितने भी बुरे थे, मगर

थे तो उसके पिता।

सोंच रही थी वह—उसने कमल के साथ भाग आकर अच्छा नहीं किया। उसने अपना प्रेम देखा, अपना सुख देखा, अपनी भावनायें देखी—और अपने पिता के शत्रु के साथ भाग आई।

उसने अपने पिता का प्यार नहीं देखा, उनके सुख-दुःख की कल्पना नहीं की, उनकी भावनाओं को ठोकर मारी, उनके मुख पर जमाने भर की कालिख पोत दी—

वह उनके लिए, अपने जन्मदाता के लिए कुछ भी त्याग न कर सकी। कितनी कृतघ्न है वह!

राजमणि का हृदय अपनी करनी पर हाहाकार कर उठा।

उसी समय उसके नयनों के समक्ष कमल की सौम्य मुखाकृति नृत्य कर उठी।—कितना सुन्दर है वह? कितना सुशील? कितना सरल?

अपनी कृतघ्नता की बात भूल गई वह और प्रियतम का चिन्तन करने लगी। उसके अन्तराल में आत्मसमर्पण की भावना जाग्रत हो बैठी।

अपने आप ही वह गुनगुनाने लगी—

मैं उनकी बन जाऊँ रे, मैं उनकी बन जाऊँ!
पल छिन उनके पंथ निहारूँ, नैनन दीप जलाऊँ,
मैं नैनन दीप जलाऊँ—
मैं उनकी बन जाऊँ रे, मैं उनकी बन जाऊँ!

धीरे से कमल आकर उसके पीछे खड़ा हो गया, परन्तु गाने में तल्लीन रहने के कारण वह उसका आना न जान सकी। मादक स्वर में गाती रही वह—

खड़ी हूँ मैं पिया के पथ में
आयें वो चन्दा के रथ में
मैं मन ही मन कण्ठ लगाऊँ, मैं दूर खड़ी शरमाऊँ—
मैं दूर खड़ी शरमाऊँ रे
मैं उनकी बन जाऊँ, मैं उनकी बन जाऊँ रे!

गाना समाप्त हुआ तो कमल ने अपनी हथेलियों से उसकी आँखें बन्द कर लीं।

चौंक पड़ी वह, उस अचानक एवं मादक स्पर्श से।

उसके मदभरे अवयव में गुदगुदी भर उठी।

"कौन है ?..."

कमल मौन खड़ा रहा।

"कौन है यह शरारत करने वाला ?...." अन्दर-ही-अन्दर मुस्कुराती हुई वह बोली।

"वही जो ऐसा करने का अधिकार रखता है—तुम्हारा पिया ?" कमल बोला—"चन्दा के रथ पर चढ़कर आ गया है...अब लो, अपने कण्ठ से लगा लो..."

कमल ने राजमणि की आँखों पर से हथेली हटा ली।

"हटिए ! आप तो बड़े वैसे हैं !...." शरमाती हुई बोली राजमणि।

"शरमाना हो तो जरा दूर हटकर शरमाओ..." कमल बोला।

"आप ही जरा दूर हटकर खड़े हो जाइये न...." मधुर वाणी में बोली वह—"आपको देखकर मेरे पैर बोझिल हो उठे हैं। अपनी जगह से उन्हें हटाना मुश्किल हो गया है मेरे लिए।"

"ऐसी क्या खूबी है मुझमें ?"—कमल ने पूछा।

"मैं क्या जानूँ ?...." बोली राजमणि।

"तुम्हारा सम्पर्क मेरे लिए अमृततुल्य है, रानी ?...." लज्जा से सिकुड़ गई राजमणि के गालों को अपने हाथ में लेकर कमल बोला।

"और आपका सम्पर्क मेरे लिए जीवन-दायिनी संजीवनी-बूटी है, प्राण !"

"राजमणि !" आकुलता से कमल ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"कहिए ?"

"किसकी बनने का स्वप्न देख रही थीं तुम ?"—पूछा कमल ने।

"आपकी—और किसकी !...." राजमणि ने सलज्ज भाव से उत्तर दिया—"परन्तु उस स्वप्न के पूरा होने में अभी विलम्ब है, तब

तक के लिए अपनी व्याकुलता पर नियंत्रण रखिये....!"

"प्रतीक्षा में बेचैनी जरूर है, प्राणेश !...." राजमणि ने कहा — परन्तु प्रतीक्षा के बाद जो सुख मिलता है, वह अवर्णनीय होता है...."

"तुम बड़ी छलिया हो !...." कमल बोला।

"छलिया तो आप हैं...मुझे उतनी दूर से छलकर यहाँ घसीट लाये ..."

"कमल ! ओ कमल !...."

ठकुराइन की आवाज आई।

ठकुराइन आईं बोलीं—"क्यों रे कमल, तू बहू को अभी से परेशान करने लगा ?"

"नहीं तो माता जी !...." कमल बोला।

"मैं जानती हूँ — तू बात बनाना खूब जानता है...." ठकुराइन बोली—"जब से बहू आई है, तब से तू मुझे एकदम भूल गया है। पता ही नहीं चलता कि तू करमपुर में है या कहीं और ?"

"मैं तो हवेली में ही हूँ, माताजी !"

"यह क्यों नहीं कहता कि बहू के आँचल में छिपा रहता है ..." कहकर हँस पड़ीं ठकुराइन।

कमल और राजमणि दोनों शरमा गये।

"कल तेरे मुकदमे की तारीख है...." ठकुराइन पुनः बोलीं—"बड़े राजा की तबीयत खराब है। पता नहीं कल कचहरी जा सकेंगे या नहीं ?"

"मैं जाऊँगा, ठकुराइन ! .." आवाज आई।

सब ने घूमकर देखा—दरवाजे पर बड़े राजा खड़े हैं। शरीर उनका बीमारी से अत्यन्त शिथिल हो गया था।

"तुम्हारी तबियत तो खराब है, ठाकुर !...." ठकुराइन ने कहा— "कैसे जा सकते हो तुम ?"

"कमल के मुकदमे की तारीख रहे और मैं न जाऊँ...यह नहीं हो सकता, ठकुराइन ! मैं अवश्य जाऊँगा....तुम चिन्ता न करो।"

ठाकुर बोले।

राजमणि वहाँ से हटकर दूसरे कमरे में चली गई।

"क्यों न चिन्ता करूँ, ठाकुर? तुम ठीक से चल-फिर भी नहीं सकते और मैं चिन्ता न करूँ, यह कैसी बात कहते हो तुम?"

"तुम भी ठकुराइन जरा-जरा सी बात में घबड़ा उठती हो...मेरी तबीयत कोई ज्यादा खराब थोड़े ही है।"

"जो समझ में आये करो, ठाकुर! मैं तो तुम्हारे आगे हमेशा हार मान जाती हूँ..."

"एक बात का अन्देशा है, ठकुराइन!"

"क्या?...."

"जगदीश के साथी जंगी को मैंने बन्दी बना लिया था...." बोले ठाकुर—"उसने मेरा साथ देना भी स्वीकार कर लिया था। उसकी गवाही से हमारे मुकदमे में जान आ जाती, मगर वह दगाबाज आज सुबह से ही गायब है।"

"क्या वह तुम्हारा कुछ नुकसान कर सकता है, बड़े राजा?...." —पूछा ठकुराइन ने।

"बहुत बड़ा नुकसान कर सकता है वह..." ठाकुर बोले—"उस पर विश्वास कर, मुकदमे की बहुत सी भेदभरी बातें मैंने उसे बता दी थी। अब वह उन बातों को जगदीश से कह कर उसे सावधान कर देगा...."

"ऐसी गलती तुमने क्यों की, बड़े ठाकुर?" ठकुराइन ने कहा—"इन्सान का चेहरा पढ़ने में तो तुमसे कभी भूल नहीं हुई?"

"इस बार मैं चूक गया, नीलमुखी!" ठाकुर हताश स्वर में बोले।

दूसरे दिन!

मुकदमे की तारीख थी।

प्रातःकाल से ही कमल और ठकुराइन कचहरी चलने की तैयारी कर रहे थे।

सब तैयारी समाप्त कर उन्होंने शहर की ओर प्रस्थान किया।

जब ये लोग कचहरी पहुँचे, उसके पहले ही जगदीश आ पहुँचा था। उसके साथ जंगी भी था।

जंगी को जगदीश के साथ देखकर, ठाकुर शंकित हो उठे।

जंगी की मुस्कुराहट में व्यंग का आभास पाकर ठाकुर का शरीर क्रोध से सिहर उठा।

पुकार हुई।

मुद्दई और मुद्दालेह हाजिर हुए।

जगदीश का बयान शुरू हुआ। उसने नियमानुसार शपथ ली बोला—"मुझपर कमल ने जो दावा दायर किया है, वह सर्वथा असत्य है। मैं जानता हूँ कि कमल ठाकुर विजय बहादुर सिंह का बेटा नहीं है...."

"क्या आप इसका प्रमाण दे सकते हैं ?" बड़े ठाकुर के वकील ने कहा।

"समय आने पर मैं इसका प्रमाण दूँगा..." जगदीश ने कहा।

"क्या ठकुराइन विजय बहादुर की पत्नी नहीं हैं ?"

"हैं...." जगदीश बोला—"मगर उनका चरित्र ठीक नहीं है। मैं उनकी चरित्रहीनता के प्रमाणस्वरूप ठाकुर विजय बहादुर के निकट-सम्पर्क में रहने वाले एक विश्वस्त व्यक्ति जंगी को पेश करूँगा। वह अपनी बातें सप्रमाण उपस्थित करेगा....ठाकुर विजयबहादुर की मृत्यु सन्देहजनक अवस्था में हुई थी। मेरा विश्वास है कि यह भी ठकुराइन और बड़े ठाकुर के षड्यन्त्र का ही परिणाम था। बड़े ठाकुर प्रेम में निराश होकर विजय बहादुर के शत्रु बन गये, परन्तु दिखाने के लिए वे उनके मित्र बने रहे। समय आने पर इन्होंने ठकुराइन को मिला लिया और तब दोनों ने मिलकर विजय बहादुर की जान ले ली। ठकुराइन अब तक बड़े ठाकुर के पास हैं....दावे के साथ मैं यह कह सकता हूँ कि कमल ठकुराइन का पाप-पुत्र है। ठाकुर विजय बहादुर का विश्वासपात्र होने के नाते, मैं यह निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि जब उनकी मृत्यु हुई थी, ठकुराइन को गर्भ नहीं था...."

"......"

साँस रोककर बड़े ठाकुर जगदीश के आक्षेप सुन रहे थे।

जगदीश कह रहा था —"जब ठाकुर विजय बहादुर की मृत्यु हुई और ठकुराइन भाग गई तो मेरे सिवाय उस जमींदारी का कोई भी वारिस नहीं था, अत: मैं ही उसका मालिक हुआ....अब भी मैं ही उसका असली मालिक हूँ, क्योंकि चरित्रहीनता के कारण ठकुराइन अब उस जायदाद की हकदार नहीं रहीं...."

"आपने अपनी किसी बात का प्रमाण नहीं दिया ....!" बड़े ठाकुर के वकील ने कहा।

"सब प्रमाण मेरा गवाह जंगी देगा...." जगदीश बोला।

"गवाह को उपस्थित करो !" न्यायाधीश ने आज्ञा दी।

जंगी की पुकार हुई। वह आकर कठघरे में खड़ा हो गया। सच-सच कहने की उसने शपथ ली। बोला वह—"मैं हजूर के सामने सत्य कहने की शपथ ली है तो अब सत्य ही कहूँगा।"

"जगदीश ठाकुर को तुम जानते हो...." पेशकार ने पूछा।

"जी हाँ, शुरू से ही मैं उनका दाहिना हाथ रहा हूँ। इनकी कोई बात मुझसे छिपी नहीं है..." जंगी बोला—यह सुनकर जगदीश चौंक पड़ा।

"तुम जो कुछ जानते हो साफ-साफ कहो !" न्यायाधीश ने कहा।

"मैं कहूँगा हजूर !...."जंगी बोला —"मैं कहूँगा, मगर कहने के पहले हजूर से अपने लिए माँफी चाहता हूँ, क्योंकि जगदीश के बुरे कामों में मेरा भी हाथ था !"

जगदीश ने आग्नेय नेत्रों से जंगी की ओर देखा।

परन्तु जंगी कहता गया—"जिस समय विजयबहादुर जीवित थे, यह जगदीश उनका कारिन्दा था। विजयबहादुर उसपर बहुत विश्वास करते थे, परन्तु उन्हें क्या मालूम था कि यह दूध से पला हुआ नाग, एक दिन उन्हीं को डस लेगा ?"

जंगी का आकस्मिक परिवर्तन देखकर बड़े ठाकुर की मुखाकृति पर आश्चर्य की रेखा दौड़ गई !

और जगदीश दाँत पीसकर रह गया।

"जब विजय बहादुर की शादी हुई और ठकुराइन आईं, तो यह जगदीश उनके सौंदर्य पर लट्टू हो गया...." जंगी कहता रहा—'इसने बहुत जाल बिछाया मगर ठकुराइन इसके पंजे में न आईं—तब यह जहरीला नाग फुफकार उठा। इसने उनका विनाश करने के लिए मेरे सामने कसम खाई और मुझसे सहायता की याचना की। मैंने धन के लोभ में आकर इसका साथ देना स्वीकार कर लिया। यह बहुत प्रसन्न हुआ और उठते-बैठते जमींदारी हड़पने का स्वप्न देखने लगा। उसने मुझे विजय बहादुर की हत्या करने के लिए कहा, मगर मैं तैयार नहीं हुआ।"

"तुमने जगदीश का साथ देना स्वीकार किया तो फिर हत्या करने से इनकार क्यों किया?" बड़े ठाकुर के वकील ने पूछा।

"मैं विजय बहादुर के खून का पाप अपने सिर पर लेना नहीं चाहता था...." जंगी बोला—"क्योंकि वे बहुत सरल और दयालु थे...मेरा बहुत-सा उपकार भी उन्होंने किया था...मुझसे निराश होकर उसने स्वयं उनकी हत्या करने का संकल्प किया। हाथों में ताकत थी नहीं और न तो दिल ही इतना मजबूत था कि विजय बहादुर के कलेजे में खंजर भोंक सकता। विवश होकर इसने विष का सहारा लिया। मैंने अपनी आँखों से उनके दूध के गिलास में इसे जहर मिलाते देखा था...."

"तुम वहाँ क्यों गये थे?" वकील ने पूछा।

"मैं हाथ में लाठी लेकर इसकी रक्षा के लिए खड़ा था, क्योंकि यह चोरी-चोरी उनके कमरे में घुसा था...." जंगी बोला—"ठाकुर विजय बहादुर तो मर गये, मगर ठकुराइन भाग गईं। वे बहुत पहले ही इसके बुरे विचारों से अवगत हो चुकी थीं। मुझे यह मालूम था कि उस समय ठकुराइन को लगभग दो तीन महीने का गर्भ था...."

"यह कैसे जानते थे तुम?" ठाकुर के वकील ने पूछा।

"मेरी स्त्री उस समय जीवित थी..." जंगी बोला—"और वह ठकुराइन की विश्वासपात्र नौकरानी थी। यह बात उसे अच्छी तरह मालूम थी। उसने ही मुझे बताया था..."

"क्या तुमने ठकुराइन को अपनी आँखों से कभी देखा था ?"

"नहीं, ठकुराइन देवी थीं ...." जंगी ने कहा—"उनका मुख मैंने कभी नहीं देखा और न तो उन्होंने ही मुझे देखा था !"

'अब तुम जा सकते हो...."

"हजूर ! अभी मुझे और भी कुछ कहना है...." जंगी ने प्रार्थना की ।

"कह सकते हो ?"

"इधर जब जगदीश को मालूम हो गया कि कमल ठकुराइन का ही लड़का है तो यह उसकी जान का ग्राहक बन गया । मैं भी इसकी सहायता में था....मगर हम दोनों कमल को मार सकने में असमर्थ रहे । पिछले सप्ताह जगदीश ने मुझे ठकुराइन की हत्या करने के लिये भेजा था । मगर मुझे बड़े राजा ने गिरफ्तार कर लिया । मुझे बहुत क्रोध आया अपनी असफलता पर...परन्तु बड़े राजा के सद्व्यवहार ने, न केवल मेरे क्रोध पर ही विजय पाई, वरन् मेरे जीवन में महान परिवर्तन की सृष्टि कर दी और मेरे हृदय में पश्चात्ताप की भयानक आग जल उठी । यही मेरी कहानी है । मैंने जगदीश का साथ अवश्य दिया है, मगर इसके मूल में मेरी गरीबी थी । मेरा अपराध केवल यह है कि मैंने पापी का साथ दिया, परन्तु अब पछता रहा हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि मेरा अपराध क्षमा किया जाय...."

जंगी बैठ गया ।

जंगी का बयान सुनकर जगदीश जैसे अर्ध-विक्षिप्त सा हो गया—उसके मुख पर सफेदी छा गई । उसे स्वप्न में भी यह आशा नहीं थी कि जङ्गी उसे इस प्रकार धोखा देगा ।

जंगी ने बड़े ठाकुर के पास जाकर जुहार की और ठाकुर ने उसकी पीठ ठोंकी ।

"जगदीश शरण सिंह को गिरफ्तार किया जाय...." न्यायाधीश का गम्भीर स्वर गूँज उठा ।

तुरन्त ही जगदीश के कांपते हाथों में हथकड़ियाँ पड़ गईं ।

फैसले की तारीख अगले दिन रख दी गई ।

जगदीश जेलखाने भेज दिया गया।

दूसरे दिन जगदीश को आजन्म करावास की सजा हो गई। साथ ही अमिलहा का वास्तविक उत्तराधिकारी कमल मान लिया गया।

फैसला सुनकर ठकुराइन के नेत्र सजल हो उठे। जब ठाकुर उनकी पालकी के पास आये तो उन्होंने उनके पैरों की धूल मस्तक पर लगाते हुए कहा—"देवता ! तुम धन्य हो...."

"क्या कहती हो ठकुराइन ?...." ठाकुर बोले—"क्या अब भी तुम मुझे गैर ही समझती हो !"

उसी दिन सबको लेकर ठाकुर गाँव लौट आये। जंगी भी उनके साथ था।

जगदीश का लड़का गोपाल न जाने कहाँ चला गया, उसे कोई जान भी न सका।

शायद कहीं छिपकर वह अपने पिता के अपमान का बदला लेने की बात सोंच रहा हो।

बड़े ठाकुर ने अपने कारिन्दा को अमिलहा भेज दिया और उसे सावधान कर दिया कि वहाँ के प्रबन्ध में जरा भी त्रुटि न हो। कारिन्दा उसी दिन रवाना हो गया।

१७

जब से करमपुर में टामसन का पदार्पण हुआ था, तब से वहाँ के हिन्दू-मुसलमानों का आपसी मनमुटाव बढ़ता जा रहा था।

वह साहब 'फूट डालो और शासन करो' की नीति का प्रयोग कर रहा था और धर्मान्ध हिन्दू-मुसलमान, एक दूसरे के शत्रु बन बैठे थे।

बकरीद का त्योहार नजदीक आ रहा था।

मुसलमानों में जो स्फूर्ति आ गई थी, वैसी स्फूर्ति पहले कभी देखने में नहीं आई थी। स्फूर्ति के पीछे एक भीषण तूफान छिपा हुआ था।

गाँव के हिन्दू-मुसलमान—दोनों उस साहब को अपना हितैषी समझ बैठे थे, मगर वह किसी का भी मित्र न था। वह भाई-भाई में फूट की दीवाल खड़ी करने वाला एक भीषण जन्तु था।

एक दिन शाम को उसके बँगले पर गाँव के बहुतेरे मुसलमान एकत्र थे।

साहब उनसे कह रहा था—"तुम्हारी बकरीद तो नजदीक आ गई है। क्या तुमलोग ने गोकुशी का इन्तजाम किया है?..."

"नहीं साहब!...." एक बोला—"गोकुशी तो इस गाँव में कभी नहीं हुई।"

"तभी तो कहता हूँ कि तुम लोग बुजदिल हो...." साहब ने कहा—"तुम्हारे दिल-दिमाग हिन्दुओं की गुलामी करते-करते पत्थर बन गये हैं। इन जलील हिन्दुओं ने अब तक तुम्हारे मजहबी कामों में टाँगें अड़ाई हैं....तुम्हारे मजहब में बकरीद के दिन गोकुशी लिखी है, मगर शायद तुम इसे भूल चुके हो...."

"हम गोकुशी जरूर करें, मगर हमें बड़े राजा का डर है।"

"बड़े राजा हिन्दू हैं...." साहब ने कहा—"भला वे कब तुम्हें गोकुशी करने की इजाजत देंगे?....तुम्हें उसके लिए बगावत करनी होगी, मैं तुम्हारा साथ दूँगा। ठाकुर को कोई हक नहीं कि वह तुम्हारे मजहबी कामों में दखल दें!"

"आप का सहारा पाकर हम इस साल गोकुशी करेंगे...." सब चिल्ला पड़े।

"शाबास!..." साहब बोला—"गोकुशी मस्जिद में होनी चाहिये। तुम्हारे मजहब में पाक जगह पर कुर्बानी लिखी है..."

"मगर कल्लन मियाँ यह बात कभी मंजूर नहीं करेंगे साहब बड़े राजा के जबरदस्त हिदायती हैं वे।"

"तुम अपने बूढ़े मौलाना को निकाल बाहर करो और अपने लिए कोई दूसरा मुल्ला चुन लो!"

"यही होगा..." उपस्थित मुसलमानों ने साहब को आश्वासन दिया। दूसरे दिन यह बात सारे गाँव में फैल गई कि बकरीद के

दिन मस्जिद में गाय काटी जायगी।

हिन्दू क्रोध से उन्मत्त हो उठे।

यह कभी नहीं होगा—

हिन्दू गाय की कुर्बानी होते कभी नहीं देख सकेंगे।

सब हिन्दू एकत्रित हुए और अपने सहायक टामसन के बँगले पर दौड़ गये।

साहब उस समय आराम-कुर्सी पर बैठा हुआ चुरुट पी रहा था।

इन्हें देखकर वह आत्मीय ढंग से बोला—"कहो भाई! क्या बात है?"

"आप के रहते ऐसा अन्धेर हो, यह बड़े आश्चर्य की बात है...." हिन्दू बोले।

"बात क्या है? सुनूँ भी तो!" साहब ने पूछा—

"बकरीद के दिन मस्जिद में गाय काटी जायगी, क्या आपने नहीं सुना?...."

"नहीं तो!"

"हम लोग यह कभी नहीं होने देगें, साहब! ऐसा काम गाँव में अब तक नहीं हुआ था..."

"ठीक है...." साहब ने कहा—"एक दिन मैंने कहा था कि तुम्हारी सरलता का अनुचित लाभ उठा रहे हैं, मुसलमान लोग। आज तुमने खुद अपनी आँखों से देख लिया। मुसलमान तुम्हें कायर समझते हैं...."

"हम उनको मटियामेट कर देंगे....इस साल बकरीद के दिन हिन्दू और मुसलमान साथ-साथ त्योहार नहीं मनायेंगे—खून की नदियाँ बहेगी गाँव में!" हिन्दू चिल्ला पड़े।

"जरूर बहाना चाहिए, यह तुम्हारे धर्म का सवाल है...." साहब ने कहा—"और अगर कुछ न किया तो बेहद कायर समझे जाओगे तुम लोग। तुम्हें चाहिये कि गाँव के एक-एक मुसलमान का सर काट लो..."

"ऐसा ही होगा..." हिन्दुओं ने सरोष कहा—"गाय का खून

देखने के बदले, हम मुसलमानों का खून देखना पसन्द करेंगे....''

''जाओ तुम लोग, मैं हमेशा तुम्हारी मदद के लिये तैयार रहूँगा।''

हिन्दू चले गये।

ज्यों-ज्यों बकरीद का दिन निकट आने लगा, त्यों-त्यों दोनों वर्गों के शरीर का रक्त ऊष्ण होता गया।

सम्पूर्ण गाँव का वातावरण वीभत्स हो गया।

कल्लन मियाँ मस्जिद से निकाल बाहर किये गये।

वे दौड़े-दौड़े बड़े राजा की हवेली में आये।

ठाकुर उन दिनों बहुत बीमार थे। चारपाई से उठ-बैठ भी नहीं सकते थे।

कल्लन मियाँ उनके सामने आकर रो पड़े।

ठाकुर ने बड़े कष्ट के साथ अपना सर उठाया!

''क्यों रोते हो, मौलाना? क्या तकलीफ है तुम्हें''—उन्होंने पूछा।

''भाई-भाई दुश्मन हो जायँ और मेरी आँखों में आँसू न आयें, यह ताज्जुब की बात होगी, बड़े राजा!'' कल्लन मियाँ बोले।

''कहना क्या चाहते हो तुम?''

''इस साल हमारे गाँव में गोकुशी होगी, बड़े ठाकुर!....''

''गोकुशी!...'' तड़पक बोले ठाकुर—''किसने कहा तुमसे?''

''सबने मिलकर मुझे मस्जिद से निकाल दिया है, सरकार!... यह सारा फसाद उस साहब का है....मस्जिद में खून-खराबी होकर रहेगी...''

''मौलाना!...'' हताश स्वर में बोले ठाकुर—''तुम देख रहे हो कि मैं इस समय कितना बीमार हूँ। ऐसी दशा में इस पागलपन को रोकना मेरे लिए असम्भव है। मैं क्या करूँ कुछ समझ में नहीं आता।''

''तुम्हें यह खून-खराबी रोकनी ही होगी, बड़े राजा!''

''मौलाना! मेरे शरीर की शक्ति, मेरे आँखों की ज्योति, मेरी जबान की ताकत—सब कुछ नष्ट हो गई है इस समय। खैर!

बकरीद का दिन आने दो—देखा जायगा....”

अन्त में भयानकता विकराल रूप धारण कर गाँव वालों के सर पर मड़राने लगी।

बकरीद का दिन आ गया !

कुछ रात रहते ही मुसलमानों ने चुपके से एक गाय मस्जिद में लाकर छिपा ली।

मुसलमानों का सारा गिरोह हथियारों से सुसज्जित होकर मस्जिद में आ डटा। टामसन भी वहाँ पहुँच गया। मस्जिद के दरवाजे अन्दर से बन्द कर लिए गये।

हिन्दुओं को जब यह समाचार मिला तो वे क्रोध से बावले हो उठे।

उनके एक बहुत बड़े गिरोह ने चारों ओर से मस्जिद को घेर लिया।

मस्जिद के अन्दर टामसन को देखकर हिन्दुओं को महान आश्चर्य हुआ।

सब हिन्दुओं ने गाय बाहर करने के लिए गगनभेदी नारा लगाया।

मगर मुसलमानों ने इस पर कुछ ध्यान न दिया।

गोकुशी की तैयारी होती रही।

हिन्दू आग बबूला हो गये और वे मस्जिद का दरवाजा तोड़ने की कोशिश करने लगे। चारों ओर कोलाहल मच गया।

आज हिन्दुओं ने संकल्प कर लिया था कि वे मस्जिद की एक-एक ईंट उजाड़ डालेंगे, एक-एक मुसलमान को कब्र में सुला कर ही दम लेंगे, परन्तु गाय के गले पर छुरी न चलने देंगे।

कल्लन मियाँ ग्रामवासियों का पागलपन देखकर घबड़ा गये थे।

जिस मस्जिद का निर्माण उन्होंने एक-एक ईंट भीख माँग कर कराई थी, वह आज धराशायी हो जायगी—एक भाई दूसरे भाई के लाल-लाल रक्त से अपनी प्यास बुझायेगा।

कितना वीभत्स दृश्य होगा ?

सोंचते ही कल्लन मियाँ का रोम-रोम काँप उठा ।

वे हवेली की ओर दौड़े ।

बड़े ठाकुर तकिये के सहारे बैठकर दवा पी रहे थे ।

कल्लन मियाँ चिल्ला पड़े—"बचाओ ठाकुर !....मेरी लाज बचाओ....मेरी मस्जिद बचा लो....उसकी ईंटों को जमीन चूमते देख कर मेरी जान निकल जायगी, बूढ़े राजा !"

"क्यों इतने अधीर हो कल्लन मियाँ ?"

"गजब हो रहा है, सरकार !...." कल्लन मियाँ बोले—'जल्द चलो तुम, नहीं तो खुदा की पाक जगह में नापाक इन्सानों का खून बहना शुरू हो जायगा....मस्जिद में गाय कट रही है। हिन्दुओं ने मस्जिद घेर ली है....चलो जल्दी करो ठाकुर।"

"मौलाना !...." रूखे स्वर में बोले ठाकुर—"क्या तुम चाहते हो कि हिन्दुओं को रोक दूँ और मस्जिद में गाय कटने दूँ ?"

"नहीं ठाकुर, नहीं ! मेरा यह मकसद हरगिज नहीं है..." मौलाना ने कहा—"मेरा कहना यह है कि तुम यहाँ के राजा हो। रियाया तुम्हारी औलाद है। तुम्हारी जबान में वह ताकत है जो हिन्दू और मुसलमान, दोनों को इस नापाक इरादे से रोक देगी। किसी में इतनी हिम्मत नहीं कि वह तुम्हारी हुक्म-उदूली कर सकें..."

"मैं चलूँगा कल्लन मियाँ !...." ठाकुर का गर्व जाग्रत हो उठा—"देखूँगा कि कौन मर्द का बच्चा मुझे देखकर खड़ा रह सकता है ?"

ठाकुर लड़खड़ाते पैरों से उठ खड़े हुए ।

एक लठैत ने उन्हें अपने कन्धे का सहारा दिया ।

मस्जिद की ओर चल पड़े ठाकुर ।

उस समय उन्मत्त हिन्दुओं ने मस्जिद के द्वार पर भीषण आघात करना प्रारम्भ कर दिया था और दरवाजे तेजी के साथ काँप रहे थे ।

"ठहरो !...." गम्भीर स्वर सुनाई पड़ा ठाकुर का ।

हिन्दुओं के हाथ रुक गये ।

धीरे-धीरे चलते हुए ठाकुर पास आ गये ।

"क्या है ?....यहाँ इतनी भीड़ क्यों लगा रखी है ?"—ठाकुर ने

पूछा।

"मस्जिद के अन्दर गाय बँधी है, बड़े राजा! मुसलमान उसे काटना चाहते हैं"—हिन्दू बोले।

"तो तुम लोग यहाँ क्यों आये हो?"

"हम गाय नहीं कटने देंगे...." उत्तेजित स्वर में हिन्दू चिल्ला पड़े।

"चले जाओ यहाँ से...."—ठाकुर ने आज्ञा दी।

फिर भी हिन्दू निश्चल खड़े रहे।

"मैं कहता हूँ कि हट जाओ यहाँ से...." गरज उठे ठाकुर। उनके गम्भीर स्वर से हिन्दुओं के पैर काँप उठे।

सब लौट पड़े। ठाकुर की आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस किसी में न था।

थोड़ी देर में वह स्थान जन-शून्य हो गया।

कल्लन मियाँ के साथ ठाकुर मस्जिद के दरवाजे पर आये।

"दरवाजा खोलो!...." कमजोरी की हालत में भी, ठाकुर की आवाज में दहला देने वाली शक्ति थी।

अंदर के मुसलमानों में खलबली मच गई, ठाकुर का स्वर सुनकर।

साहब ने धीरज बँधाया।

"दरवाजा खोल दो—नहीं तो तुम लोगों की खैर नहीं..." चिल्ला उठे ठाकुर।

साहब के बहुत रोकने पर भी मुसलमानों ने मस्जिद का द्वार खोल दिया। अन्दर साहब को देखकर ठाकुर की भवें तन गईं।

"तुम भी हो यहाँ!...." ठाकुर दाँत पीसकर बोले—"क्या यह भी तुम्हारी ही जमीन है, साहब?"

साहब ठाकुर का उग्र रूप देखकर सहम गया। कुछ बोला नहीं।

"क्या हो रहा था?"—ठाकुर ने मुसलमानों से पूछा।

"हम अपनी बकरीद मना रहे थे।" एक ने साहस कर कहा।

"यह गाय यहाँ क्यों लाई गयी है?"

"हमारे मजहब में आज के दिन गोकुशी लिखी है।" दूसरा दबी

जबान से बोला।

"चुप रहो नालायकों !...." तड़पकर बोले ठाकुर—"इस गोरे ने तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है....आज से पहले क्या तुम अपना मजहब भूल गये थे ?"

"........"

सब निस्तब्ध, निश्चल खड़े चुप रहे। बड़े राजा से वादाविवाद करने का साहस किसी को नहीं हुआ।

साहब आगे बढ़ा।

बोला—"किसी के मजहबी काम में दखल क्यों देते हो, ठाकुर साहब ?"

"तुम चुप रहो जी !....ज्यादा हिमाकत की तो तुम्हारी हड्डी-पसली चूर कर दूँगा..." फिर मुसलमानों को संबोधित कर बोले—"तुम सब इस बेईमान के बहकावे में आकर अपने आप को क्यों भूल गये ? याद रखो मेरे रहते तुम दोनों भाई आपस में नहीं लड़ सकते। अगर तुम खून पीना चाहते हो तो उठाओ छुरा, मेरा कलेजा चीरकर मनमाना खून पी लो...."

"........"

सहमकर दो पग पीछे हट गये मुसलमान।

"बढ़ो आगे....उठाओ छूरा !" गरज पड़े बड़े राजा।

"...."

"नहीं है हिम्मत ?...." ठाकुर बोले—"एक बेकस की ही जान ले सकते हो तुम लोग ? शर्म करो बेईमानों ! डूब मरो चिल्लूभर पानी में...."

हाँफने लगे ठाकुर।

मुसलमान भयभीत होकर खड़े रहे। बड़े राजा को इतना उग्र उन्होंने कभी नहीं देखा था।

"इस गाय को मस्जिद से बाहर कर दो !" ठाकुर ने आज्ञा दी।

उनके स्वर में न जाने कैसी शक्ति थी कि गाय तुरन्त स्वतंत्र कर दी गई।

ठाकुर टामसन के आगे खड़े हो गये।

"देख लिया ? ..." वे बोले—"देख लिया न कि मेरी जबान में कितनी ताकत है ? इस गाँव का एक जर्रा भी मेरी आज्ञा के बिना नहीं हिल सकता...तुम सर पटक कर मर जाओ, मगर तुम्हारी विभेदनीति मेरे रहते नहीं चल सकेगी।"

"तुम मेरा अपमान कर रहे हो, ठाकुर ?"

"तुम कुत्ते हो...." ठाकुर ने आवेश में कहा—"तुम्हें ठोकर मारकर यहाँ से निकालना पड़ेगा...."

"अपनी जबान काबू में रखो ठाकुर !...." टामसन क्रुद्ध स्वर में बोला—"मैं तुम्हें बरबाद कर दूँगा...."

"मैं नहीं, तुमने खुद बरबाद होने की राह पकड़ ली है...." ठाकुर ने कहा।

"मैं तुम्हारी जमींदारी तक जब्त करा सकता हूँ।"

"होश की बातें करो, टामसन ?" ठाकुर बोले—"तुम्हारा गर्व तुम्हें खा जायगा, तुम कौड़ी के तीन हो जाओगे।"

"मैं तुमसे समझ लूँगा, ठाकुर !"

'जो करते बने कर लेना।"

"मैं जबान खिचवा लूँगा !"—साहब बोला।

"कुत्ते !...." तड़प उठे ठाकुर— "इसे ढकेल कर मस्जिद से बाहर कर दो !"

उन्होंने मुसलमानों को आज्ञा दी।

मुसलमानों ने साहब को उठाकर बाहर ढकेल दिया।

साहब धूल झाड़ता हुआ अपने बंगले की ओर भागा।

"हमें माफ कर दो, बड़े सरकार !" बहुत ही दीन बनकर मुसलमानों ने क्षमा-याचना की।

"जाओ, हमने माफ किया...." ठाकुर बोले—"तुम इन्सान हो, इन्सान की तरह रहना सीखो ! खुदा तुम्हें अक्ल दे।"

उसी दिन !

शाम को ठाकुर की हवेली में गाँव के सभी हिन्दू और मुसलमान

एकत्र हुए ।

रुग्ण ठाकुर मसनद के सहारे बैठे थे ।

आज उस गाँव की पुरानी शान्ति वापस आ गई थी और हिन्दू-मुसलमान साथ-साथ बैठे थे - जैसे सगे भाई हों ।

बड़े राजा बोले—"तुम लोगों ने मुझे इस अवस्था में जो दुःख दिया है, वह तुम्हारे लिये लज्जा की बात है । अपने-अपने धर्म पर चलते हुए भी, तुम लोग आपस में भाई-भाई बने रह सकते हो । यदि तुम संगठित रहोगे, तो कोई भी तुम्हारा बाल बाँका नहीं कर सकता । मुझे यह देखकर संतोष हुआ है कि तुम्हारा पागलपन दूर हो गया है । याद रखो ! ये अंग्रेज शैतानियत का जामा पहन कर तुम्हारे देश पर हुकूमत कर रहे हैं । फूट डालना ही इनका पेशा है । तुम्हें चाहिये कि तुम अपनी अखण्डता कायम रखो । इनका बहिष्कार करो । देश से बाहर खदेड़ दो इन्हें....ये अपने समुद्र पार के देश में चले जायँ, वहीं रहें, वहीं मरें....बोलो ! तैयार हो तुम लोग ?"

"हम तैयार हैं...."सम्मिलित स्वर शान्त वातावरण में गूँज उठा ।

"कल से कोई भी आदमी उस साहब के यहाँ काम करने नहीं जायगा...." ठाकुर बोले—"जब उसे आदमी ही नहीं मिलेंगे तो वह यहाँ टिक नहीं सकता !....याद रखो ! इन अंग्रेजों को मार भगाने का सबसे उत्तम उपाय है—असहयोग । तुम उनका साथ मत दो, उनकी मदद मत करो, उनकी चीजें मत खरीदो—तब ये चारों ओर से निराश होकर अपने आप ही भाग जाने को बाध्य हो जायगें ।"

दूसरे दिन से कोई भी आदमी साहब के यहाँ काम करने नहीं गया कुछ ही दिनों के बाद साहब का बँगला खाली हो गया ।

१८

करमपुर का आँचल पकड़ कर खड़ी हुई पहाड़ी—
उसकी कमर में लता की तरह लिपटी पड़ी तराई—

और वहाँ भैंसें चराती मेंहदी, अपने नयनों में करुणा का अगाध सागर छिपाये —

भैंसें इधर उधर फैली हरी-हरी घास चर रही थीं और मेंहदी एक छोटी-सी शिला पर बैठी हुई न जानें किसके चिन्तन में तल्लीन थी।

धीरे-धीरे गुनगुना रही थी वह—

प्रीत की ज्योति जलाकर चुप हैं।
मन में आग लगाकर चुप हैं॥
नैनन नीर बहा कर चुप हैं—
रोकर चुप, मुसका कर चुप हैं॥

एक तमाशा नित होता है —
हम हँसते हैं, चित रोता है॥
घर में आग लगाकर चुप हैं।
रोकर चुप, मुसका कर चुप हैं॥

निर्मोही को मीत बनाया—
दिल में यह तूफान बसाया—
हिय में आग लगाकर चुप हैं।
मधुकर हूक दबाकर चुप हैं॥

गुनगुनाना बन्द कर दिया मेंहदी ने।

उस समय उसकी गोद में, आँखों से कई बूँद आँसू टपक पड़े थे।

चौंक उठी वह!

नहीं जानती थी कि करुणा के तीव्र प्रवाह ने उसके नेत्रों में आँसू ला दिये हैं।

वह विस्मृत-सी हो रही थी। करुणा में डूबकर वह अपने आप को भूल गई थी।

चैतन्य हो पर वह सजग होकर बैठ गई।

सोंचने लगी—ये आँसू क्यों?

यह रोना क्यों?

यह हूक कैसी? यह जलन कैसी? यह व्यथा और तड़पन कैसी?

सोंचकर उसका हृदय हाहाकार कर उठा। वह प्रयत्न करने पर

भी कमल को भूल नहीं पाई थी।

वह भँवरा जो उसका रस चूस कर अब दूसरी कली से लिपट पड़ा था—वही अब भी उसके लिए आकर्षण-बिन्दु था।

उसकी सोई हुई स्मृति ने ही पीड़ा को उसकाया था जो नेत्रों से बादल बनकर बरस पड़े थे।

क्या वह नहीं भूल सकेगी वह ?

क्या निर्मोही भँवरे की याद में वह जिन्दगी भर तड़पती रहेगी ?

"मेंहदी...."

किसी ने स्निग्ध स्वर में पुकारा।

चौंककर मेंहदी ने अपनी आँखें पोंछ लीं ! मुड़कर देखा—कमल खड़ा था।

"छोटे राजा !...." मेंहदी के मुख से यह छोटा-सा वाक्य निकला परन्तु हृदय तीव्र गति से चीत्कार कर उठना चाहता था।

"ये आँखों में आँसू क्यों, मेंहदी ?...." कमल ने पूछा।

"ये आँसू निर्मोही हैं....बिना बादल के जब तब बरस पड़ते हैं।" मेंहदी बोली।

"मुझसे छिपाने की कोशिश तुमने जरूर की है...." कमल ने कहा—"मगर हृदय की पीड़ा छिपाने से नहीं छिपती, मेंहदी !"

मेंहदी के हृदय का बाँध टूट चला।

बोली—"नहीं छिप सकती तो लीजिये, हृदय पर से नियन्त्रण हटा लेती हूँ...."

दूसरे ही क्षण मेंहदी की आँखों से अविरल अश्रुधारा बह चली। कपोल गीले हो गये। सिसकियों का क्रम बँध गया।

कमल मेंहदी के पास बैठ गया।

"मेंहदी !...." बोला वह—"मुझे क्षमा कर दो, मेंहदी !"

"मुझे जलाकर, लूटकर, तबाह कर, बरबाद कर, अब तुम क्षमा माँगने आये हो, छोटे ठाकुर !...." मेंहदी ने कहा—'चले जाओ, चले जाओ कमल !....मुझे मेरी तड़पन के साथ अकेला छोड़ दो !"

"मेंहदी ! मैंने तुम्हारे साथ बहुत अन्याय किया है !...."

"पुरुष हमेशा स्त्री के प्रति अन्याय करते आये हैं, भँवरे !.... तुम्हारा दोष नहीं है इसमें....तुम प्रसन्न रहो, तुम्हारी आशा में सफलता के फल लगें, तुम्हारे जीवन में वैभव-विलास के फूल खिलें-- यही मेरी तमन्ना है, यही मेरी खुशी है...मैं अपने इस वियोगी-जीवन से ही तृप्ति पा लूंगी, छोटे राजा !...."

"तृप्ति तो नाली के गन्दे पानी से भी हो सकती है, मेंहदी ! मगर मानव जिस पवित्र जल की आशा करता है, उसके अप्राप्य होने पर महान दुःख होता है...."

"मुझे तो सब कुछ अप्राप्य रहा है। सुख की नहीं, सदा दुःख को ही प्राप्ति हुई है...." मेंहदी ने कहा - "मगर मैं प्रसन्न हूँ, छोटे राजा !....त्याग ही तृप्ति है और वासना ही आकर्षण ! मैंने जो त्याग किया है, उससे मेरी आँखों में आँसू जरूर आये हैं, मगर हृदय की सारी ग्लानि उन अश्रु-प्रवाहों के साथ बह गई है। एक स्त्री के लिए यह परम सन्तोष की बात है कि उसका प्रियतम, सुखी जीवन का भोग कर रहा है—चाहे उसके साथ, चाहे दूसरों के साथ। स्त्री-हृदय की परिभाषा तुम नहीं समझ सकते, छोटे ठाकुर !...."

"तुम मेरे निकट हमेशा पहेली ही बनी रही हो, मेंहदी !...." कमल बोला—"कभी मुझे भूल जाने को कहती हो, कभी मेरी याद में आँसू बहाती हो, कभी राजमणि का सन्देश लाकर मुझे देती हो— तुम क्या हो, यह अब तक मैं नहीं समझ सका...."

"यह पहेली तुम कभी न समझ सकोगे, कमल राजा ! भँवरा क्या जाने कि कलियों में भी जीवन होता है, उनकी पंखुड़ियों को भी सुख-दुःख और करुणा की अनुभूति होती है...."

"मैं वर्षा—ऋतु की एकाएक आ गई बाढ़ में बह गया था, मेंहदी...." कमल बोला—"बाढ़ घट जाने पर पाँव जमीन पर टिक गये हैं, तुम चाहो तो अब आसानी से बचा सकती हो...."

"मैं नहीं बचा सकती तुम्हें....मुझ जैसी कोमल कलिका के लिए रस-लोलुप भ्रमर की प्रकृति बदल देना असम्भव है....मैं असहाय हूँ राजा !....जाओ, राजमणि के पास जाओ। शीघ्र तुम्हारा विवाह

होने वाला है। अन्तिम समय में अपने को बदनाम होने का अवसर मत दो। मुझे स्वप्न की छाया समझकर भूल जाओ...."

"स्वप्न की छाया...."

"हाँ...." मेंहदी वाक्य पूरा होने के पहले ही बोल उठी—"समझ लो तुम कि यह मेंहदी तुमसे स्वप्न में मिली थी....तुम चले जाओ, अभी चले जाओ छोटे ठाकुर! मेरे कोमल हृदय को स्मृति का प्याला पिलाकर बेसुध न बनाओ..."

"मुझे दुःख है, मेंहदी! मैं लज्जित हूँ...."

"एक पुरुष होकर, स्त्री के सामने लज्जित हो, छोटे राजा! शोभा नहीं देता ऐसा कहते तुम्हें। तुम समस्त पुरुष-जाति की निष्ठुरता का अपमान कर रहे हो" मेंहदी आवेश भरे स्वर में बोली—"तुम भी पुरुष हो, जिसने चिरकाल से स्त्री के यौवन को खिलौना समझा है, जिसने स्त्री के सौन्दर्य को, तृप्ति का साधन माना हैं, जिसने हमेशा अपने ठोकरों से स्त्री जाति का सत्कार किया है—वही पुरुष हो तुम कमल! अपनी जातिगत भावना को मत भूलो। भंवरा रस लूटता है, तड़पता नहीं। उसे रस चाहिये, चाहे जिस फूल से मिल जाय। भँवरा गतिशील होता है, स्थिर नहीं ..."

"बस करो, मेंहदी!....बस करो! तुम्हारे मुँह से तीक्ष्ण तीरों की बौछार हो रही है, मेरा हृदय चलनी हुआ जा रहा है...."

"जरा दूसरों का भी हृदय देखा करो, कमल राजा! दूसरों के तीर देखकर, शायद तुम अपना तीर भूल बैठे हो!...."

"मेरी मेंहदी! मुझे माफ कर दो...."

आवेश में आकर कमल ने मेंहदी का हाथ पकड़ लिया।

"अपने को सम्भालो, छोटे राजा!" तड़पकर बोली वह और झटक कर अपना हाथ छुड़ा लिया—"तुम मुझे नष्ट कर राजमणि को भी नष्ट करना चाहते हो अब! मैं ऐसा नहीं होने दूँगी...मेरे शरीर को हाथ न लगाना। यह शरीर अब जीवन पर्यन्त अस्पृश्य रहेगा....जाओ तुम!...नहीं जाओगे! तो....तो, मैं स्वयं चली जाती हूँ।"

तेजी के साथ वह उठी और घने पेड़ों की ओट में दौड़कर लुप्त हो गई।

कमल विस्मय में भरा खड़ा रह गया।

उधर बड़े राजा और ठकुराइन विवाह के प्रबन्ध में संलग्न थे। बड़े राजा की तबीयत अब ठीक हो गई थी।

सारे गाँव में साज-सजावट हो रही थी। सारी प्रजा, अपने छोटे राजा के विवाह का समाचार सुनकर प्रसन्नता से विभोर हो उठी थी।

कार्यकर्तागण अत्यन्त उत्साह के साथ काम कर रहे थे। अन्त में वह शुभ घड़ी आ पहुँची।

सज-धज कर बारात निकली।

कमल राजसी वस्त्र पहने हुए हाथी पर सवार था। बड़े ठाकुर पालकी पर चल रहे थे। विविध प्रकार के वाजों ने सारे गाँव के लोगों में कौतुहल के साथ-साथ उत्सुकता भर दी थी।

घूमते-घामते बारात मस्जिद के पास आई। शाम हो चली थी। उसी समय मुल्ला के अजान की आवाज कानों में पड़ी।

वाजों का बजना तुरन्त रुक गया। बारात निश्चल खड़ी हो गई। दूल्हा हाथी पर से उतर पड़ा और बड़े राजा पालकी पर से।

सबने सिर झुकाकर सम्मान-प्रदर्शन किया।

अब उस गाँव में खुदा और ईश्वर का भेद मिट चला था।

जब तक मस्जिद में नमाज होती रही, सारी बारात निश्चल खड़ी रही। बाजे बन्द रहे।

नमाज समाप्त होते ही बारात चल पड़ी।

रास्ते में मेंहदी का घर था।

मेंहदी अपने दरवाजे पर खड़ी थी। आँखों से अनायास ही आँसू निकले आ रहे थे।

जब बारात सामने आई तो दूल्हे ने मेंहदी की ओर देखा—और मेंहदी ने दूल्हे की ओर।

एक क्षण के लिए चार नेत्र, एक हो उठे।

दोनों के हृदय सिहर उठे। बारात आगे बढ़ गई।

जब बारात दूर निकल गई तो मेंहदी धीरे-धीरे चलकर पगडन्डी पर आई। हाथी के पैरों के नीचे की धूल उठाकर उसने मस्तक से लगाया और पुनः जाकर दरवाजे पर बैठ गई।

रात्रि में जब विवाह के नगाड़े गड़गड़ा उठे और शहनाई मधुर स्वर से बजने लगी तो मेंहदी का हृदय, शीशे की तरह पत्थर पर गिर कर जैसे चूर-चूर हो गया।

वह अब तक दरवाजे पर ही बैठी थी।

उसका पिता बड़े राजा के यहाँ शादी के प्रबन्ध में व्यस्त था।

घर पर वह अकेली थी।

रात्रि का अन्धकार चारों ओर छा गया था, परन्तु उसने अबतक दीपक नहीं जलाया था। अंधेरे में बैठी थी—अपने हृदय का अन्धेरा दूर नहीं करना चाहती थी।

वह बेसुध हो रही थी।

उसी समय अन्धकार का पर्दा चीर कर एक आदमी छिपता हुआ उसके पास आ खड़ा हुआ। मेंहदी चौंक पड़ी।

वह गोपाल था—जगदीश का बेटा गोपाल।

"मेहदी !..." उसने धीरे से पुकारा।

"क्यों आये हो यहाँ गोपाल ठाकुर ?" मेंहदी ने पूछा।

"धीरे बोलो, मेंहदी !...." गोपाल बोला—"बहुत छिप कर आया हूँ...मेरे दिल में प्रतिशोध की आग जल रही है...."

"जलने दो...." मेंहदी बोली—"मैं भी जल रही हूँ।"

"ठीक कहती हो तुम !" गोपाल करूण स्वर में बोला—"मैं तुम्हारी सारी बातें जान चुका हूँ...कमल ने तुम्हें भी नष्ट किया और मुझे भी...."

"तुम भी तो एक दिन मुझे नष्ट करना चाहते थे, गोपाल ठाकुर !...."

"मैं उसके लिए क्षमा माँगता हूँ, मेंहदी !"—गोपाल ने कहा।

"क्या क्षमा माँगने के लिए ही आये हो तुम ?"

"नहीं !...."गोपाल कहने लगा—"मैं तुम्हारे दिल की जलती

हुई आग बुझाने आया हूँ..."

"किस तरह ?" मेंहदी ने पूछा।

"मेंहदी ! हमारी और तुम्हारी आग मिलकर कमल को जला देगी और तब हमारी प्रतिशोधाग्नि भी शान्त हो जायगी...." गोपाल बोला—"कमल ने तुम्हारा और मेरा—दोनों का घर उजाड़ा है। यदि हम और तुम मिलकर कमल से बदला ले सकें तो...."

"कैसा बदला गोपाल ठाकुर ?"

"कमल की जान लेकर हम दोनों सुखी हो सकते हैं !"

"गोपाल ठाकुर !...." तड़पकर मेंहदी बोली।

"धैर्य से काम लो, मेंहदी ! सोच समझकर जबाब दो।"

मेंहदी विचारों में गोते खाने लगी।

अपनी बातों का प्रभाव होते देखकर गोपाल अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

"कैसे कमल की जान ले सकोगे तुम ?" मेंहदी ने पूछा।

"तुम्हारी सहायता से..." गोपाल बोला।

"कैसे ?...."

गोपाल का हाथ क्षण के लिए जेब में गया और उसने एक पुड़िया निकालकर मेंहदी को दिखाई—"इससे, कमल दो घण्टे में ही निर्जीव हो जायगा...."

"क्या है यह ?" मेंहदी ने पूछा।

"जहर !...." गोपाल ने कहा।

चौंक पड़ी मेंहदी !

हृदय उसका दहल उठा।

"क्या विचार है, मेंहदी ?"

"...."

"क्या तुम कर सकोगी ?"

"विचार करूँगी...." मेंहदी ने कहा।

"विचारने से काम नहीं चलेगा, यह काम तुरन्त होना चाहिए...." गोपाल बोला—"लो यह पुड़िया। इसका कुल चूर्ण कमल के पेट में पहुँच जाना चाहिये...."

"अच्छी बात है...." मेंहदी बोली "मगर तुम्हारी बहन विधवा हो जायगी, गोपाल ठाकुर !...."

"मुझे इसकी चिन्ता नहीं —"गोपाल बोला—"जो बहन भाई के मान पर लात मार सकती है, उसके मुख पर कालिख पोत सकती है---वह विधवा हो जाय, चाहे मर जाय, मुझे परवाह नहीं...."

"मुझे आज रात भर का समय दो, ठाकुर ! सुबह बहुत तड़के मेरे पास आना तुम—मैं जबाब दूंगी ।"

"उस समय तुम्हारे पिता यहाँ रहेंगे, मेंहदी !...."

"नहीं ! वे अभी दो दिन तक हवेली में ही रहेंगे....तुम बेखटके आ सकते हो...."

"बहुत अच्छा...."

कहकर गोपाल छिपता-लुकता चला गया ।

मेंहदी चुपचाप बैठी रही ।

उसके हृदय में इस समय भीषण संघर्ष हो रहा था ।

आधी रात होने को आई ! चारों ओर शान्ति छा गई ।

और वह शान्ति मेंहदी के लिए क्रान्ति का सन्देश लेकर आई ।

वह उठी । दरवाजे में छोटा-सा ताला बन्द किया और हवेली की ओर बढ़ चली ।

कमल अपने कमरे में अकेले सोया था । दरवाजा भिड़काया था । बन्द नहीं था ।

मेंहदी धीरे-धीरे कमरे के अन्दर चली गई ।

कमल सोया नहीं था, जाग रहा था । मेंहदी को देखकर वह आश्चर्य से उठ बैठा । उसने देखा—मेंहदी की आँखों में करुणा है, मगर मुखाकृति उत्तेजित है ।

"मेंहदी....आओ मेंहदी !" बोला कमल ।

"अब तो तुम दूसरे के हो चुके हो, छोटे राजा !" मेंहदी ने कहा ।

कमल चौंक पड़ा—मेंहदी का रूखा स्वर सुनकर ।

"तब क्यों आई हो यहाँ ?"—शिथिल स्वर में पूछा उसने !

"तुम्हें जलाने आई हूँ, कमल राजा !"

"अब मत जलाओ, मेंहदी ? बहुत जल चुका हूँ— अब विषाक्त व्यंगोक्तियों से जान न लो...."

'छोटे ठाकुर ?" मेंहदी बोली—"अब मैं तुम्हारी मेंहदी नहीं, एक निराश प्रेमिका हूँ जो ईर्ष्या के वशीभूत होकर अपने प्रेमी की जान लेने आई हूँ...."

"जान !....तुम मेरी जान लेने आई हो, मेंहदी ?....तो ले लो। मुझे अपने प्राणों का मोह नहीं।"

"निष्ठुर !..." बोली मेंहदी—"क्या तुम राजमणि के लिए भी अपने को सुरक्षित रखना नहीं चाहते ? क्या तुम्हारा प्रेम उस ज्वाला की तरह है, जो अग्नि का सहारा पाकर भभक उठती हैं और उसका साथ छूटते ही शान्त हो जाती है..."

"व्यंग न कसो मेंहदी, मैं तो स्वयं अन्तर की अग्नि से जला जा रहा हूँ।"

"भँवरे की यही गति होती है, छोटे राजा !...."

"मेंहदी ! तुम दिन-पर-दिन मेरे सामने दुर्गम पहेली बनती जा रही हो....क्यों आई हो तुम यहाँ ?"

"अन्तिम बार तुम्हें देखने आई हूँ, छोटे ठाकुर !....जब मेरा शरीर निर्जीव हो जायगा तब तुम्हारे देखने योग्य कोई भी वस्तु नहीं रह जायगी....इस शरीर की शोभा, बोलती हुई पंछी से है। प्राणरहित शरीर तो मिट्टी का ढेर है कमल ठाकुर !"

"तुम जाने कैसी निर्गुण बातें कर रही हो मेंहदी ?"

"नहीं समझ सकोगे तुम मेरी अन्तर्ज्वाला। अच्छा अब जा रही हूँ...." मेंहदी बोली –"शायद जल्द ही तुम्हारे पास जहर लेकर आऊँ....तैयार रहना तुम ?"

चली गई मेंहदी। कमल आश्चर्यचकित मुद्रा में बैठा रहा।

मेंहदी घर आकर चारपाई पर पड़ गई।

सारी रात सो नहीं सकी वह।

तड़पती रही—करवटें बदलती रही।

प्रातःकाल होने को आया—प्रगाढ़ अन्धकार कुछ फीका-सा हो चला। अबतक जाग रही थी, मेंहदी। उठकर दरवाजा खोला उसने और बाहर बैठकर आकाश के तारों से उलझ गई।

उसी समय आ गया गोपाल।

"क्या सोंचा तुमने मेंहदी?"—गोपाल ने पूछा।

"वह जहर मुझे दे दो, गोपाल ठाकुर!...." मेंहदी ने कहा।

"मेंहदी!...." हर्षोत्फुल्ल हो बोला गोपाल—"तुम कितनी अच्छी हो मेंहदी!" उसने पुड़िया निकाली।

उसे लेते समय मेंहदी का हाथ काँप उठा। उसने कस कर वह पुड़िया हथेली में बन्द कर ली। उसका हृदय धड़कने लगा।

गोपाल भी कुछ सोंच रहा था।

कई क्षण तक निस्तब्धता रही।

"गोपाल ठाकुर!...." धीरे से कहा मेंहदी ने।

"कहो, कहो—क्या कहना चाहती हो?...." गोपाल ने उत्सुकता से पूछा। "मैं तुम्हारा काम कर दूँगी तो क्या इनाम दोगे मुझे?"—मेंहदी ने पूछा। "जो माँगोगी, वह दूँगा मेंहदी?...कहो, क्या चाहती हो तुम?"

"वचन देते हो, गोपाल ठाकुर!"

"हाँ देता हूँ...कहो तो कसम उठा लूँ!"

'जरूरत नहीं...मैं इनाम में तुम्हें चाहती हूँ...." मेंहदी बोली—"चाहती हूँ कि मृत्तु पर्यन्त हमारा तुम्हारा साथ न छूटे....स्वीकार है तुम्हें?"

"मेंहदी!...." उसका हाथ पकड़कर बोला गोपाल—"ईश्वर जानता है कि तुमने मेरे मन की बात कह दी। मैं तुम्हें पाकर अपना सारा दुःख भूल जाऊँगा..."

"क्या तुम मुझे चाहते हो, गोपाल ठाकुर?"

"बहुत दिनों से तुम्हारी पूजा कर रहा हूँ, मेंहदी!" गीपाल बोला।

"मैं बहुत प्रसन्न हूँ...." मेंहदी ने कहा—"तुमने कुछ नाश्ता-

पानी पिया है या नहीं ?"

"नहीं ! मुझे जरूरत भी नहीं है...."

"जरूरत क्यों नहीं है ?....तुम मेरे दरवाजे पर आये हो, मेरा कर्तव्य है कि मैं तुम्हारी सेवा करूँ....कल रात का थोड़ा-सा दूध है, मैं अभी लेकर आती हूँ....!'

गोपाल रोकता ही रहा, परन्तु मेंहदी उठकर घर के भीतर चली गई। एक कटोरे में दूध भरा उसने, फिर कुछ सोंचने लगी। वह जहर की पुड़िया अब भी उसके हाथ में थी।

सोंच रही थी मेंहदी—

जिस कमल के लिए उसने इतना त्याग किया है, उसी को जहर देने के लिये उसका रहा है यह गोपाल !

जिसके संसार को उसने अपने आँसुओं से सजाया है, उसी का जीवन मेरे माध्यम से नष्ट करवाने आया है !

नहीं ! वह कदापि ऐसा नहीं कर सकेगी।

यह घृणित कार्य एक सच्ची प्रेमिका कभी नहीं कर सकेगी।

वह गोपाल के बहकावे में आकर अपनी आत्मा का हनन नहीं कर सकेगी।

यह गोपाल, जो अपने साथ कमल की जान लेने के लिये जहर लेकर घूमता है, जिसने अपनी बातों से उसके हृदय में प्रतिशोध की भावना उत्पन्न करने की चेष्टा की है—वह स्वयं घृणित है, पापिष्ट है।

यह जहर उसी का विनाश करे तो उत्तम है।

एक क्षण के लिए मेंहदी की आँखों में अभूतपूर्व प्रकाश चमक उठा।

उसने काँपते हाथों से पुड़िया खोली और उसमें का सारा जहर दूधभरे कटोरे में उलट दिया।

हाथ में कटोरा लेकर बाहर आई वह।

"तुमने व्यर्थ ही इतना कष्ट किया, मेंहदी !...." गोपाल बोला—"मगर जब तुम लाई हो तो मैं पी लेता हूँ...."

हाथ बढ़ाकर गोपाल ने कटोरा ले लिया।

मेंहदी का हृदय धड़क उठा। श्वांसोश्वांस में तीव्रता आ गई। उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

क्या हो रहा है?

वह क्या करने जा रही है?

एक जीवित मनुष्य की हत्या!

इन्सान का इन्सान के साथ विश्वासघात!

हत्या!

विश्वासघात!

दारुण कोलाहल से भर उठा मेंहदी का हृदय। चारो ओर की दिशायें उसके कानों में करुण चीत्कार कर उठीं! शरीर को कम्पायमान कर देने वाला हवा का एक तीव्र झोंका आया।

और उसका रोम-रोम प्रकम्पित हो उठा।

वह दूधभरा कटोरा गोपाल के होठों तक पहुँच चुका था।

"गोपाल ठाकुर?...." भयभीत स्वर में बोली मेंहदी। उसने गोपाल का हाथ पकड़ लिया।

"क्या है मेंहदी?...." गोपाल को आश्चर्य हुआ।

"इस दूध को न पियो, ठाकुर!"

"क्या?..."

"इसमें तुम्हारा दिया जहर मिला हुआ है...." मेंहदी बोली।

"जहर?...." चौंक कर बोला गोपाल...."मेंहदी! क्या तुम मेरी जान लेना चाहती थी?"

गोपाल के स्वर में उत्तेजना न थी। हताश भाव था। कदाचित मेंहदी की विवशता वह समझ रहा था। शायद उसके घृणित हृदय में मेंहदी के प्रति सहानुभूति भर उठी थी।

"हाँ गोपाल ठाकुर!...." मेंहदी बोली—"मैं तुम्हारा जहर तुम्हारे ही गले में उतरता देखना चाहती थी...."

"क्यों मेंहदी? इसका कारण?"

"कमल के लिए मेरे हृदय में प्रगाढ़ प्रेम है...." मेंहदी ने कहा—

"मैं उसके लिए बड़े-से-बड़ा त्याग कर सकती हूँ, उसके प्रतिद्वन्दी की जान भी ले सकती हूँ...."

"तो तुमने मुझे दूध पीने से रोका क्यों, मेंहदी ?..." नम्र स्वर में बोला गोपाल—"मैं यह जहर पीकर अपने पापों से मुक्त हो जाता। क्यों रोका तुमने ?"

"स्त्री के हृदय की ममता पुरुष नहीं समझ सकता, गोपाल !...."

"तुम मुझे समझाओ, मेंहदी !....मैं तुम्हारी ममता का आदर करूँगा।"

उसके हृदय में पश्चात्ताप का उदय हो रहा था। वातावरण ने जन्मजात संस्कारों की जड़ काट दी थी !

"तुम समझना चाहते हो, गोपाल ठाकुर। क्या तुम समझ सकोगे ? ..."

"मैं कोशिश करूँगा..." गोपाल ने कहा—"मैं चाहता हूँ मेंहदी कि तुम मेरे जीवन की कलुषता पर अपनी ममता की वर्षा कर, मेरा हृदय साफ कर दो...."

"तुम्हारे स्वर में पश्चात्ताप की झलक है, गोपाल ठाकुर !...."

"ठीक कहती हो मेंहदी तुम...." गोपाल बोला—"तुम मुझे सहारा दो तो मैं चैन से अपनी जिन्दगी गुजार दूँ..."

"मैं सहारा दूँगी ...मनुष्य के लिए स्त्री का सहारा आवश्यक है, गोपाल ठाकुर !...मगर मैं तुमसे एक भिक्षा चाहती हूँ ?"

"भिक्षा !....ऐसा न कहो मेंहदी !...मुझे आज्ञा दो।"

"मैं चाहती हूँ कि तुम कमल की जान लेने का इरादा छोड़ दो...."

"तुमने मेरी मानवता को जगाया है, मेंहदी !...." गोपाल बोला—"अगर तुम चाहती तो चुपके से मेरी जान ले सकती थी—मगर तुम्हारी महत्ता ने तुम्हें ऐसा करने से रोक दिया मैं तुम्हारी महत्ता के आगे सिर झुकाता हूँ। आज से कमल मेरा भाई हुआ ..."

"गोपाल ठाकुर ! तुम तो एकदम बदल गये क्षण मात्र में।"

"अब यह जीवन तुम्हारा है, मेंहदी ? मेरे पापमय जीवन में

तुमने प्रेम की धारा बहा दी है..."

"भूलते हो गोपाल ठाकुर, यह सब-कुछ उस भगवान की महिमा है..."

"तुम देवी हो, मेंहदी ! आज मैं देवी से एक भीख मांगना चाहता हूँ, क्या मिल सकेगी ?"

"क्या भिक्षा मांगना चाहते हो ठाकुर ?"

"बस यही कि तुम मेरी बन जाओ और अपने अमृतरूपी प्यार से मेरे सन्तप्त हृदय में शान्ति की धारा प्रवाहित करती रहो..." गोपाल ने कहा।

"गोपाल ठाकुर !...." बोली मेंहदी—"मुझे पाने की लालसा छोड़ दो। मैं जानती हूँ, इस संसार में मिलन दुखदाई होता है। आनन्द विछोह में है। तुम मुझे दूर से पाने का प्रयत्न करो, निकट से पाने पर तुम्हें शान्ति न मिल सकेगी।"

"मुझे बहुत शान्ति मिलेगी मेंहदी !

"तुम ठाकुर हो गोपाल और मैं ग्वालन...." मेंहदी ने कहा—"सामाजिक व्यवस्था का अतिक्रमण हमारे लिए ठीक न होगा। अपने को सम्भालो। मैं अब भी कमल की हूँ और आजीवन उन्हीं की रहूँगी। मेरे हृदय में तुम्हारे लिए भाई का स्थान रिक्त है....चाहो तो उसपर अधिकार कर सकते हो।"

"मेंहदी !"

"गोपाल ठाकुर ! एक पुरुष के लिए बहन का स्नेह अमृत-तुल्य और आनन्ददायक होता है।"

"तुम धन्य हो, मेंहदी ! " गोपाल बोला—"तुमने छोटी जाति में जन्म लेकर बड़ा ही उच्च हृदय पाया हैं। तुम्हारे त्याग की भावना पूजनीय है, मेंहदी !"

"चलो !...." मेंहदी ने कहा—"आज छोटे राजा अपनी दुलहिन और माता के साथ अमिलहा जाने वाले हैं। चलकर उनका दर्शन कर लें हम लोग।"

"चलो ..."

दोनों उठ खड़े हुए और हवेली की ओर बढ़े।

उस समय कमल के जाने की सारी तैयारी हो चुकी थी।

बड़े राजा ठकुराइन के सामने खड़े थे।

कह रहे थे—'नीलमुखी! अब तुम बेटे के साथ यहाँ से जा रही हो। यहाँ रहती थी तो नित्य दर्शन होता था तुम्हारा, अब वहाँ रहने पर कभी-कभी ही भेंट हो सकेगी...."

"बड़े राजा!..." ठकुराइन ने कहा—"तुमने मेरे लिये जो कुछ किया, वह कोई क्या कर सकता है। इतने उपकारों के बाद यदि मैं तुम्हें भूल जाऊँ तो क्या मैं स्त्री रह सकती हूँ? ...इतनी कृतघ्न समझते हो तुम मुझे?"

विछोह का ध्यान आते ही दोनों की आँखें भर आईं।

"मैं अब बूढ़ा हो चला हूँ ठकुराइन!..." ठाकुर बोले—"पका फल जाने कब डाल से टूट जाय। मेरी यही एक प्रार्थना है कि मेरी मृत्यु के दिन तुम अवश्य यहाँ आ जाना। मैं चाहता हूँ कि मरते समय भी मेरी आँखों के सामने तुम्हारी सूरत हो, हृदय में तुम्हारा प्रेम और पुनर्मिलन की आशा लेकर मैं यहाँ से प्रस्थान करूँ...."

"ऐसा न कहो, ठाकुर!....ऐसा न कहो।"

ठकुराइन आगे कुछ न कह सकीं! कमल और राजमणि आ गये थे, चलने के लिए तैयार होकर।

"कमल बेटा!...." भरे हुए हृदय से बोले ठाकुर—"आज विवश होकर तुम्हें अपने से अलग कर रहा हूँ, क्योंकि अमिलहा में तुम्हारा रहना अत्यन्त आवश्यक है। हृदय रो रहा है, परन्तु विवशता के आगे हृदय को पत्थर बना लिया है मैंने। जिस बुलबुल को चारा खिला-खिलाकर पाला, शायद मरते समय उसका चहकना सुन न सकूँगा...."

"पिताजी!...."

दौड़ कर ठाकुर के पैरों से कमल लिपट गया।

ठाकुर ने उसे उठाकर कलेजे से लगा लिया।

रोने लगे दोनों।

"कमल भाई !...." दरवाजे से आवाज आई—"मुझे क्षमा कर दो, कमल भाई !...." गोपाल रुद्ध कंठ से बोला।

"गोपाल ठाकुर !..."

कमल आगे बढ़ा। दूसरे ही क्षण वे दोनों एक दूसरे के गले से जा लगे।

जैसे युगों का वैमनस्य जमीन पर पछाड़ खाकर अन्तिम साँस लेने लगा हो।

गोपाल ने बड़े ठाकुर और ठकुराइन के पैर छुए।

दोनों ने उसे आशीर्वाद दिया।

"तुम कहाँ थे गोपाल अब तक?...." ठाकुर बोले—"क्या तुमने भी मुझे अपना दुश्मन समझ लिया था, बेटे ! मेरी शत्रुता तो केवल जगदीश से थी, तुमसे नहीं....यह देखो आज कमल भी मुझे रुलाकर चला जा रहा है। अब तुम मेरे बेटे बनकर मुझे सहारा दो...."

"अब आज्ञा दो, ठाकुर...." ठकुराइन ने कहा।

बूढ़े ठाकुर फफक-फफक कर रो पड़े।

सब के नेत्र सजल हो गये !

कमल, राजमणि और ठकुराइन आकर पालकियों पर बैठ गये ! बहुत से लठैत भी साथ जाने को आ पहुँचे।

कहारों ने पालकियाँ उठाईं।

बड़े राजा का अन्तराल अगम पीड़ा से भर उठा। उनका वृद्ध शरीर शिथिल हो चला। आगे बढ़कर गोपाल ने उनके शरीर को अपने कन्धों का सहारा दिया।

पालकियां चली जा रही थीं।

आँखों में आँसू और हृदय में असहनीय पीड़ा लिये बड़े राजा, मेंहदी और गोपाल, उनको जाते देख रहे थे।

जब उनकी छाया गाँव के छोर पर जाकर विलिन हो गई, तो बड़े राजा लौट पड़े।

तभी मेंहदी कटे वृक्ष की तरह धड़ाम से वहीं गिर पड़ी।

उसने गोपाल की आँखों को धोखा देकर, वह जहरीला दूध स्वयं

पी लिया था। उस विष का असर अब प्रारम्भ हुआ।

उसके गिरने की आवाज सुनकर बड़े राजा और गोपाल दौड़ पड़े।

मेंहदी को उठाता हुआ गोपाल बोला—"क्या हुआ मेंहदी ?"

"गोपाल भैया !....मैंने...मैंने वह जहरीला दूध....पी....लिया....था...."

"यह तुमने क्या किया, मेंहदी ?"

"अब...चल रही हूँ....चल रही हूँ मैं...कमल....कमल....कमल...."

अपने प्रियतम का तीन बार नाम लेकर, उस त्यागमयी ने अपना प्राण त्याग दिया।

वरे के पीछे पागल कालिका ने, अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया।

॥ बस ॥